माया सीरीज़ नं० १४

# संसार की श्रेष्ठ कहानियाँ

## ( चौथा भाग )

सम्पादक
जगदीशप्रसाद चतुर्वेदी,
बी० ए०, एल-एल० बी०

मूल्य—आठ आना

पोलेण्ड

# रात को दुर्घटना

**लेखिका—मेरिया रोडजिविक**

सर्वत्र शान्ति का साम्राज्य था, सूर्यास्त हो चुका था। तारे एक के बाद एक उदय हो रहे थे। खेतों पर सब काम बन्द हो चुके थे। झोपड़ियों में धीमी-धीमी आग जल रही थी। मई महीने का बड़ा दिन था। इस समय पृथ्वी द्वारा दिन भर किये गये परिश्रम के फल-स्वरूप ओस छाई हुई थी। थका हुआ मानव समाज गा कर विश्राम कर रहा था। केवल गाँव के बीच में बहती हुई नदी कलकल निनाद करती आगे बढ़ी चली जा रही थी। आखिरी झोपड़ी में सुलगती हुई आग नदी के पानी में गहरे लाल धब्बे के समान दिखलाई पड़ती थी। रात की निस्तब्धता को गाने की मधुर ध्वनि भंग कर रही थी।

झोपड़ी के अन्दर चार मनुष्य विश्राम कर रहे थे। एक वृद्ध किसान आधा-झुका, लेटा हुआ हुक्का पी रहा था। उसकी स्त्री आलू छील रही थी। खिड़की के पास एक नवयुवक किसान सितार बजा रहा था। उसके निकट आग तापती हुई एक नवयुवती पीछे से दोनों हाथों से सिर को सम्हाले हुये सितार की लय से निकली हुई मधुर तान में गाना गा रही थी। वह कुछ-कुछ आगे झुकी हुई थी। वह बड़ी उत्सुकता के साथ टकटकी लगाये नवयुवक की ओर देख रही थी। वह नवयुवती कुमारी नहीं थी। उसके बाल चमकदार रंगीन रूमाल

से बँधे हुये थे।देहाती फैशन था। कान खुले हुये थे। वह विवाहिता स्त्री के वस्त्र पहिने हुये थी। कोई सजधज न थी। वह जवान और बहुत खूबसूरत थी। आँखें बड़ी, काली और चित्ताकर्षक थीं। रंग चित्ताकर्षक और भूरा था। लम्बा क़द, सुन्दर स्वरूप, विनम्र स्वभाव और मन्द-मन्द गति बड़ी मनोमोहक प्रतीत होती थी।

एक ही स्थान पर बैठी हुई वह बड़ी देर तक गाती रही। उसकी मधुर मुस्कान पर नवयुवक मुग्ध हो रहा था। उसके कटाक्षपूर्ण नेत्र और लाल-लाल ओठ देख कर नवयुवक मन ही मन प्रसन्न हो रहा था। जब आग कम हुई तब वृद्धा स्त्री ने उसमें सूखी लकड़ियाँ लगा दीं। जाते-जाते युवती के हाथ को उसने प्रेमपूर्वक दबाया। कुछ समम के पश्चात् नवयुवक का सितार बन्द हुआ। गाने की समाप्ति हुई। वहाँ शान्ति ने अपना एकाधिपत्य साम्राज्य स्थापित कर लिया।

वृद्धा स्त्री ने आग्रह करते हुये कहा, "थोड़ा आगे और गाओ।"

"बस अब बहुत हुआ।" युवती ने आलस्य से अँगड़ाई लेते हुये कहा।

नवयुवक ने हँसते हुये कहा—"क्या इसके आगे न गाओगी? तुमने अभी गाने का विवाह के समय का भाग तो गाया ही नहीं।"

"विवाह का गाना?" घृणित भाव से कंधा हिलाते हुये उसने उत्तर दिया—"उसे तो हम और तुम सुन ही चुके हैं।" उसकी भौहों में बल पड़ आये। उसने सिर झुका लिया। अचानक वह वृद्धा-सी प्रतीत होने लगी।

"क्यों रे बदमाश!" वृद्धा स्त्री ने सूखी हँसी हँसते हुये नवयुवक को डाँटकर कहा—"क्या तुझे अपनी स्त्री के पास जल्द नहीं जाना है?"

"उसके भाग जाने का कोई खतरा नहीं है।" नवयुवक ने उद्विग्न भाव से उत्तर दिया—"गाओ मरयूका, गाओ।"

वह कहकहा मार कर हँसी। उसने अपना सिर पीछे घुमाया। उसका चमकीला रूमाल कंधों पर गिर पड़ा। उसने विवाह का गाना शुरू कर दिया। कहने के लिये तो वह विवाह का गाना था; परन्तु वास्तव में वह करुण रस से ओत-प्रोत था। नवयुवक सहानुभूति प्रकट करने लगा।

इसी समय झोपड़ी के दरवाज़े को बाहर से किसी ने खोला। "ईश्वर भला करे", इस प्रकार अभिवादन करता हुआ एक मनुष्य अन्दर आया। गाना भी एकाएक बन्द हो गया। युवती आने वाले पुरुष की ओर टकटकी लगा कर देखने लगी। उसे देख कर वह भयभीत-सी हो गई। उसके मुँह पर घबराहट साफ़-साफ़ झलकने लगी। देहाती नवयुवक तेज़ी के साथ झपटा और कोने में रखी हुई पतवार को बड़े ग़ौर के साथ देखने लगा। देख कर उसे उठा लिया। वृद्धा स्त्री बहुत भयभीत हो गई। घर में केवल वृद्ध पुरुष ही शान्त बैठा रहा। उसने सिर हिलाते हुए अभिवादन का उत्तर इस प्रकार दिया—"सदैव कुशल मंगल रहे।"

नवागन्तुक दरवाज़ा बन्द करते हुए अन्दर आया। वह जवान और बलवान था। उसका चेहरा शान्त और उदास था। वह सफ़ेद कोट और पतलून पहिने हुए था। वस्त्रों के किनारे हरे रंग के थे। उसके टोप पर फारेस्टर का बिल्ला लगा हुआ था। उसके जूते ऊँचे थे। यही उसकी पूरी पोशाक थी। उसके कन्धे पर शिकारी वस्त्र और बन्दूक थी। घर में प्रवेश करते ही उसने इन्हें उतार कर एक कोने में रख दिया। तब वह युवती की तरफ़ मुड़ा।

मन्द मुस्कान से उसने कहा—"मरयूका, नमस्ते।"

"नमस्ते जैकब," लापरवाही से युवती ने अभिवादन का उत्तर देते हुये कहा।

"वृद्ध पिता जी और [illegible] नमस्ते। सब कुशल-मंगल तो है?"

"सब कुशल है।"—वृद्ध पुरुष ने जवाब दिया—"तुम तो कुशल पूर्वक हो बेटा ?"

"आपकी दया है !" वह अपना सिर हिलाते हुये बोला।

"जान पड़ता है, तुम भूखे हो ?"वृद्धा ने प्रश्न किया।

"नहीं भूखा तो नहीं, थका ज़रूर हूँ। मैं बहुत लम्बा रास्ता तय करता हुआ आया हूँ। थोड़ी देर आराम करूँगा।" इस प्रकार कहते हुये उसने अपने मस्तक का पसीना पोंछा। उसकी थकावट का कोई अनोखा कारण था। वह घबड़ाया हुआ और चिन्तित-सा प्रतीत होता था। वह उदासी के साथ एक बेंच पर बैठ गया और लम्बी साँस लेने लगा।

मसीज ने हँसते हुये कहा—"क्या ज़रा-सी ह्विस्की लोगे ? तुम घबड़ाये से जान पड़ते हो। क्या रास्ते में कोई भूत देखा है ?"

"भूत से भी अधिक मैं चिन्ता की चिता में जल रहा हूँ। मैं ह्विस्की नहीं पीता। मैंने शादी के बाद ही उसे छोड़ दिया है।"

इसके बाद कोई कुछ नहीं बोला। कुछ देर तक शान्ति रही। अतिथि शान्ति भंग करता हुआ बोला—

"रास्ते में न तो कोई चहल-पहल है, न कहीं कोई शब्द ही सुनने को मिलेगा। हृदय में स्फूर्ति आ जायगी। हमारी घर की यात्रा बड़ी आनन्ददायक होगी।"

"क्या तुम रात को नहीं रहोगे ?" वृद्ध ने पूछा।

"मुझे घर जल्द लौटना है। वहाँ ज़रूरी काम है। मैं केवल एक घंटा यहाँ रहूँगा। चन्द्रोदय होते ही यहाँ से रवाना हो जाऊँगा।"

वह उठा। युवती के पास जाकर और उसका हाथ प्रेम के साथ पकड़ते हुये वह उसके पास बैठ गया। उसने बड़े कोमल स्वर में कहा—"जिस समय मैं घर के अन्दर आया, उस समय तुम गा रही थीं। मुझे भी गाना सुनाओ।"

बाहर रात्रि के अन्धकार की ओर दृष्टि-पात करते हुये मरयूका ने विरक्त भाव से उसको थपकने दिया। वह कातर दृष्टि से उसकी ओर निहारने लगा। मसीज जो उसके सामने बैठा था, उसकी इस भाव-भंगी से दुखित हुआ। उसे डाह-सी होने लगी। क्षण भर के बाद ही उसके मुख पर घमंड की रेखा झलकने लगी। उसने हुक्का जलाया। द्वेष-पूर्ण भाव से हँसता हुआ वह गाने लगा।

अचानक जैकब खड़ा हो गया। वह कहने लगा—

"तुम्हारे गाने के लिये धन्यवाद! मरयूका मेरे कहने पर न गायेगी। मेरे घर में कभी भी गाना नहीं होता। इसीलिये उसमें मुझे विशेष आनन्द आता है। मुझे आनन्दरहित सन्ध्या व्यतीत करनी पड़ती है। वृद्ध माता इस निरानन्द जीवन पर कुढ़ा करती हैं। झींगुर और कीड़ों की दीवाल के कोने पर गुनगुनाहट सुनाई पड़ती है। बाहर वृक्षों के पत्तों की खड़खड़ाहट के सिवाय कुछ भी नहीं सुनाई पड़ता।"

वह विषादपूर्ण हँसी हँसने लगा। कमरबन्द को कस कर और मस्तक पर से बालों को हटाते हुये उसने बन्दूक हाथ में ले ली। हुक्का भरता हुआ वह कहने लगा—

"अब चलने का समय हो गया। मरयूका, तैयार हो जाओ।"

वृद्धा स्त्री ने आग्रह के साथ कहा—

"रात भर क्यों नहीं ठहर जाते? कल सुबह चले जाना।"

"नहीं, आजकल रात में नाव चलाने में बड़ी सुविधा होती है। यात्रा लम्बी है। रात छोटी है। हम को शीघ्र ही रवाना हो जाना चाहिये।"

मरयूका बेमन से उठी। उसने किसी भी प्रकार का बाहरी विरोध नहीं किया। परन्तु उसकी दृष्टि में हठीलापन प्रत्यक्ष दिखलाई पड़ रहा था। उसने चुपचाप अपना सब सामान इकट्ठा किया। उसकी माँ काँपते हुये हाथों से सहायता करने लगी। मसीज "नमस्ते"

कहता हुआ अचानक उठ खड़ा हुआ और चला गया। जैकब आग की ओर देखता हुआ शान्ति के साथ सब देखता रहा।

वृद्ध ने कहा—"बेटा, मेरी एक बात सुनो। तुम समझदार आदमी हो। उसे कड़ी सज़ा न दिया करो।"

वृद्धा स्त्री ने उसका हाथ पकड़ कर कहा—

"जैकब, उस पर तरस खाया करो। उसे मारा न करो।" अपनी पीली आँखों से देखते हुये उसने इस प्रकार बार-बार अनुरोध किया।

उसने झोपड़ी के आसपास देखा। युवती तैयार होकर खड़ी हो गई। उसके हाथ में एक गठरी थी। वह तनिक भी भयभीत न थी। उसे कुछ आश्चर्य अवश्य हो रहा था।

उसने कहा—"अपनी गठरी मुझे दे दो। मैं उसे ले चलूँगा।" इसके पश्चात् सिर से टोप उतारता हुआ वह वृद्धा पति-पत्नी को अभिवादन करने लगा।

"ईश्वर कुशल करे।"

उन्होंने अभिवादन का उत्तर दिया—"सदैव कुशल-मंगल रहे। यात्रा कुशलपूर्वक समाप्त हो।"

जैकब ने उत्तर दिया—

"आप लोगों का स्वास्थ्य सदा अच्छा रहे।"

दरवाज़ा खुला। कुछ आवाज़ हुई। इसके बाद फिर शान्ति हो गई। आपस में बिना एक भी शब्द बोले पति पत्नी एक पगडंडी द्वारा नदी की ओर बढ़े। स्त्री आगे-आगे जा रही थी। पुरुष पीछे चल रहा था। चन्द्रमा का निर्मल उज्ज्वल प्रकाश इन पर पड़ रहा था। इनकी परछाईं भूतों के समान उनके पीछे-पीछे दौड़ रही थी। उनका सब अभिवादन कर रहे थे। परन्तु कुछ दूर जाने पर लोग उनकी हँसी उड़ाने लगे। धीरे-धीरे आपस में वे उन पर ताने भी छोड़ने लगे:—

"देखा तुमने, नालायक़ जैकब अपनी औरत को फिर लेने आया है। उस पर काबू रखना ता जैसे शेर पालना है।"

नवयुवक ने सारे ताने सुने। उसने अपना सिर झुका लिया। वह शर्म में गड़ गया। वह दूसरों का हास्यास्पद बन रहा था। परन्तु इतने पर भी वह एक शब्द तक न बोला।

वे घाटी को लाँघ कर, जो नदी के तट पर खड़ी हुई नाव तक फैली हुई थी, नदी के किनारे पहुँच गये। दोनों नाव पर बैठ गये। नाव सूखी थी। मरयूका उस पर लेट गई। ऐसा जान पड़ने लगा मानो वह सोना चाहती है। जैकब ने नाव को चलाया। पतवार के सहारे नाव तेज़ी से चलने लगी। वह शीघ्र ही नदी के दूसरी ओर पहुँच गया। छोटी-छोटी झाड़ियों को लाँघता हुआ वह द्रुतवेग से आगे बढ़ा। गाँव दृष्टि से ओझल हो गया। वे दोनों स्त्री-पुरुष मई की निस्तब्ध रात्रि म अकेले चले जा रहे थे। फारेस्टर ने अपना कोट और बन्दूक उतार कर नाव पर रख दी। चन्द्रमा का पूर्ण प्रकाश उन पर पड़ने लगा। चंद्रिका नदी पर चाँदी के समान श्वेत-मार्ग प्रदर्शित करने लगी। इस जाज्वल्यमान मार्ग पर वह नौका चलाने लगा। लम्बी यात्रा का विचार करते हुये वह कुछ उदास हुआ। जल के भीतर से एका-एक बड़ी दुर्गन्ध आई। घनी बेलें नदी के चाँदी के समान नीले जल में धुँधले तारागण के समान प्रतीत होने लगी। जल की चमकीली सतह पर छोटे-छोटे पौधों के पुँज छोटे-छोटे मेघों के समान जान पड़ने लगे। तटवर्ती झाड़ियों में कोयल आनन्द से कुहू कुहू करने लगी। जुगनू इधर उधर प्रकाश करते हुये विहार करने तगे। चारों ओर सफ़ेद कोहरा छा गया। परन्तु कहीं भी कोई जीवधारी दृष्टि-गोचर न होता था।

जैकब शान्ति-पूर्वक नाव चला रहा था। ऐसा जान पड़ता था कि वह इस पूर्ण निस्तब्धता को भंग नहीं करना चाहता था। विचार तरंग के समान नाव के पीछे क्षणिक चिन्ह बनाती हुई आगे बढ़ी चली जा रही

थी। युवती नाव पर पड़ी हुई सोने की मुद्रा धारण किये हुये थी। अचानक जैकब प्रेमपूर्वक मधुर शब्द बोलने लगा।

उसने आग्रह-पूर्वक कहा—"मरयूका, मेरी बात सुनोगी?"

वह कन्धा हिलाते हुये रुखाई के साथ बोली—"क्या कहना है, कहो।"

"मुझे यह बतलाओ कि मेरा दोष क्या है?"

उसने तत्काल उत्तर दिया—"कुछ भी नहीं। मैं तुम से घृणा करती हूँ।"

"तब तो वृद्धा माँ यह बात ठीक ही कहती थीं। एक खराब कुत्ते को पालो—उसको प्यार करो—खिलाओ-पिलाओ—वह तुम्हें प्यार करने लगेगा। जंगली पक्षी को उसके घोंसले से निकाल लाओ। उसकी रक्षा करो। वह तुमसे हिल जावेगा। परन्तु मनुष्य का स्वभाव इसके विपरीत है। प्रेम और रक्षा दोनों के द्वारा हृदय पर विजय प्राप्त नहीं की जा सकती। वह, जिन हाथों ने उसे पाला है, उन्हीं को काटता है और उनका परित्याग कर देता है।"

युवती ने तीखे स्वर में उत्तर दिया—"वह ठीक कहती थीं। तुमको मुझे न लाना चाहिये था।"

वह उसकी ओर विस्मय-पूर्ण नेत्रों से देखने लगा—"तुम भूलती हो। मैं तुम्हें ज़बर्दस्ती नहीं लाया। दो वर्ष पूर्व हमारी तुम्हारी उस तराई में भेंट हुई थी। वहाँ लड़के आग जला रहे थे और लड़कियाँ गा रही थीं। मैं आग की सब से ऊँची ज्वाला को लाँघ गया था। तुमने सब से अच्छा गाना गया था। मरयूका, मैंने तुम्हारे साथ प्रेम करके क्या अपराध किया? मुझे क्या पता था कि तुम्हारा प्रेम मेरे प्रति केवल उसी रात्रि तक सीमित रहेगा? इसमें सन्देह नहीं कि तुम उस समय मुझसे प्रेम करती थीं। उस रात को शाल वृक्ष के नीचे एक दूसरे का हाथ पकड़े हुये हम दोनों अपने प्रेम के सामने संसार को

भी भूले हुए प्रातः काल तक बैठे रहे थे। तुमको बहुत लोगों ने प्यार किया। परन्तु मेरे सिवाय किसी दूसरे ने तुमको अपना जीवन अर्पण नहीं किया। इसके अतिरिक्त मेरा और कोई दूसरा अपराध नहीं था।"

क्षुब्ध और कुपित होने के कारण वह नाव को बड़ी तेज़ी के साथ चलाने लगा। कोयल उड़कर क्षण भर के लिये शान्त हो गई। नाव भटक कर टकरा गई।

वह धीमे स्वर में आगे कहने लगा—"मैं तुम्हें नदी के पास मिला था। उस समय मैंने तुमसे प्रेमालाप किया था—'मेरी प्यारी, मेरी दुलारी, मेरे घर चलो और वहाँ रानी के समान राज्य करो। मैं अपनी आत्मा के समान तुम्हारी रक्षा करूँगा। मैं अपना जीवन तुम्हें अर्पित करता हूँ। इसके सिवाय तुम और क्या चाहोगी? मुझे उन दुष्टों की परवाह नहीं, जो तुम्हें अच्छा-बुरा कहते हैं और तुम्हारे विरुद्ध मेरे भी कान भरते हैं। मैं तुम पर विश्वास करता हूँ।' तुम मेरे हृदय पर मस्तक रख कर मेरी सब बातें सुनती रहीं। तुम ने जी भर के मुझे चुम्बन लेने दिया। तुमने प्रेम द्वारा मुझ पर विजय प्राप्त कर ली। जब मैं तुम्हारे पिता के पास तुम्हारी याचना करने के लिये गया, तब तुमने वहाँ मेरा हृदय से स्वागत किया और आनन्द के साथ चिल्ला उठीं। हाय! वे दिन और वे रातें कहाँ गईं जब कि तुम मुझसे प्रेम करती थीं। मेरे हृदय में सुख था और मुझे अशान्ति कहीं भी दिखाई न पड़ती थी। कई रातों को मैं ऐसे समय में घर लौट आया था जब कि भूत-प्रेत मुझे छल कर पथ-भ्रष्ट करना चाहते थे और जिस समय नदियों से बहा हुआ बर्फ नाश और मृत्यु की धमकी देता था। परन्तु तुम्हारे प्रेम ने मुझे निर्भय बना दिया था। मुझे न तो भूत-प्रेत का और न मृत्यु ही का भय था। तुम मेरा जीवन थीं; मेरा बल थीं। अब मैं क्या हो गया? हमारा सुख केवल छः महीने रहा। एक दिन हमारा तुम्हारा

विवाह हुआ !-आज रात के समान एक रात को मैं तुम्हें अपने घर लाया। उस समय किस बात की कमी थी ? क्या तुम वह सब भूल गईं ? हे परमात्मा, यदि मैं किसी आदमी के प्राण ले लेता और इसके बाद उसके मासूम बच्चों को पालता, जैसे कि मैंने तुमको पाला है, तो मैं उनके पिता के खून का बदला चुका देता और ईश्वर के सामने अपनी आत्मा की मुक्ति करा सकता ! परन्तु तुमने मेरे हृदय कुसुम को बलात् तोड़ डाला और मेरी आत्मा को पददलित कर डाला। तुमने मुझ को धोखा दिया। इससे मैं धूल में धूसरित हुआ और भूमि को चाटने लगा। मेरे शरीर की समस्त हड्डियाँ और धमनियाँ दर्द के मारे चिल्ला उठीं। हे परमेश्वर ! माँ अपने एकलौते पुत्र को खोकर जितना शोक न करेगी, उतना मुझे तुम्हारे अलग हो जाने पर होता है। तुमने मुझे मर्मान्तक पीड़ा पहुँचाई। फिर भी मैं आशा लगाये बैठा रहा। 'वह पश्चाताप करेगी—वह मुझ पर दया करेगी।'—यही विचार कर, लज्जा त्याग कर मैं तुम्हारे लिये गया। मुझ को लोगों के ताने सुनने पड़े। फिर भी मैं तुमको घर लाया। मैंने रात्रि के कोमल सन्देश को सुना, जिसका आशय था—शान्ति धारण करो। दयालु बनो। उसे प्रेम द्वारा वश में करो। मैंने तुम्हें काम करने में लगाया, इस आशा से कि काम में लगी रहने से तुम्हारी बुरी भावनायें जाती रहेंगी। तुम पर अत्याचार नहीं किया। कोई काम तुम्हारी इच्छा के विरुद्ध नहीं किया। तुमको सदा यही कहता रहा—'मरयूका, मेरी प्यारी लड़की मरयूका।' परन्तु तुमने मुझको फिर दुबारा ठुकरा दिया। वृद्धा माँ ने कहा, 'उसे जाने दो।' मैं यह बरदाश्त न कर सका। लोगों ने सलाह दी, 'उसे खूब ठोको, परन्तु मैंने यह भी नहीं किया।"

स्त्री बड़ी ज़ोर से चिल्ला उठी—"तुम्हें मुझको ठोकना था। मेरे प्राण ले लेना था, जिससे सब बातों का अन्त हो जाता।"

जैकब ने एक क्षण के लिये भयभीत और खिन्न भाव से उसकी ओर देखा। इसके बाद उसने रुख़ बदल लिया। बहुत देर चुप रहने के बाद वह उदास मन से फिर कहने लगा—"यदि मेरा लालन-पालन मनुष्यों के मध्य में हुआ होता, तब तो मैं तुम्हें पहिचान सकता। परन्तु मैं जंगल में इतना बड़ा हुआ। वहाँ पशु और पक्षी मेरे मित्र थे। मैंने उनमें भी मादा को नर के द्वारा कभी पिटता हुआ नहीं पाया। परन्तु आज की रात कुछ दूसरी ही गाथा गा रही है। किसी मंत्र-मुग्ध प्राणी के समान मुझे तुम पर दया आती है। मैं जाकर तुम को दुबारा लाया। परन्तु इस समय मैं मृतक-सा प्रतीत हो रहा हूँ। आशा ने सर्वदा के लिये मेरा साथ छोड़ दिया है। मैं हृदयहीन बन गया हूँ। मैं हँसना तक भूल गया हूँ। मेरी आँखों के आगे संसार निस्सार और निरानन्द प्रतीत हो रहा है। इस समय मुझे ऐसा भान हो रहा है कि पृथ्वी और आकाश शरद ऋतु के कोहरे से आच्छादित हैं। मैंने निश्चय कर लिया है कि इस कोहरे का अन्त कर डालना चाहिये। मुझे पूर्ण विश्वास हो गया है कि मैं तुम्हें धमकी अथवा आग्रह किसी भी प्रकार से मसीज से अलग नहीं कर सकता। मैंने भाग्य के विरुद्ध विद्रोह करना त्याग दिया है। मैंने सोचा, मुझे यही बदा था। तुम उसे मुझसे अधिक प्यार करती हो। वह भी तुम्हारे साथ आनन्द उठा कर अपनी स्त्री के पास चला जाता है। उसने तुमको अपना खिलौना बना लिया है। उसके पास तुम्हारे सदृश कई खिलौने हैं। वह नित्य प्रति नये-नये खिलौनों के साथ खेलता और अपना मनोरंजन किया करता है। तुम इस बात को नहीं समझतीं। तुम उसे उतना ही प्यार करती हो जितना कि मैं तुम्हें प्यार करता हूँ। मैं यही बात दिन-रात सोचा करता हूँ। फलस्वरूप मेरी आत्मा का सर्वनाश हो गया। लज्जा और घृणा ने मुझ पर विजय प्राप्त कर ली और मैं हृदयहीन बन कर मृतक-सा बन रहा हूँ। अब समय आ

गया है, इस कांड का अन्त होना चाहिये। हम दोनों में से एक को इस पृथ्वी से उठ जाना होगा। पहले मैंने आत्म-हत्या करने का विचार किया था। इतना करने पर भी तुम्हारा विवाह मसीज़ के साथ नहीं हो सकता। इसके बाद मैंने उसे मार डालने का विचार किया। परन्तु इस मूर्खतापूर्ण विचार को शीघ्र ही मैंने हृदय से निकाल दिया। तुम्हारे मरने के सम्बन्ध में मैं कभी विचार ही नहीं कर सकता था। ये सब विचार जाड़ों में मेरे मन में उत्पन्न हो रहे थे। उस समय तुम घर पर मेरे साथ थीं। मैं तुम्हारे प्रति अपने प्रेम को कभी नहीं भूल सकता। तुम्हारे अहित की बात सोच कर मुझे मर्मान्तक वेदना होती है। इसी प्रकार विचार-तरंगों में डूबता और उतराता हुआ मैं समय व्यतीत करने लगा। अन्त में बसन्त ऋतु आ गई। इसके बाद ही तुम गुप्त रूप से रोने लगीं। तुम्हारी आँखें किसी की खोज में थीं। तुम विनाश के पथ की ओर अग्रसर होने लगीं। तुम्हारी हालत देख कर मेरी चिन्ता बढ़ने लगी। प्रत्येक दिन जब मैं जंगल से लौटता तो मुझे भय लगा रहता कि न जाने तुम घर पर हो अथवा बाहर चली गई हो। अन्त में एक दिन शाम को जब कि नदी पर बर्फ़ जमी हुई थी, मैंने घर पर जाकर देखा कि तुम कहीं चली गई हो। तुमने अपने नाश का बीज अपने हाथ से बोया है।"

उसने घबड़ाकर उसकी ओर निहारते हुये पूछा—"कैसा नाश?"

वह चन्द्रमा के प्रकाश में खड़ा हो गया। उसकी आँखें बहते हुये नदी के पानी पर गड़ी हुई थीं। शीतल वायु तरंग विचार धारा के समान वेग से बह रही थी। अचानक वह सीधे हाथ की तरफ़ सकरे और अन्धकारपूर्ण मार्ग की ओर मुड़ा।

वह खड़ी होकर चिल्ला उठी—"यह मार्ग तो अपना नहीं है।"

उसने उत्तर दिया—"मार्ग हमारा तो नहीं है, परन्तु तुम्हारा अवश्य है। इस स्थान से तुम मसीज के पास जल्द पहुँच सकोगी।"

वह घबड़ा कर तट की ओर देखने लगी। आत्म-रक्षा के लिये वह तड़फड़ाने लगी।

जैकब ने सम्भवतः यह बात ताड़ ली। वह घृणित भाव से हँसा और उदास मन होकर कहने लगा—"हाँ मरयूका, तुमने एक भले आदमी की, जो तुम्हें प्यार करता है, अवहेलना की। तुम उस प्रेमी के पास उतावली बन कर दौड़ी हुई गईं जो केवल मनोरंजन के लिये तुम को अपना खिलौना समझ बैठा है। अब तुम अपने दंड से नहीं बच सकती हो, तुम को अपनी सज़ा भुगतनी होगी। डरने की ज़रूरत नहीं है।" वह धीरे-धीरे शान्त भाव से कहने लगा। ऐसा कहते हुये उसके विचार की दृढ़ता स्पष्ट झलकने लगी। दोनों तट पर गहरा पानी था। नदी काली और भयावनी प्रतीत हो रही थी।

चन्द्रमा डूब रहा था। शान्ति पूर्ण-रूप से स्थापित हो चुकी थी। इस एकान्त निर्जन स्थान में पक्षियों के गाने का भी शब्द सुनाई न पड़ता था, इधर-उधर जुगनू का प्रकाश दिखलाई पड़ता था। लम्बी साँस और भयावनी बातचीत से ही शान्ति भग होती थी। कभी-कभी नदी की गहराई से भयंकर ध्वनि सुनाई पड़ती थी। कभी-कभी दूर की झाड़ियों की खरखराहट की आवाज़ दिल में भय उत्पन्न करती थी। इस प्रकार की आवाज़ शरीर को तो नहीं वरन् आत्मा को प्रभावित करती थी। कभी-कभी कोहरों में भयंकर आकार बनते और फिर मिट जाते—ये आकार नाव से हटते हुये नज़र आते थे—कभो छिपते कभी प्रकट होते, ऐसे प्रतीत होते थे मानो भूत उनका पीछा कर रहे हों।

स्त्री बेतरह डरी हुई मालूम होती थी। उसे ऐसा प्रतीत होने लगा मानो कोई ज़बर्दस्त आपत्ति उसके सिर पर मँडरा रही है और रात्रि की निस्तब्धता में फुसफुसातो हुई वह उसके साथ मखौल कर रही है। वह काँपने लगी। उसने आँखें बन्द कर लीं। उसने नाव को पूरी ताक़त से पकड़ लिया।

जैकब यह सब देख और सुन रहा था। उसके मुख की मुद्रा गंभीर हो गई। उसके मस्तक पर ठंढा पसीना निकल आया। उसके हृदय के अन्दर इस समय उसके अटूट प्रेम के साथ तुमुल युद्ध हो रहा था। उसकी आत्मा में अभी-भी दया के भाव उद्वेलित हो रहे थे। परन्तु रात्रि की इस निस्तब्धता में दुर्भावना ने उस पर पूर्ण विजय प्राप्त कर ली। उसके संकल्प ने दृढ़तम रूप धारण कर लिया।

नाव अधिक चौड़ाई पर चल रही थी। चारों ओर अंधकार फैल गया था। पानी की गहराई के कारण झाड़ियों का पता भी नहीं था। पानी के बबूले साँप का आकार धारण करते और फेन छोड़ते जाते थे। वह फिर बोला—

"मैं तुम्हारे लिये आज फिर गया। यह अन्त समय था। अब तुम अपना मार्ग स्वयं निर्धारित कर सकती हो। नदी तुम्हारे गाँव से होकर बहती है। मैं तुम्हें उसी के पास भेजे देता हूँ।"

उसने पतवार रख दी। अपने वक्षःस्थल से उसने एक उज्ज्वल रंगीन रूमाल निकाला। नाव कुछ दूर धार में बह कर शान्त खड़ी हो गई।

वह ज़ोर से चीख पड़ी—"जैकब, मुझे जीवित रहने दो।"

उसका गला भर आया! जैकब ने उसको एक हाथ से पकड़ लिया और दूसरे हाथ से उसका सिर और मुँह रूमाल से बाँध दिया। गले के आसपास रूमाल को उसने बहुत मज़बूती से बाँधा। सुदृढ़ चंगुल में फँससे हुये भी उसने अपनी रक्षा का भगीरथ प्रयत्न किया। लड़की छड़पटाई और अन्त में वह शान्त हो गई। उसने उसे उठा लिया। एक क्षण के लिये कुछ सोचने लगा। फिर जल जन्तुओं के भोजन के समान उसने शीघ्र ही उसे जल के ऊपर फेंक दिया। जल में बबूले उठे। जल के झोंके ने उसे दूर बहा दिया। जल अपने शिकार के साथ क्रीड़ा-सी करने लगा। कभी उसे ऊपर उछालता कभी

नीचे ले जाता और उसके आत्म-रक्षा के प्रयत्नों को देख कर मन ही मन प्रसन्न होता। उसकी सफ़ेद पोशाक और हाथ कभी दिख जाते और शीघ्र ही अदृश्य हो जाते। अन्त में वह जल के अन्दर विलीन हो गई। रात और जल की तरंगों के अतिरिक्त इस दुर्घटना का साक्षी वहाँ कोई भी न था।

जैकब ने अपने माथे का ठंढा पसीना पोंछ लिया। पतवार उठाकर वह उसी सँकरे मार्ग द्वारा अपने पहले स्थान पर लौट आया। फिर शान्ति का एकाधिपत्य राज्य स्थापित हो गया। डूबते हुये चन्द्रमा की किरणों का मन्द प्रकाश उस पर पड़ने लगा। कोहरे के भयंकर रूप उसका पीछा करने लगे। उसे चारों तरफ से घेरकर वे नृत्य-सा करने लगे। विरोधी वायु हाथ फैला कर उसकी गति का विरोध करने लगी। इतने पर भी नाव अपने मार्ग पर चल पड़ी। चन्द्रमा उसका पथ-प्रदर्शक बना। आधा वज़न कम हो जाने के कारण नाव अधिक तेज़ी के साथ चलने लगी। प्रातःकाल के स्वागत के लिये कोयल अधिक मधुर स्वर से गाने लगी।

इसके बाद अचानक युवक दुःख के कारण रोने लगा। नाव मार्ग-भ्रष्ट होकर किनारे जा लगी। वहाँ घना अंधकार था। पूर्व दिशा में आकाश पीला-सा पड़ गया। युवक की सिसकियों ने रात्रि की निस्तब्धता को भंग कर दिया। कोयल के गाने और प्रकृति की निद्रा भी उसके रुदन और क्रन्दन से भंग हो गये।

सर्बिया

# भयानक शत्रु

लेखक—स्वेटोज़ार कोरोविच

हम लोग एक साथ जा रहे थे। मेरे पास केवल एक घोड़ा था। घोड़ा बहुत अच्छा था। मैं उसे इसलिये अच्छा समझता था कि मैं उस पर से कई मर्त्तबा गिर चुका था। मैं अक्सर अच्छे घोड़ों पर ही से गिरा करता हूँ। बड़ी शान के साथ तेज़ रफ़्तार से चलता था। चलते समय वह अपना सिर सदा ऊँचा रखता था। मेरा साथी अपनी सफ़ेद घोड़ी पर चुपचाप शान्तिपूर्वक चला जा रहा था। उसके पीछे चार-पाँच लद्दू घोड़े भी जा रहे थे। उन पर कोई बोझ न लदा था।

वह गठीले बदन का था। क़द लम्बा और सीना चौड़ा था। उसका मुँह मुरझाया हुआ पीला-सा था। परन्तु उसकी राष्ट्रीय पोशाक उसे बड़ी सुहावनी प्रतीत होती थी। उसकी सदरी पर सामने बहुत-सी चमकती हुई बटन लगी हुई थीं। उसने अपने सिर को रेशमी रूमाल से बाँध रखा था। रूमाल के छोर उसके कन्धे पर लटक रहे थे। उसकी मनोहारिणी छबि को मैं टकटकी लगाये देर तक देखता रहा। मुझे बोलने में इसलिये हिचकिचाहट होती थी कि ऐसा करने से मेरा वह आनन्द भंग हो जायगा जो मैं उसे चुपचाप निहार कर प्राप्त कर रहा था।

उसका नाम था डियोको म्राश्रोविच।

मैंने उसके सम्बन्ध में आश्चर्यजनक कहानियाँ सुन रक्खी थीं। वह अतुलनीय शूर-वीर समझा जाता था। वह सतर्क और प्रसिद्ध डाकू था। उसकी सब लोग प्रशंसा करते थे। उसने हर्ज़गोविना के अधिकांश भाग में अपना आतंक जमा रखा था। वह मुझ पर बहुत प्रेम प्रदर्शित कर रहा था।

लम्बी शान्ति को भंग करता हुआ और उसका ध्यान वार्तालाप की ओर आकर्षित करने के विचार से मैंने पूछा—"आप अपने साथ इतने लद्दू घोड़े क्यों लिये जा रहे हैं, जब कि उन पर लादने के लिये कुछ भी नहीं है?"

"मैं सामान लाद कर शहर ले गया था। अब वहाँ से लौट रहा हूँ।"

"आप वहाँ क्या-क्या सामान ले गये थे?"

"रोटियाँ, आलू, गोभी इत्यादि, बहुत-सी चीज़ें थीं।"

"यह सब सामान आप किसके लिये ले गये थे?"

"स्वर्गीय अली मूयागिच के बाल-बच्चों के लिये।"

मैं रुक गया। उसकी ओर आश्चर्य की दृष्टि से देखने लगा। अली मूयागिच तुर्कों में बड़ा बहादुर और डरावना आदमी माना जाता था। इसके अलावा वह म्राओविच लोगों का जानी दुश्मन प्रसिद्ध था।

"क्या आपने उनका कोई खेत ले रखा है?"

"नहीं तो, मैं उनका ऋणी हूँ। मुझे उनका बहुत कर्ज़ चुकाना है।"

इतना कह कर वह चुप हो गया। सिर झुका कर उसने घोड़ी को एक चाबुक जमाया, यद्यपि घोड़ी तेज़ी से चल रही थी। घोड़ी झिचकी और कुछ रुकी। उसने दुबारा एक चाबुक उसे जमाया। घोड़ी तेज़ रफ़्तार से भागने लगी।

उसकी यह हालत देख कर मैं चुप हो गया। मैंने आगे पूछ-ताछ करना बन्द कर दिया। अपने घोड़े की लगाम ढीली करके मैं धीरे-धीरे गाने लगा। मुझे इस समय स्मरण नहीं है कि वह कौन-सा गाना था।

उसे गाना पसन्द आया। वह अपनी घोड़ी मेरे घोड़े के पास ले आया। वह कान लगा कर गाना सुनने लगा।

"ज़रा ज़ोर से गाओ।"

मैं ज़ोर से गाने लगा। उसने अपने सिर पर बँधा हुआ रूमाल खोल डाला। रूमाल गरदन पर लटकने लगा। गाना सुनते-सुनते वह कभी-कभी अपना सिर भी हिलाने लगा।

मेरा गाना बन्द हो गया।

"और गाओ।"

"मुझे आगे का गाना याद नहीं है।"

वह अप्रसन्न और निराश-सा हुआ। घोड़े की लगाम खींचता हुआ वह उस मार्ग की ओर तेज़ी से मुड़ा जो जंगल में प्रवेश करता था।

"आप कहाँ जा रहे हैं?"

"मैं जंगल जा रहा हूँ। आओ कुछ विश्राम कर लें।"

मैं उसके पीछे-पीछे चला। जंगल पहुँच कर हम लोग घोड़ों पर से उतर गये। घोड़ों के चरने के लिये छोड़ कर हम एक वृक्ष की घनी छाया के नीचे बैठ गये। तम्बाकू निकाल कर हम लोगों ने अपने-अपने हुक्के भरे।

हम लोग चुपचाप बैठे रहे। घोड़ों की जुगाली के और दूर पर लकड़ी काटने के शब्द सुनाई पड़ रहे थे।

"आप अली के कर्ज़दार कब से हुए?" अन्त में निस्तब्धता भंग करते हुए मैंने वार्तालाप प्रारम्भ करने के उद्देश्य से उससे प्रश्न किया।

डियोको ने गंभीर मुद्रा धारण कर ली। उसने हाथ हिलाते हुए उत्तर दिया—

"बहुत दिनों से।"

"क्या आपने कर्ज़ अदा कर दिया?"

"कहाँ भाई! पूरा कर्ज़ अदा करने में बहुत समय लगेगा।"

दो या तीन मर्त्तबा मुँह से धुआँ निकालने के बाद उसने एक क्षण तक मेरी ओर देखा और बोला—

"बड़ी लम्बी कहनी है। यद्यपि वह मेरे लिये आनन्दप्रद नहीं है, फिर भी मैं तुम्हें सुनाता हूँ—

"तुर्कों के अत्याचार ने मुझे डाकू बनने के लिये विवश किया। मैं तुर्की प्रजा के मानवीय अधिकारों से वंचित जीवन से ऊब उठा। मैं सब को सिर झुकाते-झुकाते थक गया। सब लोग मुझे घृणा की दृष्टि से देखते। मान-सम्मान कहीं न होता। हताश होकर मैंने एक बन्दूक ली; छः साथी इकट्ठे किये और जंगल में जाकर रहने लगा। यहाँ हम तुर्क लोगों की ताक में रहा करते। जिस समय वे उधर से निकलते, तुरन्त उन पर हमला कर बैठते। हमारा एक दिन भी ऐसा न बीतता जब कोई लड़ाई न हो। लूट में हमको कुछ न कुछ अवश्य हर रोज़ मिल जाता। अन्त में हमने मूयागिच लोगों से मुठभेड़ करने का निश्चय किया। एक दिन उनके मकान पर छापा मारा। उस कुटुम्ब के तीन आदमियों को मार डाला। अली जान बचा कर भाग गया। हमने उसकी बहुत दिनों तक तलाश की पर उसे न पा सके। हमने मकान को लूटा। वहाँ से बहुत-सा धन लेकर हम जंगल लौट आये।

"परंतु हमको इसका बदला बहुत महँगा चुकाना पड़ा। अली ने हमसे कहीं अधिक शक्ति एकत्रित की। वह हमारी टोह में पहाड़ और पहाड़ियों पर घूमता रहा। उसके डर से हम भागे। उसने हमारा पीछा किया। हम घने जंगल में एक जगह छिप गये। हमारा छिपने का स्थान इतना सुरक्षित था कि वहाँ पक्षी भी पर नहीं हिला सकते थे। अली और उसके साथियों ने हमको चारों तरफ़ से घेर लिया।

चारों तरफ़ से घिर जाने पर हम बड़ी आफ़त में फँस गये। हमारे पास खाने-पीने के लिये कुछ भी नहीं था। हममें से कोई भी बाहर जाकर खाने-पीने का सामान लाने की हिम्मत न कर सकता था। हमको भूख और प्यास से व्याकुल होने पर मर्मान्तक वेदना होने लगी। मेरे साथियों के चेहरे उदास पड़ गये। परंतु किसी ने भी न तो कुछ शिकायत ही की और न अपने भाग्य को ही कोसा।

"अन्त में मैंने निश्चय किया कि हम लोग इस भयावह परिस्थिति में सर्वदा के लिये अपने को डाले नहीं रह सकते। मैंने अपने साथियों से कहा—'देखो भाइयो, अगर हम इसी हालत में पड़े रहे, तो भूख और प्यास के मारे हम अवश्य मर जावेंगे। जब मरना ही है, तब हमको शत्रु पर आक्रमण करना उचित प्रतीत होता है। शत्रु से बदला लेकर शूरों के समान मरना, भूख से मरने की अपेक्षा कहीं अधिक श्रेयस्कर है। जब मरना ही है तब लड़कर क्यों न मरा जाय! तुर्कों के खून की लालसा लेकर स्वर्ग जाना तो उचित नहीं जान पड़ता।'

"वे सब समझ गये कि मैं ठीक कह रहा हूँ। इस संकट से बचने का कोई दूसरा मार्ग नज़र न आता था। उन लोगों ने मेरे प्रस्ताव को स्वीकार कर लिया।

"तेग़ हाथ में लेकर सब से पहले मैं बाहर निकला। मेरे पीछे सब साथी भी आ गये। तुर्कों ने हम पर गोलियों की बौछार करनी शुरू कर दी। मेरे दो साथी घायल होकर गिर पड़े। मैंने सोचा—मरने के सिवाय अब कोई चारा नहीं है। शत्रु के ऊपर अपनी पूरी शक्ति से मैं टूट पड़ा। साथियों ने भी मेरा अनुकरण किया। मेरी आँखों में खून छाया हुआ था। मुझे कहीं कुछ न दिखाई देता था। मैं अपनी तेग़ को हिलाता हुआ तेज़ी से आगे दौड़ा। अचानक पीछे से एक भयंकर आघात हुआ। मैं बेहोश होकर गिर पड़ा।

"जब मुझे होश आया तब मैंने अपने को मूयागिच के मकान

में पाया। मैं एक चटाई पर लेटा हुआ था। बहुत से तुर्क, जिनमें अली मूयागिच भी था, मेरे पास खड़े हुए सिर हिला रहे थे। जिस समय मैंने आँखें खोलीं, अली ने झुक कर मेरा हाथ पकड़ लिया और उसने पूछा—'कैसी तबियत है ?'

"मैंने उठने की कोशिश की। परन्तु मुझे ऐसा प्रतीत हुआ कि मानो किसी ने मुझ पर दूसरा आघात किया। मैं फिर बेहोश हो गया।

"पूरे एक महीने तक मैं मृत्यु-शय्या पर पड़ा रहा। अली मेरी बग़ल से क्षण भर के लिये भी अलग नहीं हुआ। वह मेरी इतनी सेवा करता था कि सम्भवतः यदि मेरे पिता होते, तो वे भी उतनी सेवा न कर सकते। वह अपने हाथ से मेरे घावों को धोता और पट्टियाँ बदलता। प्यास लगने पर पानी पिलाता और बालकों के समान मुझे खाना खिलाता। जब कभी मुझे भूख न मालूम पड़ती, तब वह खाने के लिये बहुत आग्रह करता। कभी-कभी अपनी जाँघ पर मेरा सिर रख कर मेरे मुँह में ज़बर्दस्ती अंडे और गोश्त डाल कर मुझे खिलाता।

"निदान् मैं अच्छा हो चला। ज्योंही मुझे कुछ थोड़ी शक्ति आई, मैं खड़ा होकर दीवाल के सहारे कमरे में चलने लगा। कभी-कभी अली हाथ पकड़ कर मुझे आँगन तक ले जाता, जहाँ मैं उसके शहतूत के वृक्ष के नीचे बैठकर विश्राम करता।

"दिन प्रतिदिन मुझ में अधिकाधिक बल आने लगा। अली जिस समय मेरी तरफ़ मुस्करा कर देखता तब उसका चेहरा दमकने लगता था।

"उसने एक दिन पूछा—'क्यों तुम अभी कूद सकते हो ?'

"मैंने उत्तर दिया—'नहीं, अभी मैं कूद नहीं सकता। मुझमें इस समय भी बहुत कमजोरी है।'

"वह अपनी मूँछ मरोड़ता हुआ हँस पड़ा—

'तुम में बहुत जल्द ताक़त आवेगी और तुम बहुत जल्द कूदने के लायक़ बन जावोगे।'

"कुछ दिनों बाद उसने दुबारा वही प्रश्न पूछा।

"मैंने उत्तर दिया—'मैं कोशिश करके देखता हूँ।'

"वह अलग हट गया! मैं दौड़ा। थोड़ी दूर दौड़कर कूद भी गया। मैं इतने ऊपर से कूदा कि अली आनन्दित होकर हँस पड़ा। उसने कहा—'इसका मतलब यह है कि अब तुम बिलकुल चंगे हो गये।'

"मुझे आँगन में छोड़ कर वह घर के अन्दर गया। मैं बहुत परेशानी के साथ उसकी तरफ़ देखता रहा। एक क्षण बाद वह दोनों हाथों में दो भरी हुई बन्दूकें लेकर लौटा। उसका चेहरा भयावना और पीला मालूम पड़ने लगा। उसकी आँखें भूखी बिल्ली के समान चमकने लगीं। मेरे सामने खड़े होकर वह बोला—

'अब तुम चंगे हो चुके और चलने-फिरने के भी लायक़ हो गये। इस समय तुम में वही शक्ति फिर आ गई है जो तुम में घायल होने के पहले थी। अब तुम मेरा कर्ज़ चुकाने के लायक़ हो। तुमको मेरा बहुत-सा कर्ज़ देना है। तुमको पूरे तीन सिरों की क़ीमत देनी है, क्योंकि तुमने मेरे दो भाइयों की हत्या की है।' इस प्रकार कहते-कहते पहिले की अपेक्षा और अधिक भयंकरता से उसकी आँखें चमचमा उठीं। साथ ही साथ उसके नीचे का जबड़ा काँपने लगा—'जिस समय तुम मेरे सामने ज़ख्मी होकर पड़े थे, उसी समय, अगर मैं चाहता तो तुमको मार सकता था। परन्तु मैं ऐसा नहीं करना चाहता था। मैं तुमको चंगा करके मारना चाहता था। अली मूयागिच ने निस्सहाय शत्रु को कभी नहीं मारा। वह अपने इस प्रण के खिलाफ़ चलना भी नहीं चाहता।' मुझे एक बन्दूक देते हुए उसने कहा—'यह बन्दूक लो। यह मेरी बन्दूक के समान ही मज़बूत और भरी हुई है। चलो, हम तुम

दोनों जंगल चलें। वहाँ चल कर अपनी-अपनी ताक़त की आज़माइश करें।'

"मैं कुछ न बोल सका। उदास मन से आगे-आगे चला। सिर झुकाये मैं मन ही मन विचार करता जा रहा था कि मुझे इस समय क्या करना चाहिये।

"हम लोग जंगल पहुँच गये।

"उसने कहा—'तुम जिस जगह पर हो वहीं खड़े रहो। मैं यहाँ खड़ा होता हूँ। देखो, अब हम लोग एक दूसरे के आमने-सामने खड़े हुए एक दूसरे को अच्छी तरह से देख सकते हैं। यहीं हमको एक ही साथ गोली चलाना होगा।'

"इसी समय मेरी विचार तंद्रा भंग हुई। मैं हाथ से बन्दूक फेंक कर अलग खड़ा हो गया। मैंने कहा—

'क्या मैं निहत्थे पर गोली चलाऊँ? क्या तुम समझते हो कि मैं इतना कमीना हूँ कि तुम पर गोली चला दूँगा? क्या मुझे दुनिया में अपनी बदनामी का डर नहीं है?'

"वह घृणित भाव से मुस्कराता हुआ बोला—'तुम्हें बन्दूक उठानी होगी। मैं तुम्हें मजबूर करूँगा कि तुम बन्दूक उठाओ और अपनी ताक़त आज़माओ। मैं इस युद्ध को मुल्तवी नहीं कर सकता। मैं कह चुका कि निशस्त्र आदमी पर मैं कभी भी वार नहीं करूँगा। बन्दूक उठाओ। मैं तुम्हारे साथ मज़ाक नहीं कर रहा हूँ।'

"मैं टस से मस भी न हुआ।

"उसने ज़ोर से चिल्ला कर कहा—'मैं कहता हूँ कि बन्दूक उठाओ, नहीं तो मैं तुम्हें लोमड़ी कह कर पुकारूँगा।'

तब "मैंने झुक कर बन्दूक उठा ली।

" 'इस तरफ़ मुड़ो।'

"मैं उसी तरफ़ मुड़ गया, जिस तरफ़ उसने संकेत किया था।

" 'मेरी तरफ़ निशाना जमाओ।'

"उसने मेरी तरफ़ निशाना जमाया और मैंने अपनी बन्दूक का निशाना उसकी तरफ़ जमाया।

"उसने गोली छोड़ दी। गोली की आवाज़ जंगल में गूँज उठी।

"मुझे स्मरण नहीं कि मैंने कब घोड़ा दबाया। परन्तु मैंने ज्योंही उसकी तरफ़ देखा वह लड़खड़ाया और गिर पड़ा। मैं दुःखित होकर चीख़ पड़ा और उसकी तरफ़ लपका; परन्तु इस समय वह मर चुका था।

"उसी समय से प्रति वर्ष मैं बहुत सा आलू, गोभी और रोटी उसके बाल-बच्चों को पहुँचाया करता हूँ। मैं उनकी परवरिश के लिये गाय और भेड़ भी लाया करता हूँ।"

डियोको ने अपनी कहानी ख़तम की और सिर झुका कर बैठ गया। उसने धैर्य धारण करने की बहुत कोशिश की; परन्तु उसकी आँखों से आँसुओं की धारा निकल पड़ी।

रूमानिया

# कास्मा

## लेखिका—माइकेल सेएडोविएन्यू

कास्मा बहुत ही बलवान पुरुष था। उसका नाम लेते ही उसकी सूरत मेरी नज़रों के सामने खड़ी हो जाती है। ऐसा मालूम होता है कि वह अपने काले घोड़े पर सवार है। उसकी दो तेज़ आँखें, बड़ी घनी मूछें और भयानक मुखाकृति देखने वाले के हृदय में आतंक उत्पन्न करते हैं। वास्तव में कास्मा रूखा-सूखा आदमी था। वह सदा घोड़े पर सवार रहता, उसके कन्धे पर बन्दूक लटकती रहती और उसके चमड़े के कमरबन्द में एक गज़ लम्बी छुरी मज़बूती में कसी रहती। कास्मा का नाम लेते ही उसका उपर्युक्त वर्णित रूप मेरी नज़रों के सामने अंकित हो जाता है।

मैं वृद्ध पुरुष हूँ। मेरी आयु लगभग सौ वर्ष की है। मैंने संसार का बहुत भ्रमण किया है। देश-देश के मनुष्यों को और भाँति-भाँति की चीज़ों को मैंने देखा है। परन्तु कास्मा रेकोरे के समान मनुष्य मुझे कहीं भी देखने में न आया। उसका शरीर बहुत लम्बा-चौड़ा नहीं था। उसका क़द मझोला था। लम्बी हड्डियाँ थीं, छरहरा बदन था, और यद्यपि वह औरों की तरह पक्के रंग का था, पर उसकी जोड़ का दूसरा मनुष्य कहीं भी दिखाई न पड़ता था। उसकी आँखें देखते ही बनती थीं। वह मर्द था।

हमारे इस ग़रीब देश पर उस समय आपत्ति की घनघोर घटायें छाई हुई थीं। तुर्क और यूनानियों के रूमानिया पर आक्रमण हुआ

करते थे। उनके आतंक के कारण लोग दुःख-शोक से जीवन व्यतीत करते थे। कैसे दुर्दिन थे! इस सर्वत्र व्यापी आपत्ति से केवल कास्मा बचा हुआ था। वह आज यहाँ रहता तो कल दूसरी जगह। शान्ति-पूर्ण और चिन्ता रहित उसका जीवन था। शत्रुओं ने देश का सर्वनाश कर डाला। उनके भय से व्याकुल हो कर लोग इधर-उधर भाग गये। कास्मा अपने स्थान पर डटा रहा। उन्होंने उसे एक दिन पकड़ा। उसके हाथों में हथकड़ी और पैरों में बेड़ियाँ डाल दीं। उसने ज्योंही हथकड़ी और बेड़ी को स्पर्श किया, वे ढीली पड़ गईं। उन्हें बाहर फेंक कर वह घोड़े पर सवार हुआ और बहुत दूर निकल गया। उसकी जन्मपत्री में लिखा हुआ था कि वह लोहे की गोलियों से मारा नहीं जा सकता। मंत्र से उसने अपने शरीर को सुरक्षित बना रखा था। केवल चाँदी की गोली का उस पर असर पड़ सकता था। कहीं भी ढूँढ़ो, आज वैसा आदमी देखने को न मिलेगा। वह वीरत्व काल था। क्या तुमने दूसरे ऐसे शूर-वीर के सम्बन्ध में कभी कहीं सुना है जो एक सुन्दर केशी अविवाहिता युवती का पुत्र था? उसकी समता का केवल वही था। उसने वालाचिया को लूटा था। कास्मा ने मोल्डाविया को लूटा। रात के समय वे दोनों मिलकोव में मिले। दोनों ने बदल कर एक दूसरे की लूट ले ली। सरहद्दी रक्षकों ने क्या उनके पकड़ने का प्रयत्न नहीं किया? उन्होंने पूरी कोशिश की। परन्तु कास्मा का घोड़ा शैतान के समान तेज़ गति से उड़ता था। उनकी गोलियाँ उसके पास तक नहीं पहुँच पाती थीं। बकाऊ के पर्वतों से सरहद तक बड़ा अन्तर है। उस अन्तर को रात भर में दो मर्तबा तय करना सहज बात न थी। कास्मा और उसके घोड़े के लिये यह बच्चों का-सा खेल था।

इस प्रकार उसका जीवन जंगल और मैदानों में व्यतीत होता था। उसे चिन्ता, भय अथवा प्रेम कुछ भी मालूम न था। अन्त में एक

समय वह आया जब उसे भी प्रेम ने अपने जाल में पकड़ लिया। वह कितना यशस्वी और भाग्यवान आदमी था! मुझे उसकी सारी पुरानी बातें ऐसी प्रतीत हो रही हैं मानो वे सब आज ही घटी हों।

उस समव वलचरेस्टी की रियासत में एक यूनानी रहता था। यहाँ हमारे देश के एक गिरे हुये किले में एक रूमानिया की अत्यंत रूपवती स्त्री रहती थी। यूनानी उसे प्रेम की दृष्टि से देखता था। इस बात का किसी को आश्चर्य न होता था। उसकी भौंहें धनुष के समान बाँकी थीं। उसकी चितवन में जादू की-सी आकर्षण शक्ति थी। उसका विवाह उसकी इच्छा के विरुद्ध डिमिट्र् कोवास के साथ हुआ था। वह मर चुका था। अब उसकी विधवा सुलताना, उसकी रियासत पर शासन कर रही थी।

मैंने जैसा कि अभी तुम्हें बतलाया, निकोला ज़मफिरीडो नामक यूनानी इस स्त्री के प्रेम में पागल हो रहा था। वह इसके लिये प्राण तक देने के लिये उतारू था। तरह-तरह से उसने इस स्त्री पर अपना प्रेम प्रदर्शित किया। ऐसा कोई उपाय नहीं था जिसे उसने इसको प्राप्त करने के लिये उठा न रखा हो। न जाने कितने ज्योतिषियों और जादूगरों से उसने इसके प्राप्त करने के लिये उपाय पूछे। परन्तु इस ओर उसका सारा परिश्रम व्यर्थ गया। स्त्री का उस पर ज़रा भी प्रेम नहीं था। क्या वह कुरूप अथवा अंग-भंग था? नहीं। बात ऐसी नहीं थी। वह शानदार यूनानी था। उसकी आँखें भूरी, दाढ़ी काली और क़द ऊँचा था। देखने में वह बड़ा सुन्दर प्रतीत होता था। इतना होने पर भी उसका परिणाम क्या हुआ? युवती ने निश्चयात्मक रूप से कह दिया था कि वह उसे नहीं चाहती। उसके साथ विवाह करना तो दूर की बात है।

एक दिन निकोला अपने कमरे में बैठा हुआ सोचने लगा कि वह इस विधवा युवती से कितना अधिक प्रेम करता है। समझ में नहीं

आता कि उसने मेरे प्रेम को क्यों ठुकरा दिया ? कुछ दिन पहले वह एक मशहूर गाने वाले के साथ उसकी दीवाल के नीचे खड़ा-खड़ा उसको एक मधुर गाना सुनाता रहा। उस समय उसके घर में कितनी शान्ति थी ! अब क्या करना चाहिये ? वह उसके साथ क्यों शादी नहीं करना चाहती ? मैं बदसूरत भी नहीं हूँ, मूर्ख भी नहीं हूँ, फिर वह मुझे क्यों नहीं चाहती ? क्या वह किसी दूसरे मनुष्य से प्रेम करती है ? नहीं, मैं उस पर रात-रात भर निगरानी रखता हूँ। उसके मकान में रात को कोई नहीं आता।

निकोला को क्रोध हो आया। वह उठ कर बाहर चला गया। उसके सईस अस्तबल में घोड़ों को नहला रहा था। "इस घोड़े को क्यों नहला रहा है ?"—ऐसा कहते हुये उसने सईस की पीठ पर एक चाबुक जमाया। कुछ कदम आगे जाकर उसने माली को धूप तापते हुये बैठा पाया। " इसी तरह नौकरी की जाती है ?"—यह गुस्से में कहते हुये उसने माली को भी एक हाथ रसीद किया।

फिर वह सोचने लगा कि निरापराध नौकरों पर ग़ुस्सा निकालने से क्या लाभ ? वह बग़ीचे में गया। वहाँ एक झाड़ के नीचे पत्थर की बेंच पर बैठ कर सोचने लगा। गर्म हवा ने बग़ीचे को सुखा डाला था। सर्वत्र वातावरण उदास प्रतीत होता है। डाली से पत्ते झड़ रहे हैं। विछोह के भय में डालों में पत्ते काँप रहे हैं। इस वृक्ष के नीचे लाल लाल पत्तों का समूह रक्त-बिन्दु के समान प्रतीत हो रहा है। निकोला इसी प्रकार के विचारों में निमग्न बैठा रहा। उसने सोचा—जब वह मेरी ओर देखती तक नहीं तब जीवन का मूल्य ही क्या है ? वह गिरे हुये पत्तों की ओर टकटकी लगाये देखते-देखते बहुत उदास हो गया।

अचानक वह पुकारने लगा—"वासाइल, वासाइल !"

एक गठीला वृद्ध पुरुष दरवाज़े के अन्दर आया।

मालिक ने कहा, "वासाइल, मुझे मदद करो।"

वृद्ध उसके सामने खड़ा होकर लम्बी साँसें लेने लगा। ऐसा प्रतीत हुआ कि उसे कुछ हिचकिचाहट प्रतीत हो रही है।

"क्यों वासाइल, क्या तुम मेरी मदद न करोगे?"

"मालिक, मेरी समझ में नहीं आता कि मैं किस प्रकार मदद करूँ!"

"कोई उपाय निकालो। तुम तो बहुत होशियार आदमी हो। मुझे इस समय तुम्हारी मदद की बहुत सख्त ज़रूरत है। जन्तर-मन्तर जानने वाली बूढ़ी जादूगरनी ने भी हाथ टेक दिया। उस गवैये का भी कुछ बस नहीं चलता। इस गाढ़े समय पर तुम्हीं मेरा काम कर सकते हो। इस वक्त तुम्हें मेरी ज़रूर सहायता करनी चाहिये। ऐसे समय तुम तो मुझे निराश न करो।"

"मैं क्या करूँ, कुछ समझ में नहीं आ रहा है।"

"वासाइल, इस वक्त मेरा साथ दो। मुझे धोखा न दो।"

"मैं कुछ कहना चाहता हूँ। परन्तु कहने की हिम्मत नहीं होती।"

"लो, यह एक अशर्फी लो। बोलो अब क्या कहना चाहते हो।"

वासाइल ने अशर्फी की तरफ निहारा तक नहीं।

"मुझे अच्छी तरह मालूम है कि आप मुझे दो अथवा तीन अशर्फियाँ देंगे। परन्तु मामला बहुत संगीन है। सुनिये, अगर मैं आपकी परिस्थिति में होता तो फ्रेज़िनी जाता, उस युवती के कमरे के अन्दर जबरन प्रवेश करता और उसे बलपूर्वक हरण करके घर ले आता। मुझे तो उसे प्राप्त करने का यही एक उत्तम उपाय दिखलाई दे रहा है।"

"वासाइल, तुम जो कुछ कह रहे हो, समझ-बूझ कर कह रहे हो न? क्या ऐसा होना सम्भव है?" वासाइल चुप रहा। निकोला मस्तक पर हाथ रख कर कुछ विचार करने लगा। कुछ देर बाद वह बोला—

"मैं इसकी भी कोशिश करूँगा।"

वासाइल ने लम्बी साँस लेकर कहा—"मेरी इस सलाह का मूल्य दो अशर्फियाँ हैं मालिक, एक नहीं; ऐसा मुझे जान पड़ता है।"

उसी दिन, रात के समय निकोला घोड़े पर सवार हुआ। पाँच बलवान साथियों को साथ लेकर वह फ्रेज़िनी की ओर रवाना हो गया।

रास्ते में बड़ी ज़ोर की ठंढी-ठंढी हवा बह रही थी। वे सब लोग चुपचाप घोड़ों पर सवार तेज़ी से रास्ता तय कर रहे थे।

दूर से देहातों में कौओं के काँव-काँव करने का शब्द सुनाई पड़ता था। इसके अतिरिक्त कहीं कोई आवाज़ सुनाई नहीं पड़ती थी। अन्त में उन्हें युवती का क़िला दिखलाई पड़ा। अन्धकारपूर्ण रात्रि में वह किला कोयले के पहाड़ के समान दिखलाई पड़ता था!

निकोला और उसके साथी किले की दीवार के पास पहुँच गये। वे चुपचाप घोड़ों पर से उतर पड़े। उन्होंने दीवार पर रस्सी की सीढ़ियाँ फेंकी। सीढ़ियों के सहारे वे दीवार पर चढ़ गये। 'सहायता करो,' शब्द की प्रतिध्वनि सुनाई दी। निकोला के मन में ज़रा भी भय न था। दरवाज़े तोड़ डाले गये। वे दालान के अन्दर घुस पड़े।

यूनानी लम्बी साँस लेकर बोला—"अहा! अन्त में तुम मेरे कब्ज़े में आ ही गईं।"

परन्तु इसी समय अचानक दरवाज़ा खुला। समस्त मार्ग में प्रकाश जगमगा उठा। निकोला निर्भय होकर आगे बढ़ा। युवती सुलताना अपने कमरे के दरवाज़े पर खड़ी हुई थी। उसके बाल खुले हुये थे और वह एक लम्बी सफेद साया पहिने हुये थी। वह अपनी विशाल काली आँखों से निकोला की ओर निहार रही थी। वह उसके निकट पहुँच गया। उसकी इच्छा हुई कि वह घुटनों के बल झुक कर उसके पैरों का चुम्बन ले ले। परन्तु वह जानता था कि इस व्यवहार को देख कर वह हँस पड़ेगी।

"खबरदार!" उसने तेज़ी से कहा—"मैं समझी कि कोई चोर

घुस आया है। परन्तु चोर नहीं, आप तशरीफ़ लाये हैं। आइये मास्टर निकोला!"

अचानक उसके हाथों में एक नंगी तलवार चमक उठी। तलवार की चौड़ी और तेज़ धार निकोला के सिर पर पड़ी। वह बिलकुल शान्त खड़ा रहा। उसके साथी सहायतार्थ दौड़े; परन्तु उनमें से एक धराशायी हुआ। युवती के नौकर चारों तरफ से दौड़ पड़े। निकोला और उसके साथी वापस लौट पड़े। वे दालान तक आये। सीढ़ी के सहारे किले की दीवार लाँघ कर सब के सब वालचरेस्टी की तरफ तेज़ी से भाग गये।

निकोला लम्बी साँस लेकर बोल उठा—"परमात्मा मुझ पर दया करो; मैं एक अधम प्राणी हूँ। मैं अब क्या करूँ?" अक्टूबर की उस पूरी रात भर वह पड़ा-पड़ा जागता रहा। उसके मन में न जाने कितने विचार उत्पन्न होते और बरसात के बबूलों के समान शीघ्र नष्ट हो जाते। वह चिल्ला उठा—"हाय! दुःख ने मुझे बड़ी बेरहमी से अपने जाले में जकड़ लिया है। मैं दुखी हूँ, निस्सहाय हूँ और अधम हूँ।" इस प्रकार कहता हुआ वह अपनी भौंहों को दोनों हाथों से दबाने लगा। "कैसी सुन्दर रूपवती स्त्री है। उसकी कैसी मतवाली आँखें हैं! परमात्मा, परमात्मा, मेरी सहायता करो। अन्यथा सर्वनाश हो जावेगा।" इसके बाद वह नाना प्रकार के स्वप्न देखने लगा। कैसी सुन्दर स्त्री है! कैसी मतवाली आँखें हैं!

वह उठा और वासाइल को बुलाने लगा।

"वासाइल, शर्म का लबादा ओढ़े हुए मैं लौट आया। अहा! कैसी सुन्दर स्त्री है। मेरी आत्मा उसे प्यार करती है। मेरी सहायता करो। मैं तुम्हें दो अशर्फ़ी दूँगा।"

वासाइल ने शान्तिपूर्वक उत्तर दिया:—

"मुझे आप लोगों पर कैसी गुज़री, इसका पता है। वास्तव में वह

स्त्री बड़ी घमंडिन है। मुझे उसको प्राप्त करने का तरीक़ा मालूम है। मैं जानता हूँ इसीलिये दो क्यों, मुझे पाँच या छः अशर्फियाँ मिल सकेंगी।"

"वासाइल शीघ्रता करो, नहीं तो मैं मर जाऊँगा।"

"सच है मालिक! मेरे लिये सात अशर्फ़ियाँ भी कुछ नहीं हैं; परन्तु जिस समय वह युवती आपके हृदय से लग जायगी, उस समय आप मुझे सात की सात-गुनो अर्थात् उनचास अशर्फ़ियाँ देंगे। इस बात में मुझे तिल मात्र भी सन्देह नहीं दीखता। इस बात में भी तिल मात्र सन्देह नहीं है कि वह युवती आपके हृदय से लग जायगी, आपसे प्रेम करेगी। आपकी होकर रहेगी। मैं आपके पास कास्मा रेकोरे को लाता हूँ। जिस प्रकार आप मेरे हाथ में अशर्फ़ियाँ दे रहे हैं उसी प्रकार वह आपके हाथों में उस युवती को समर्पित कर देगा। इस बात को आपके ध्रुव सत्य समझें।"

कास्मा रेकोरे का नाम सुनते ही निकोला चौंका। इसके बाद उसने एक लम्बी साँस ली और कहने लगा—"अच्छा, यही करो।"

तीसरे दिन कास्मा आया। निकोला वृक्ष के नीचे डालों की छाया में बैठा था। बैठे-बैठे वह सुगन्धित तम्बाकू पी रहा था। जिस समय कास्मा उसके सामने आया, उस समय वह उसे वह बड़ी देर तक देखता रहा। कास्मा बहुत धीरे-धीरे आया। उसका बायाँ हाथ घोड़े की गरदन पर था। उसके लम्बे जूतों में लोहे की नाल लगी हुई थी। उसकी सदरी चमड़े के कमरबन्द तक आ गई थी। उसकी पीठ पर बन्दूक लटक रही थी। वह सिर पर काले भेड़ की ऊन की एक लम्बी टोपी पहिने हुए था। वह धीरे-धीरे आ रहा था। उसका घोड़ा सिर झुकाये हुए उसके पीछे चला आ रहा था।

वासाइल मालिक के पास पहुँच कर कहने लगा—"मालिक, इस मनुष्य को देखो! यह तुम्हारे लिये नरक से शैतान को भी पकड़ कर ला सकता है।"

निकोला ने सूक्ष्म-दृष्टि से उसकी ओर देखा। कास्मा चुपचाप खड़ा रहा। वह शान्तभाव से बोला—

"ईश्वर आपकी रक्षा करे।"

वासाइल ने कहा—"धन्यवाद है। आपकी भी ईश्वर रक्षा करे।"

मालिक चुपचाप रहा।

वासाइल ने कहा—"क्यों भाई कास्मा, तुम आ गये?"

कास्मा ने उत्तर दिया—"हाँ मैं आ गया।"

"क्या तुम हमारी युक्ति में सहायक बनोगे?"

"क्यों नहीं, ज़रूर सहायक बनूँगा।"

कास्मा की मुख-मुद्रा इतनी गम्भीर थी कि उसे देख कर ऐसा प्रतीत होता था कि वह कभी हँसा तक न होगा।

गहरी नींद से जागता हुआ-सा निकोला बोल उठा—"हाँ, हाँ, तुम तो यहाँ आ गये हो। वासाइल, जल्द जाओ और काफी लाओ।"

कास्मा ने कहा—"मैं काफी नहीं पीता।"

निकोला स्वप्नवत् वही बात दोहराता हुआ बोल उठा—"आप काफी नहीं पीते! आप मुझे सहायता करने के लिये आये हैं। क्यों यही बात है न? क्या सचमुच आप मेरी सहायता करने आये हैं? आप इस उपकार के बदले में क्या लेंगे? पचास अशर्फ़ियाँ?"

"हाँ।"

"वासाइल, मेरा मनीबेग ले आओ।"

कास्मा ने कहा—"नहीं, मुझे अभी कुछ न चाहिये।"

निकोला ज़ोर से बोल उठा—"क्यों? क्या आपको उनकी आवश्यकता नहीं है?"

"यह तो एक सौदा है। मुझे फ्रेज़िनी की स्वामिनी को पकड़ कर

आपके पास ला देना है। जिस समय उस युवती को आपके पास ला दूँगा उसी समय आप मुझे अशर्फ़ियाँ दे दीजियेगा।"

वासाइल बीच में बोल उठा—"वाह, क्या सुन्दर सौदा है! वह आपको युवती ला दे और आप उसे अशर्फ़ियाँ दे दें। क्या मैंने आपसे नहीं कहा था कि इनमें नरक से शैतान को पकड़ लाने की भी ताक़त मौजूद है। अब आप विश्वास रखिये कि युवती आपकी हो गई।"

कास्मा बगीचे में लौट आया। उसने घोड़े को एक झाड़ से बाँध दिया। लबादा पहिन कर वह भूमि पर लेट गया।

निकोला ने लम्बी साँस लेकर कहा—"हाँ, हाँ, वह वास्तव में मर्द है।"

जब सर्वत्र अन्धकार हो गया, कास्मा ने घोड़े की ज़ीन को मज़बूती से कसा और रकाब पर पैर रख कर वह उस पर सवार हो गया। उसने निकोला से कहा—

"मालिक, हमारी इसी घास के मैदान में प्रतीक्षा करना।"

द्वार खुल गये। घोड़ा हिनहिनाया और तीर के समान द्रुत वेग से उड़ गया।

शरद ऋतु के कोहरों के भीतर चन्द्रमा का प्रकाश फैला हुआ था। निस्तब्ध पहाड़ी और अन्धेरे जंगल में प्रकाश की चादर बिछी हुई थी। घोड़े की टाप के शब्द इस निस्तब्धता को भंग कर रहे थे। कास्मा चुपचाप जंगल का रास्ता तय करता हुआ चला जा रहा था। वह इस जंगल के नीले प्रकाश में भूत-सा जान पड़ता था।

वह फ़ेज़िनी पहुँच गया। वहाँ सब सो रहे थे। फाटक बन्द थे। कास्मा ने दरवाज़ा खटखटाया।

अन्दर से आवाज़ आई—"दरवाज़ा कौन खटखटा रहा है?"

कास्मा ने कहा—"दरवाज़ा खोलो।"

"तुम कौन हो ?"

कास्मा ने गरज कर कहा—"दरवाज़ा खोलो।"

अन्दर धीरे-धीरे बातचीत करने के अस्पष्ट शब्द सुनाई पड़े।

"मैं कब तक बाहर खड़ा रहूँगा ?"

"हम दरवाज़ा नहीं खोल सकते।"

"दरवाज़ा खोलो ! मैं कास्मा रेकोरे हूँ।"

द्वार पर एक प्रकाश दिखाई पड़ा। वह शीघ्र ही अदृश्य हो गया। फाटक खुल गये। कास्मा घोड़े पर चढ़ा हुआ अन्दर चला गया। अन्दर वह घोड़े पर से उतर पड़ा। फिर वह अन्दर प्रविष्ट हुआ।

उसने अपने मन में कहा—"दरवाज़ा खुला है। स्त्री बहादुर जान पड़ती है।"

उसकी यह अस्पष्ट गुनगुनाहट वातावरण में प्रतिध्वनित हो उठी। एक कमरे के अन्दर कुछ हल्ला सुनाई दिया। मार्ग में प्रकाश दिखलाई पड़ने लगा। सुलताना अपने कमरे के दरवाज़े पर खड़ी हुई दिखलाई पड़ी। उसके बाल खुले थे और वह सफ़ेद पोशाक पहिने हुये थी।

उसने ज़ोर से कहा—"तुम कौन हो ? क्या चाहते हो ?"

कास्मा ने शान्तिपूर्वक कहा—"मैं तुम्हें मास्टर निकोला के लिये ज़बरन पकड़ कर ले जाने के लिये आया हूँ।"

"क्या तुम्हारे यहाँ आने का यही कारण है ?" ऐसा कहते हुये उसने अपना शस्त्र उठाया—"मैं तुम्हें और तुम्हारे मालिक निकोला दोनों को देखती हूँ।"

कास्मा एक क़दम आगे बढ़ा। उसने युवती की कलाई पकड़ ली—तलवार उसके हाथ से छूट कर दूर गिर पड़ी। स्त्री चिल्ला उठी—

"गेब्रियल, निकूलाई, टोडर ! जल्द आओ—बचाओ !"

वहाँ सब के सब आकर इकट्ठे हो गये। वे सब दरवाज़े के पास खड़े हो गये। युवती ने अपने को उसके हाथों से छुड़ा कर एक कटार उठाई।

"ऐ बुजदिलो, वहाँ खड़े-खड़े क्या देखते हो? इसको बाँधो।"

कास्मा ने कहा—"सुन्दरी, क्यों व्यर्थ चिल्लाती हो? मैं समझ गया कि तुम बहादुर हो। इसका प्रभाव मुझ पर नहीं पड़ सकता।"

नौकर धीरे-धीरे कुछ सलाह करने लगे।

"मालकिन, हम इसे कैसे बाँध सकते हैं? वह कास्मा—कास्मा रेकोरे है। वह जादूगर है।"

"दुष्ट कहीं के!" ज़ोर से इस प्रकार कहते हुये वह कास्मा पर लपकी। कास्मा ने उसकी कलाई पकड़ ली। रस्सी से उन्हें बाँध कर उसने उसे उठा लिया।

उसने शान्तिपूर्वक कहा—"हट जाओ, रास्ता दो।"

सब आदमी रास्ते से हट गये।

कास्मा युवती को कमरे से नीचे ले जाते हुये मन ही मन सोचने लगा—"कैसी सुन्दर स्त्री है! निकोला का चुनाव वास्तव में उत्तम है।"

सुलताना अपने नौकरों की तरफ़ घूर कर देखने लगी। इसके पश्चात् वह अपने पकड़ने वाले का भयंकर स्वरूप देखने लगी।

"तुम कौन हो?"

"कास्मा रेकोरे।"

वह भयभीत नौकरों की तरफ़ देख कर चुप हो गई। अब उसकी समझ में सब बातें आ गईं।

बाहर निकलने पर कास्मा घोड़े पर बैठा। उसने युवती को घोड़े पर अपने सामने बैठा लिया वह फिर मन ही मन सोचने लगा—"कितनी सुन्दर स्त्री है!" शीघ्र ही उसका घोड़ा हवा से बातें करने लगा।

सुल्ताना ने चारों तरफ़ देखा। चन्द्रिका के प्रकाश में वह कास्मा को देखने लगी।

"सुन्दरी, तुम मुझे क्यों निहारती हो ?"

घोड़ा भागा जा रहा था। सुन्दरी के नागिन-से काले बाल हवा में उड़े जा रहे थे। जंगल के पत्तों-पत्तों में कुहरे के जल-कण दिखलाई पड़ रहे थे। सुलताना कास्मा को घूर कर देख रही थी। वह जानती थी कि इसकी कलाई फौलादी है। उसकी आँखों से आग की ज्वाला-सी निकलती दिखलाई पड़ती थी।

"सुन्दरी, तुम क्या देखती हो ? तुम काँप क्यों रही हो ? क्या ठंढ मालूम पड़ती है ?" जंगल में घोड़े की टाप की आवाज़ प्रतिध्वनित होने लगी। अचानक उन्हें कुछ दूर पर कुछ परछायीं इधर-उधर चलती-फिरती नज़र आईं।

सुलताना ने पूछा—"वे कौन हैं ?"

"वहाँ तुम्हारा मालिक निकोला हम लोगों की बाट जोह रहा है।"

स्त्री शान्त थी। परन्तु कास्मा जानता था कि हाथ बँधे रहने के कारण उसको बड़ा दर्द हो रहा था। उसके सुन्दर सफेद हाथ खोल दिये गये। उसने दाहिने हाथ से घोड़े की लगाम थाम ली और बायाँ हाथ उसने कास्मा की गरदन में डाल दिया। घोड़ा चारों ओर घूमने लगा। उसने उसकी छाती पर अपना सिर रख दिया।

उसने धीरे से कहा—"तुम मुझे किसी दूसरे मनुष्य को न सौंपो।"

फिर घोड़ा नीले प्रकाश में बड़ी तेज़ी से भागा। मैदान में उसकी टाप के शब्द प्रतिध्वनित होने लगे। पत्ते चमकने लगे। वृक्ष हवा के झोंकों से हिलने लगे। उनकी परछायीं उनके आगे-आगे दौड़ने लगी। पहाड़ियों के मध्य मन्द-मन्द प्रकाश का अनुभव करते हुये कुहरे को चीरते वे भूतों के समान अँधेरी रात में तेज़ी के साथ चले जा रहे थे।

तुर्की

# राजकुमारी और मोची

लेखक—'अज्ञात'

गर्मी की ऋतु के अन्तकाल के एक दिन की बात है। अस्ताचलगामी सूर्य की किरणें सुनहरा रूप धारण कर गज़नी शहर पर चमक रही थीं। शहर की मसजिद और चमकती हुई इमारतें बहुत सुन्दर जान पड़ती थीं। शीतल मंद और स्फूर्ति-वर्द्धक वायु निकटवर्ती प्रदेश के पुष्पों की सुगंध से परिपूर्ण होकर उन थके हुये श्रमिकों और भिश्तियों को स्फूर्ति प्रदान कर रही थी, जो कि दिन भर परिश्रम करने के बाद सार्वजनिक फव्वारे के पास बैठ कर विश्राम कर रहे थे। मुअज्जिन की मसजिद में की गई अज़ान की आवाज़ बन्द हो चुकी थी। नमाज़ पढ़ कर सब लोग लौट चुके थे। सर्वत्र शान्ति छाई हुई थी। ऐसा प्रतीत होता था मानो शहर पर किसी जादूगर ने अपनी छड़ी हिला कर जादू कर दिया हो। फलस्वरूप सारे शहर निवासी जैसे विवश होकर निद्रादेवी की गोद में शान्ति का अनुभव कर रहे हों।

आम सड़क की एक दूकान के दरवाज़े के पास पालथी जमाये एक युवक बैठा हुआ था। पूर्वीय देशों में इसी प्रकार बैठने की चाल है। वह हुक्का पी रहा था और उत्सुकता के साथ ग्राहकों की बाट जोह रहा था। उसकी शानदार और सुन्दर मुख-मुद्रा उसके इस नीच कर्म को शोभा नहीं देती थी। सैयद मोची था। लोग मज़ाक में उसे "भाग्यवान" कह कर पुकारा करते थे।

उसकी चित्ताकर्षक मुखाकृति, सुन्दर गठन और शान्त प्रकृति से यही प्रतीत होता था कि वह किसी उत्तम कुल में उत्पन्न हुआ सत्पुरुष है। कालचक्र के प्रभाव से प्रभावित होकर उसने यह नीच पेशा विवश होकर अपनाया है। पूर्व में अचानक और क्रान्तिपूर्ण विद्रोह के फलस्वरूप सदा ऐसे परिवर्तन हुआ करते हैं जब कि राजा रंक और रंक राजा बन जाते हैं। उन्हें अपने जीवकोपार्जन के व्यवसाय में भी परिवर्तन करने की आवश्यकता पड़ जाती है।

सैयद को बाल्यकाल में शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य भी प्राप्त हुआ था। उसके पिता ने उसे कम उमर में गज़नी की एक पाठशाला में दाखिल करा दिया था। उसने वहाँ लिखना-पढना सीख लिया था। पूर्व में लिखना-पढ़ना सीख लेना साधारण बात नहीं थी।

उस दिन शाम के समय—जिसकी हम चर्चा कर रहे हैं—सैयद अपनी दूकान बन्द करने का इरादा कर ही रहा था कि इसी समय उसे अपनी दूकान की तरफ़ एक अजनबी दरवेश आता हुआ दिखलाई पड़ा। दरवेश पास आ गया। उसके सौजन्यपूर्ण स्वरूप को देख कर सैयद ने उसका अभिवादन किया। उसने उससे आग्रहपूर्वक कहा—"लाइये मैं आप के जूते में जो यह छेद हो गया है उसे सुधार दूँ।"

दरवेश ने कहा—"तुझे बहुत-बहुत धन्यवाद है बेटा! ईश्वर ने तुझे उदार हृदय प्रदान किया है। तेरी इस दया के बदले तुझको एक उपाय बतलाऊँगा जिसके द्वारा तू अपने हृदय के अन्दर के छेद को भी सुधार सकेगा।"

सैयद ने अजनबी को आदरपूर्वक दूकान के अन्दर एक आसन पर बिठाया। उसके खाने के लिये उसने खाना परस दिया। खाना खा लेने के बाद वे दोनों आधी रात तक बात-चीत करते बैठे रहे।

"देखो, लोग तुझे सैयद कहते हैं। परन्तु तेरा मन सदा उदास

बना रहता है। तू अपनी इस दरिद्रावस्था से सन्तुष्ट नहीं है। मेरी बात ध्यान से सुन। मैं तुझे इस दशा को सुधारने का उपाय बतलाऊँगा। तू ने जिहाँनुमा और अजाइब मखलूक़ात नामक किताबें पढ़ी हैं। तुमको विदेश के आश्चर्य-जनक दृश्यों को देखने की लालसा ने कभी-कभी उत्साहित और प्रफुल्लित किया है। आलस्य त्याग कर अब उठो। कल अपना यह सब सामान बेच डालो। कल ही से अपना सफ़र शुरू कर दो। संसार के आश्चर्य-जनक दृश्यों को चल कर अपनी आँखों से देखो। मैं तुम्हें कुछ हिदायतें देता हूँ। उनको सदा याद रखना। पहली बात यह है कि कुछ विश्वसनीय साथियों के साथ सफ़र करना, क्योंकि पैगम्बर साहब का कहना है कि 'पहले साथी चुनो, बाद में राह चलो।' दूसरी बात, जहाँ पानी न हो, वहाँ कभी विश्राम मत करो और तीसरी बात यह है कि शाम के वक़्त किसी भी शहर के अन्दर न जाओ।"

दूसरे दिन दरवेश चला गया। सैयद ने अपना सब सामान बेंच डाला। उसने एक सौदागरों के दल के साथ विदेश यात्रा करने का निश्चय कर लिया, जो शीघ्र ही तिजारत करने के लिये दूर-दूर देशों को जाने वाले थे।

सब लोग कई दिनों तक बिना किसी विघ्न-बाधा के यात्रा करते रहे। एक दिन शाम के समय वे सब एक शहर के पास पहुँचे। सौदागर शहर के अन्दर जाने के लिये जल्दी मचाने लगे। वे लोग सोचने लगे कि जितनी जल्द हो सके, शहर के अन्दर पहुँच जाना चाहिये, अन्यथा फाटक बन्द हो जावेंगे और हमको विवश होकर बाहर ही पड़ा रहना पड़ेगा। शहर से कुछ दूर फ़ासले पर ही सैयद को दरवेश की वह हिदायत याद आ गई कि किसी भी शहर के अन्दर शाम को न जाना चाहिये। उसने अपने साथियों से कहा कि मैं रात भर शहर के बाहर रहूँगा। कल सुबह तुम लोगों में आकर शहर में

फिर मिल जाऊँगा। पहले तो उसके साथियों ने उसको साथ न छोड़ने के लिये बहुत समझाया; परन्तु जब उन्होंने देखा कि उसका निश्चय दृढ़ है और इस ओर उनके सब प्रयत्न व्यर्थ होंगे, तब वे उसे नदी के तट पर छोड़ कर शीघ्रतापूर्वक शहर की ओर चले गये।

शीघ्र ही चारों तरफ़ अन्धकार छा गया। रात भयानक सी जान पड़ने लगी। सैयद अकेला बैठा हुआ विचार करने लगा। तारों के धुँधले प्रकाश से काम न चलता था। वह नदी किनारे से उठा। कुछ दूर चल कर शहर के किनारे पहुँच गया। उसे इस बात का पता भी न था कि वह कहाँ चला जा रहा है। चलते-चलते वह एक श्मशान भूमि के निकट पहुँचा। उसके अन्दर जाकर वह बड़ी देर तक कब्रों के आस-पास घूमता रहा।

उसको वहाँ पहुँचे बहुत देर न हुई थी कि एकाएक ज़ोर की आँधी चल पड़ी। कुछ घंटे पहले से आँधी के आसार नज़र आ रहे थे। आँधी ने बड़ा भयंकर और विकराल रूप धारण कर लिया। आसमान में बादलों की भयानक गर्जना सुनाई देने लगी। आँखों को चौंधिया देने वाली बिजली की कड़क दिल में धड़कन पैदा करने लगी। विद्युत प्रकाश में कब्रें प्रकाशित हो उठती थीं। उस समय उनका एक आश्चर्यजनक और भयंकर-सा स्वरूप दिखलाई पड़ता था। आँधी से बचने के लिये सैयद एक छतदार कब्र के नीचे बैठ गया। उसको इस समय दरवेश की सलाह मान कर चलने का दुःख होने लगा।

निदान्, धैर्य का बाँध टूट जाने पर वह क़ब्र से निकल कर बाहर मैदान में आ गया। वह ज्योंही यहाँ आया, उसको यह देखकर बड़ा आश्चर्य हुआ कि दो आदमी शहर की चहारदीवारी पर से कोई चीज़ नीचे उतार रहे हैं। वह एक क़ब्र की आड़ में छिप गया। उसने उन दोनों आदमियों को नीचे आते हुये देखा। वे अपने साथ

जिस चीज़ को लाये थे उसे वे उसी क़ब्र के पास ले गये, जहाँ पर वह अभी तक बैठा रहा था। कुछ देर के बाद वे दोनों आदमी फिर दिखलाई पड़े। वे दोनों सैयद के इतने पास से निकले कि ऐसा प्रतीत होता था कि वे उसे स्पर्श कर रहे हों। फिर वे शीघ्र ही कब्रस्तान से बाहर चले गये।

सैयद उस क़ब्र के पास गया। उसने बत्ती जलाई। दो आदमियों ने जो बोझा वहाँ लाकर डाला था, उस पर कफ़न पड़ा हुआ था, कफ़न के ऊपर ख़ून के दाग़ लगे हुये थे। कफ़न के भीतर से ख़ून निकलता हुआ दिखलाई देता था। सैयद कुछ समय तक घबड़ाया हुआ खड़ा रहा। उसके शरीर के सब अंग शिथिल पड़ गये। उसका चेहरा सूख कर ज़र्द हो गया।

कफ़न हिलने लगा। वह इस दृश्य को देख कर और भी अधिक भयभीत हुआ। वह उसके पास पहुँचा। उत्सुकतावश उसकी घबड़ाहट दूर हो गई। निर्भय होकर उसने कफ़न को हटाया। कफ़न हटाते ही उसके भीतर उसे एक परम सुन्दरी युवती दिखलाई पड़ी। वह बँधी हुई थी। उसके गौरांग सुन्दर शरीर पर कई जगह ख़ून के दाग़ लगे हुये थे। सैयद को ज़रा भी शक न रहा कि युवती मर चुकी है। वह उसके बन्धनों को खोलने लगा। ऊपर के कफ़न को हटाते हुये उसे धीमी आवाज़ में युवती के शव द्वारा कथित कुछ अस्पष्ट शब्द सुनाई पड़े—"क्या तुम्हें ख़ुदा का डर नहीं है! मुझे इस तरह नंगी क्यों कर रहे हो?"

सैयद को निश्चयात्मक रूप से पता चल गया कि युवती मरी नहीं, अभी ज़िन्दा है। उसने उत्तर दिया—"सुन्दरी, क्या तुम्हें दर्द मालूम पड़ रहा है? तुमको इस भयंकर हालत में देख कर मुझे बहुत रंज हो रहा है। मैं तो समझा था कि तुम मर चुकी हो।"

युवती ने ज़ोर से कहा—"क्या तुम मेरी मदद नहीं कर सकते?

अगर तुम से कुछ बन पड़े तो जल्द करो। मैं तुम्हारा ज़िन्दगी भर एहसान मानूँगी। मेरे घावों से इतना ख़ून निकल रहा है कि अगर वह बन्द न हुआ, तो मैं अवश्य मर जाऊँगी।"

सैयद ने अपना एक कपड़ा निकाला। उसे चीर कर उसने युवती के घावों को बाँध दिया।

दूसरे दिन सवेरे सूर्योदय होने पर सैयद उठा। युवती को उठाकर वह शहर के अन्दर गया। जिस समय वह शहर के अन्दर गया, उस समय कोई भी मकान के बाहर न थे। सब लोग अन्दर या तो सो रहे थे या अपने नित्य नैमिक कर्मों में लगे हुये थे। सैयद एक सराय में पहुँचा। उसने एक कमरे में युवती को लिटा कर चौकीदार को बतलाया—"यह मेरी बहिन है। हम दोनों सफ़र करते हुये आ रहे थे। रास्ते में हम पर डाकुओं ने आक्रमण किया। बहिन को ज्यादा चोट आ गई है। मुझ पर तो ख़ुदा ने रहम किया।"

बहुत थोड़े समय के अन्दर युवती के घाव भर आये। एक दिन स्नान करने के बाद युवती ने सैयद को बुला कर उससे दावात-क़लम और काग़ज लाने को कहा। सैयद सब सामान ले आया। युवती ने एक ख़त लिख कर सैयद को दिया। उसने उस ख़त को एक सौदागर के पास ले जाने के लिये कहा। उस सौदागर की हुलिया उसने सैयद को समझा दी।

उसने कहा—"सौदागर तुम्हें जो कुछ भी दे, उसे लेकर तुम मेरे पास आ जाना।"

सैयद खत लेकर बाज़ार गया। उसने युवती के बतलाये मुताबिक़ एक सौदागर को बैठा हुआ पाया। वह ठीक उसी स्थान पर बैठा था जहाँ कि युवती ने बतलाया था। उसकी हुलिया को मिला कर वह समझ गया कि इसी को मुझे ख़त देना चाहिये।

सैयद सौदागर के पास गया। उसे अभिवादन करने के बाद उसने वह ख़त उसको दे दिया।

सौदागर ने ख़त ले लिया। पूर्व की प्रथा के अनुसार उसने ख़त का चुम्बन किया, उसे अपने मस्तक से लगाया और बाद में उसे पढ़ने लगा। पढ़ने के बाद उसने तिजोरी से रुपयों की थैली निकाली। वह थैली उसने सैयद को दे दी। सैयद थैली लेकर युवती के आदेशानुसार सराय की ओर लौटा। वह शीघ्र युवती के पास पहुँच गया।

युवती ने कहा—"इस रुपये से जाकर एक मकान ख़रीद लो। बाक़ी जो रुपये बचें उससे अपने लिये और मेरे लिये कपड़े ख़रीद कर ले आओ। जाओ, इस काम को आज ही कर डालो।"

सैयद युवती की सलाह के मुताबिक़ तुरन्त शहर गया। उसने एक मकान और दोनों के लिये कपड़े ख़रीदे। वे दोनों उसी दिन अपने ख़रीदे हुये मकान में चले गये।

वे अपने नये मकान में रहने लगे। युवती ने फिर एक ख़त लिखा और उसे सैयद को देते हुये कहा—"उसी सौदागर के पास फिर से जाओ और उसे यह ख़त दे आओ।"

सैयद पहले के मुताबिक़ फिर गया। उसने ख़त सौदागर को दे दिया। उसने ख़त पढ़ कर इस समय दो थैलियाँ दीं। सैयद दोनों थैलियाँ लेकर युवती के पास आया।

युवती ने उससे कहा—"जाओ, इन रुपयों से थोड़े कपड़े और ग़ुलाम ख़रीद कर यहाँ ले जाओ।"

सैयद ने युवती के आदेशानुसार सब काम कर डाला। इतना सब हो जाने पर युवती ने एक ख़त और लिखा और सैयद को देकर कहा कि इसे उसी सौदागर के पास दे आओ। सैयद ख़त लेकर सौदागर के पास गया। सौदागर ने इस समय उसे तीन थैलियाँ दीं। इन थैलियों में अशर्फ़ियाँ भरी हुई थीं।

युवती ने कहा—"एक थैली लेकर तुम शहर के अन्दर जाओ। वहाँ तुम्हें एक दूसरा सौदागर मिलेगा। उससे कहना कि तुम अपनी दूकान का सब माल बतलाओ। वह जितनी भी क़ीमत अपने सामान के लिये माँगे, उसे देकर तुम सब माल ख़रीद लेना।"

नवयुवक ने जाकर उस सौदागर का सब माल ख़रीद लिया। उसकी समझ में कुछ भी न आया कि युवती ने ऐसा क्यों किया!

कुछ दिन के बाद युवती ने एक सोने की थैली उसे और दी और कहा कि फलाँ सौदागर का कुछ माल जाकर ख़रीद लाओ। वह जो कुछ भी क़ीमत माँगे, उसे बिना किसी तरह की हुज्जत किये दे देना।

सैयद सौदागर के पास गया! उसने माल देखा। उसे कई प्रकार का माल बतलाया गया। उसने सबसे बेशक़ीमती माल ख़रीद लिया। उससे जितनी भी क़ीमत बतलाई गई, उसे उसने बिना किसी हिचकिचाहट के दे दी।

सौदागर इस ग्राहक को पाकर बहुत ख़ुश हुआ। सौदागर न ग्राहक को दूसरे दिन शाम को अपने यहाँ आमंत्रित किया।

सैयद युवती के पास गया। उसे वहाँ का ब्योरेवार हाल बतलाया।

युवती ने कहा—"कल वहाँ ज़रूर जाओ। इस बात का ख़्याल रखना कि सीधे देखते हुये चलना। अगल बगल में नज़र न डालना।"

दूसरे दिन शाम को सैयद सौदागर के मकान पर गया। सौदागर ने उसका स्वागत किया। उसे भाँति-भाँति के क़ीमती और स्वादिष्ट भोजन खिलाये। दोनों का समय बड़े सुख से बीता। वह बड़ी सावधानी से सदा सामने ही देखता रहा। उसने अगल-बगल कहीं भी अपनी नज़र न डाली।

लौट कर उसने युवती को सारा हाल बतलाया। युवती ने कहा—"कल उसके यहाँ जाना और उसे यहाँ आने का निमन्त्रण दे आना।"

दूसरे दिन सवेरे सैयद सौदागर के यहाँ गया। उसने उसे शाम को अपने यहाँ सायंकाल व्यतीत करने का निमन्त्रण दिया। सौदागर ने उत्तर दिया—"बिसमिल्लाह, मैं ज़रूर आऊँगा।"

नवयुवक ने लौट कर युवती को जो कुछ सौदागर से बात हुई थी, सब बतलाई। युवती ने मकान को अच्छी तरह से सजाया। उसने भाँति-भाँति की शराब, स्वादिष्ट फल और गोश्त को मसाला डाल कर तल कर बनाया। उसने गाने का भी प्रबन्ध किया।

सन्ध्या समय सौदागर इनके घर पर आया। सैयद और वे दोनों आधी रात तक भोजन और शराब खाते-पीते रहे।

अन्त में सौदागर उठा। वह घर जाने के लिये तैयार हुआ। परन्तु युवती ने सैयद को पहले ही समझा दिया था कि सौदागर को जाने न देना। उससे यहीं पर रात व्यतीत करने के लिये आग्रहपूर्वक निवेदन करना। सैयद ने सौदागर से प्रार्थना की कि आज रात भर वह वहीं रहे, कल सुबह घर चला जावे। उसने मुलायम बिस्तर और तकिया बिछवा दिया। सौदागर सैयद के आग्रह को न टाल सका। वह रात को वहीं पर विश्राम करने के लिये रज़ामन्द हो गया। सैयद के पास ही सौदागर बिस्तर पर लेट गया।

आधी रात के समय, जब कि सौदागर गहरी नींद में सो रहा था, युवती कमरे के अन्दर आई। उसके अलंकारों की झनकार सुन कर सैयद उठ कर बैठ गया और उसके कार्यों को सावधानी से देखने लगा। वह सौदागर के पास आई। उस पर झुक कर उसने एक कटार निकाली और फिर सौदागर के हृदय में उसने कटार भोंक दी। एक

अस्पष्ट कराह के साथ सौदागर समाप्त हो गया। अन्त समय न तो वह एक शब्द बोल सका और न ज़रा भी चिल्ला सका।

युवती ने मुड़ कर देखा। सैयद बैठा हुआ जाग रहा था। वह सैयद से बोली—"देखो, अब समय आ गया है कि मैं तुम्हें अपनी आत्म कहानी सुनाऊँ। तुम्हें मेरे इस काम को देख कर आश्चर्य हो रहा होगा युवक! मेरी सारी बातें सुन लो। इसके बाद तुम मेरे कृत्य के अच्छे बुरे का निर्णय कर सकोगे।

"मैं इस शहर के बादशाह की कन्या हूँ। मेरे पुरखों ने इस राज्य पर प्राचीन काल से राज्य किया है। जिस दुष्ट आदमी को तुम सामने मरा हुआ देख रहे हो, वह इसी शहर के एक कसाई का लड़का है।

"एक दिन, जिस समय मैं स्नान करने जा रही थी, मैंने उसे देखा। इसकी ख़ूबसूरती पर मैं मुग्ध हो गई। ऊपर से वह जितना सुन्दर दिखलाई पड़ता था, भीतर से वह उतना ही काला और दुष्ट था। मैं उस से प्रेम करने लगी। शीघ्र ही उसे मेरे इस प्रेम का पता चल गया। हम लोगों के मध्य पत्र-व्यवहार होने लगा। एक दिन वह एक लड़की का भेष धारण कर मेरे पास आया। मैं भी भेष बदल कर हमेशा उसके पास जाने लगी। मैंने उसे रुपया दिया। वह सौदागर बनकर सुखमय जीवन व्यतीत करने लगा। धीरे-धीरे वह शहर में सब से अधिक धनवान् सौदागर हो गया।

"एक दिन मैं अचानक उसके घर गई। बिना कुछ कहे-सुने मैं उसके कमरे के अन्दर चली गई। वहाँ मैंने उसे एक स्त्री के साथ बैठे प्रेमालाप करते हुये पाया। उसकी इस हालत को देख कर मैं आग-बबूला हो गई। मैंने उसके साथ जो कुछ भी उपकार किये थे, उसका उसने इस प्रकार बदला चुकाया! वह उस स्त्री के प्रेमालाप में इतना अधिक लीन था कि कई मिनट तक उसे पता ही न चला

कि मैं यहाँ मौजूद हूँ। मैंने उसकी बेईमानी और दगाबाज़ी के लिये उसको बहुत डाँटा। जिस स्त्री के साथ बैठा वह प्रेमालाप कर रहा था, उसको मैंने बहुत मारा। वह एक शब्द भी न बोला। वह अपने कमरे से बाहर चला गया। शीघ्र ही दो आदमियों को साथ लेकर वह लौटा। उन लोगों ने मुझे पकड़ लिया। कटार से उन्होंने मेरे बदन पर कई वार किये। इसके बाद उन्होंने मुझ पर कफ़न लपेटा। वे समझे कि मैं मर चुकी थी। मुझे दीवार के ज़रिये वे शहर के बाहर ले आये। वहाँ क़ब्रस्तान में ले जाकर उन्होंने मुझे एक कब्र के पास रख दिया। वहाँ खुदा ने तुमको मेरी सहायता के लिये भेजा। अब जल्द उठो। तुम मेरे पिता के पास जाओ। उन्हें मेरे मिल जाने की खुशखबरी सुनाओ। वे तुम्हें ख़ूब इनाम देंगे।"

प्रातःकाल जिस समय राजकुमारी अपने बेईमान प्रेमी के घर पर गई थी, बादशाह को पता चला कि उसकी कन्या घर पर नहीं है। उसने शहर में कन्या को ढुँढ़वाया। शहर के आसपास भी उसकी तलाश की गई; परन्तु सब व्यर्थ हुआ। वह कहीं न मिली। यह जान कर कि वह जान-बूझकर कहीं चली गई है, बादशाह ने यह प्रतिज्ञा की कि यदि वह अब कभी मिल भी जाय, तो उसे दंड देने की गरज़ से वह उसका विवाह मोची के साथ कर देगा।

जिस समय सैयद राज-महल में पहुँचा, वह पहले जाकर वज़ीर से मिला। उसने वज़ीर से राजकुमारी के सम्बन्ध में जो कुछ कहना था, सब कह सुनाया। वज़ीर उसे बादशाह के पास ले गया। बादशाह अपनी पुत्री की कुशलता के समाचार सुन कर बहुत खुश हुआ। उसने नौकरों को उसे तुरंत लाने की आज्ञा दी। उसकी निर्दोषिता का विश्वास हो जाने पर उसने उसकी दोनों आँखों का चुम्बन किया। उसका राज-महल में फिर से आने पर स्वागत किया। उसे अपनी उस प्रतिज्ञा पर

पश्चात्ताप हुआ जिसके अनुसार उसने उसका विवाह मोची के साथ करने का निश्चय किया था।

आनन्द के प्रथम वेग के शान्त हो जाने पर बादशाह के मुख पर उदासी छा गई। उदास होकर वह अकेले भविष्य के कर्त्तव्य पर विचार करने लगा।

वज़ीर ने बादशाह की उदासी का कारण पूछा। बादशाह ने दिल का सब हाल कह सुनाया। वज़ीर ने सुन कर उसे आनन्दित होने के लिये कहा। उसने कहा—"ऐसा जान पड़ता है कि अल्ला की मरज़ी राजकुमारी की शादी मोची ही के साथ करने की थी। आप राजकुमारी का विवाह सैयद के साथ कर दीजिये। वह गज़नी में मोची का ही व्यवसाय करता है।"

यह सुन कर बादशाह की ख़ुशी का ठिकाना न रहा। उसने सैयद के साथ अपनी कन्या का विवाह कर दिया। दहेज में उसे बहुत धन-दौलत दी। फिर उसने उसे अपने राज्य के एक प्रान्त का शासक मुकर्रर कर दिया।

इस प्रकार सैयद बादशाह का दामाद हो गया। दरवेश के प्रति भले बर्ताव तथा उसकी सलाह पर चलने का उसे यह पुरस्कार मिला।

मिश्र

# बदला

लेखक—अज्ञात

काहिरा शहर में मंसूर नामक युवक ने दो बुलबुलें पकड़ीं। उन्हें पिंजड़े में बन्द करके खिड़की के सामने लटका दिया। खलीफ़ा के एक फौजी अफ़सर का ध्यान उनकी मधुर और सुहावनी आवाज़ सुन कर उनकी ओर आकर्षित हुआ। अफ़सर ने उनकी क़ीमत दो-तीन रुपया तक लगा दी। युवक ने जब यह कहा कि वे बिक्री के लिये नहीं हैं, तब उसने धीरे-धीरे उनकी क़ीमत और बढ़ाई। दो दीनार लेकर युवक उन्हें बेचने के लिये तैयार हो गया।

अफ़सर ने कहा—"पिंजड़ा लेकर मेरे साथ चलो। मैं घर जा रहा हूँ। तुमको रास्ता बतलाता चलूँगा।"

मकान पहुँच कर अफ़सर ने दरवाज़ा खटखटाया। दरवाज़ा खुल गया। मंसूर से पिंजड़ा लेकर वह घर के भीतर चला गया। जाते समय उससे यह कह गया कि वह ज़रा देर ठहरे; मूल्य मिल जावेगा। वह बड़ी देर तक बाहर बैठा रहा। अन्त में निराश होकर उसने दरवाज़ा खटखटाया। आवाज़ सुन कर एक सिपाही बाहर आया। उसने मंसूर के आने का कारण पूछा। युवक ने उत्तर दिया

कि अफ़सर ने उससे दो बुलबुलें खरीदी हैं। वह उनकी क़ीमत पाने के इन्तज़ार में यहाँ बड़ी देर से बैठा है।

सिपाही ने कहा—"बेहतर तो यह है कि तुम यहाँ से चले जाओ। जो कुछ भी तुम्हारा नुकसान हुआ है उस पर ध्यान न दो। अगर तुम मेरी सलाह न मानोगे, तो तुम्हें उस आदमी को ऊँट भी दे देना पड़ेगा जिसने उसकी ज़ीन चुरा ली है।"

मंसूर ने पूछा—"तुम्हारे मालिक का क्या नाम है?"

सिपाही ने उत्तर दिया—"आबू शफ़ी। लेकिन आम तौर पर लोग उन्हें इब्न शैतान (शैतान का लड़का) के नाम से जानते हैं।"

मंसूर ने कहा—"खैर, वह शैतान का बाप भी क्यों न हो, उसे पक्षियों का दाम देना होगा। मेरी तरफ़ से उन्हें यह खबर दे दो। हाँ, साथ ही साथ उनसे यह बात भी कह देना कि अगर वे पक्षियों का मूल्य अधिक समझते हैं तो उन्हें लौटा दें। मैं अपने पक्षी वापस ले जाने के लिये तैयार हूँ।"

सिपाही ने कहा—"भाई, मेरी सलाह मानो। इस मामले को यहाँ दफ़ना दो। आगे न बढ़ाओ। ग़ल्ले के गोदाम में आग लगा देने की अपेक्षा थोड़े से गल्ले के नुक़सान को गवारा कर लेना ज़्यादा अच्छा है। तुम अभी इब्न शैतान को जानते नहीं हो। वह काहिरा भर में बड़ा खूँखार और बेरहम आदमी माना जाता है। बिना सिर पर एक बला मोल लिये उसको नाखुश करने की किसी की मज़ाल नहीं है। बाज़ार का कोई भी दूकानदार ग़ुस्से से तनी हुई इस शैतान की मूछों को देखने की अपेक्षा शेर के बाल पकड़ना ज़्यादा आसान समझेगा।"

मंसूर ने कहा—"चाहे कुछ भी हो, मैंने इरादा कर लिया है कि

या तो मैं अपने पक्षी वापस लूँगा या उनकी पूरी क़ीमत लूँगा। तुम उससे जाकर यह बात कह दो। तब तक मैं यहाँ जवाब की इन्तज़ारी में हूँ।"

युवक के अटल निश्चय पर ताज्जुब करता हुआ सिपाही अपने मालिक के कमरे की ओर बढ़ा। मंसूर भी चुपचाप सिपाही के पीछे-पीछे चला। युवक की गुस्ताखी से भरी माँग को सुन कर इब्न शैतान को ग़ुस्सा आ गया। उसने गम्भीर मुद्रा धारण कर ली। कर्कश स्वर से धमकी देते हुये वह बोला—"वह—वह बदतमीज़ और ग़ुस्ताख आदमी कहाँ है? उसे यहाँ लाओ। मैं उसे अभी दुरुस्त किये देता हूँ।"

सिपाही के पीछे से बड़ी तेज़ी से सामने लपक कर मंसूर ने कहा—"लीजिये जनाबमन, मैं हाज़िर हूँ।"

सिपाही उसकी तेज़ आवाज़ को सुन कर चौंक पड़ा।

"मेहरबानी करके, एक घंटा पेश्तर आपने जो दो बुलबुलें खरीदी थीं, उनकी क़ीमत दो दीनार मुझे दे दीजिये।"

क्षण भर के लिये इब्न शैतान भी युवक की दृढ़ता पर दंग हो गया। उसने शीघ्र ही अपने को सम्हालते हुये कहा कि उसको कुछ भी नहीं देना है। अगर वह वहाँ से चला न जावेगा, तो उसको इतने जूते रसीद किये जावेंगे कि उसकी खोपड़ी गंजी पड़ जावेगी। युवक ने इस समय झगड़ना बेवक़ूफी समझा। वह घर से चल दिया। उसने मन ही मन इसका बदला लेने की प्रतिज्ञा कर ली।

× × ×

अफ़सर के घर के पास एक गहरा कुआँ था। वहाँ मुहल्ले की तमाम जवान औरतें रोज़ पानी भरने जाती थीं। लड़की का भेष बना कर एक दिन मंसूर लकड़ी का एक सुन्दर डोल हाथ में लेकर कुएँ की

तरफ़ गया । इब्न शैतान के दिखाई पड़ने तक वहाँ वह धैर्य धारण किये हुये बड़ी देर तक खड़ा रहा । ज्योंही उसने इब्न शैतान को देखा, उसी समय अपना डोल कुएँ के भीतर डाल दिया । इसके बाद हाथ मलता हुआ वह बहुत दुःख प्रदर्शित करने लगा जिससे लोग समझें कि उसका कोई भारी नुकसान हो गया है । उसके दुश्मन का ध्यान आकर्षित हुआ । वह सिद्धान्त-हीन पुरुष तो था ही । फौरन कुएँ के पास आया और उसने युवती को प्रसन्न करने के लिये उसे पूरी मदद करने का भरोसा दिया । वह इस बनी हुई युवती का उपकार कर उसकी कृतज्ञता से कुछ लाभ उठाने की आशा कर रहा था ।

मंसूर ने धीमी-धीमी जनानी आवाज़ में चिल्ला कर कहा—"उफ़ ! मेरी बरबादी हो गई । मेरा कितना बढ़िया नक्काशीदार बर्तन कुएँ में गिर गया ! घर के लोग मेरी जान ले लेंगे ।"

अफ़सर ने नौजवान औरत के साथ हमदर्दी ज़ाहिर करने का बहाना किया । वह कुएँ की जगत पर खड़ा होकर नीचे सिर झुका कर कुएँ के अन्दर झाँकने लगा । वह कुएँ की तरफ़ इतना ज्यादा झुक गया कि ज़रा-सा धक्का लगने से ही वह कुएँ के अन्दर गिर सकता था । उसके पैरों के पास पहुँच कर मंसूर ने उन्हें दोनों हाथों से बड़ी मज़बूती से पकड़ लिया । उसने उसे उस विधवा स्त्री-पुत्र की याद दिलाई जिसके साथ उसने बड़ा ज़बर्दस्त अन्याय किया था । इतना कहने के बाद उसने उसे ज़ोर से कुएँ के अन्दर ढकेल दिया । वह सिर के बल कुएँ के अन्दर गिर पड़ा । यह काण्ड समाप्त करके वह फ़ौरन घर आया । अपनी माँ को साथ लेकर वह शहर के दूसरे मुहल्ले में रहने के लिये चला गया । गिरने से इब्न शैतान को चोट तो बड़ी गहरी आई; परन्तु उसकी जान बच गई । कुएँ में पानी कम था । इसलिये वह डूबने से भी बच गया । वह कुएँ के अन्दर से बड़ी देर तक

मदद के लिये चिल्लाता रहा; परन्तु उसकी आवाज़ किसी ने भी न सुनी। उसका चिल्लाना व्यर्थ गया। कुछ समय के बाद उसे कुएँ पर कुछ औरतों के बोलने की आवाज़ सुनाई दी। अब उसे बचने की आशा होने लगी। पूरी ताक़त लगा कर वह ज़ोर से चिल्लाया। उसने उन औरतो से कहा कि वे उसे कुएँ से निकाल लें। पृथ्वी के अन्दर से अस्पष्ट और धीमी आवाज़ सुन कर औरतें बहुत डरीं। उन्हें ऐसा ख्याल हुआ कि ग़लती से वे जहन्नुम के मुहाने पर पहुँच गई हैं। शैतान का बाप अपनी फ़ौज फाँटे के साथ उन पर जल्द ही हमला करने वाला है। बहुत गहराई से आवाज़ को अभी भी आती हुई सुन कर एक औरत ने हिम्मत के साथ कुएँ पर जाकर पूछा—"तुम्हारा नाम क्या है? तुम शैतान हो या उसके बेटे? अन्दर से इतनी दर्द-नाक आवाज़ क्यों लगा रहे हो? खुदा के नाम पर सब सच-सच बतलाओ।"

आबू शफ़ी ने समझा कि वह स्त्री उसके चलतू नाम का संकेत कर रही है। उसे इस समय किसी भी नाम से पुकारा जावे, इस बात की उसे चिन्ता नहीं थी। किसी भी सूरत से वह कुयें से बाहर निकल कर अपनी जान बचाना चाहता था। उसने जवाब दिया कि वह इब्न शैतान (शैतान का बेटा) है। साथ ही साथ उसने यह भी प्रार्थना की कि डोल नीचे लटका कर उसे बाहर निकाल लिया जावे।

औरत ज़ोर से चिल्ला उठी—"खुदा ख़ैर करे! इसी ज़मीन पर अभी भी काफ़ी शैतान रहते हैं। अगर रसूल ने तुझे ठंढा होने की गरज़ से कुयें में ढकेला है तो क़यामत तक वहीं रहे आओ। लेकिन जहाँ ऐसा बुरा जीव रहता हो, वहाँ का पानी कैसे अच्छा रह सकता है! मैं सब मुहल्ले वालों को ताक़ीद किये देती हूँ कि इस कुयें से कोई पानी न भरे। तेरा सत्यानाश हो!"

अफ़सर अपनी ग़लती समझ गया। उसने औरतों को इस बात के विश्वास दिलाने की बेकार कोशिश की कि वह इबलीस के खानदान का नहीं है। वह तो खलीफ़ा की सेना का एक अफ़सर मात्र है। परन्तु इसका कुछ भी असर न हुआ। इसका उसे जो जवाब मिला वह एक बड़ा पत्थर था। पर वह बेनिशाने फेंका गया था, इसलिये भाग्यवश उसे न लगा। इसके बाद सब औरतें नौ-दो ग्यारह हुईं। भागते हुये वे पीछे देखते जाती थीं कि कहीं शैतान उनका पीछा तो नहीं कर रहा है। इब्न शैतान के कुएँ में गिरने की खबर बहुत जल्द शहर भर में फैल गई। अन्त में कुछ साहसी और बलवान अरब वहाँ आये। उन्होंने इस उलझन का सुलझाना चाहा। सब बात साफ़-साफ़ समझ लेने पर उन्होंने आबू शफ़ी को इस आफ़त से बाहर निकाला। जिस समय वह घर पहुँचाया गया, उस समय वह ज़िन्दा होते हुये भी मुर्दा जैसा दिखलाई देता था।

× × ×

मंसूर समझता था कि उसने दुश्मन को मार डाला। परन्तु जब उसे उसके बच जाने की खबर मिली, तब वह बहुत परेशान हुआ। वह तुरन्त कोई ऐसा उपाय सोचने लगा कि जिसके सहारे वह अपना शुरू किया हुआ कार्य पूरा कर सके। उसको इस बात का पूरा इत-मीनान हो गया कि अगर इब्न शैतान ज़िन्दा बच गया, तो वह बदला लेने की पूरी कोशिश करेगा। फिलहाल डर की कोई बात न थी। बहुत से हकीमों ने अफ़सर का इलाज शुरू कर दिया। वह अपने बिस्तर पर पड़ा-पड़ा कराह रहा था। उसके ज़ख्मों में इतना ज़बर्दस्त दर्द था कि वह उसे सह न सकता था। वह चीखता-चिल्लाता और दर्द के मारे मछली के मानिन्द तड़फड़ाता। उसे रात या दिन कभी नींद न आती। इतने पर भी उसने अपनी मौजूदा आफ़त को उचित दैवी-दण्ड न समझा। वह इस आफ़त से दया करना भी न सीख सका। वह

अधिकाधिक उत्तेजित हो पड़ा। वह पड़े-पड़े, किस तरीक़े से दुश्मन से बदला लेगा, इसी के हवाई क़िले बनाता रहा। जिस समय वह इन उपायों के सम्बन्ध में विचार करता, उसे बहुत कुछ सान्त्वना मिल जाती थी।

एक दिन सुबह वह अपने बिस्तर पर पड़ा जागता हुआ यह विचार कर रहा था कि वह मंसूर को उसकी माँ के दरवाज़े के सामने फाँसी पर लटकायेगा। उसे ऐसा करने में बड़ी ख़ुशी हासिल होगी। इसी समय एक सिपाही ने उसके पास आकर कहा कि एक छोटा-सा सफ़ेद लम्बी दाढ़ी वाला कुबड़ा हकीम सामने सड़क पर यह आवाज़ लगाता जा रहा है कि जो लोग किसी मर्ज़ में मुब्तिला हों, वे उसके दवा के करिश्मे देखें। वह किसी भी मर्ज का शर्तिया इलाज कर देगा। इब्न शैतान की परिस्थिति में पड़े हुये लोग सदा भ्रम में पड़ सकते हैं। उसे इस बदशकल हकीम पर अचानक इतमीनान हो गया। वह सोचने लगा कि अक्सर खुदा बदशकल लोगों को ही ऊँचे हुनर सिखाता है। उसने हकीम को बुलाया। उसके अन्दर आने के पहले ही उसे भरोसा हो गया कि आज वह अच्छा हो गया।

शीघ्र ही हकीम सिपाही के पीछे-पीछे अन्दर आया। वह मरीज़ के बिस्तर के पास जाकर प्रसन्न चित्त से उससे पूछने लगा कि उसे किस बात की तकलीफ़ है। इब्न शैतान ने अपनी पूरी दास्तान उसे कह सुनाई। उसने ख़ास तौर पर उसको यह बतलाया कि धतूरा खाने से उसे कुछ थोड़ी-सी नींद ज़रूर लग जाती है, लेकिन भयंकर सपने उसको ज्यादा देर सोने नहीं देते। वह फौरन चौंक कर जाग उठना है। यह सुन कर हकीम मुस्कराया। जब उसकी दास्तान ख़तम हो चुकी तब उसने कहा कि अगर वह उसके कहने के मुताबिक चलेगा और जो दवाइयाँ वह देगा, उन्हें विश्वास के साथ बिना किसी हिचकिचाहट के खायगा, तो वह बहुत जल्द अच्छा हो जावेगा। इब्न हमदर्दी

से भरे हुये उद्गारों को सुन कर वह बहुत ख़ुश हुआ। इब्न शैतान ने उसकी हिदायतों के अनुसार चलने का वायदा किया। कुबड़े हकीम पर उसका इतना विश्वास जम गया कि बिना कुछ दवाई खाये-पिये ही उसे बहुत आराम मालूम होने लगा।

मरीज़ का विंश्वास अपने ऊपर पूरा-पूरा जमा कर हकीम ने नौकरों को दवाई लाने के लिये इधर-उधर रवाना कर दिया। जब वे सब बाहर चले गये तब वह चमचमाती हुई आँखों से मरीज़ के पास पहुँच कर कहने लगा—

"इब्न शैतान, मेरे पास दो दवाइयाँ हैं। दोनों बहुत क़ीमती हैं। उन दोनों की तासीर बिलकुल अलग-अलग है। तुम्हारा कहना है कि एसमे का लड़का मंसूर तुम्हारा दुश्मन है। इस वक्त भी क़ब्र पर एक पैर लटकाये हुये तुम्हारे दिल में बदला लेने की हविश बकाया है। इस बात को अच्छी तरह समझ लो कि अल्लाह बेरहम लोगों पर कभी रहम नहीं करता। उनके दिल के अन्दर जब इतनी ज़बर्दस्त बीमारी आती है, तब उन्हें कोई भी इन्सानी दवा चंगा नहीं कर सकती। इसलिये दुश्मन को माफ़ कर दो। इससे तुम्हारा भला होगा। मुझसे इस बात का वायदा करो कि तुम अपने नौजवान दुश्मन से कभी बदला न लोगे। उसके बदले में मैं तुम्हें फौरन अच्छा करता हूँ। मैं तुम्हें पश्चात्ताप की यह पहली दवाई देता हूँ। क्या तुम इसे पियोगे?"

"नहीं, नहीं, हकीम!" मरीज़ ने जवाब दिया। वह बुड्ढे आदमी की बातचीत के तर्ज़ो तरीक़े को देख कर पहले तो कुछ डरा फिर उसने उसकी सलाह न मानने का पक्का इरादा कर लिया। "नहीं, इस बात के लिये ज़ोर न दो। तुम अपना इलाज का काम करो। अल्लाह की कसम, मैं उसे कभी माफ़ नहीं कर सकता। जब तक वह और उसकी माँ मेरे इन क़दमों से कुचले नहीं जाते, तब तक मुझे ज़रा

भी तसल्ली नहीं हो सकती। सिर्फ़ इसी ख्याल से मैं ज़िन्दा रहना चाहता हूँ।"

अपने कपड़ों को उतार कर फेंकता हुआ और उसका गला पकड़ता हुआ मंसूर बहुत ज़ोर से चिल्लाया—"गुलाम, कुत्ते, काफिर, अगर तूने इस वक्त रहम का वायदा किया होता, तो मैं भी तुझे बचा देता। लेकिन तुझे बदला लेने की धुन सवार है। तू मुझे और मेरी माँ को भी मारना चाहता है, जिन्होंने तेरा कुछ नहीं बिगाड़ा। इसलिये मैं तुझे यह दूसरी दवाई देता हूँ, जो मैंने तेरे लिये तैयार की थी।"

ऐसा कहते हुये उसने उसकी छाती में एक कटार भोंक दी। उसका खात्मा कर वह मकान से बाहर निकल भागा।

## ईरान

# पहली उमंग

लेखक—अज्ञात

तूरिरी बग़दाद का एक धनवान निवासी था। वह अपने सद्‌गुणों के कारण सब जगह मशहूर था। वह गरीबों की अधिकाधिक सहायता ही न करता था जिससे कि उसके विलासी जीवन व्यतीत करने की सम्भावना कम हो जाय और वह सादा जीवन व्यतीत कर सके, बल्कि उसके पास जो भी दीन-दुखिया आते, वह उनकी विपत्ति की गाथा धीरज और नम्रता के साथ सुनता, उन्हें मीठे-मीठे शब्दों द्वारा सान्त्वना देता और उनकी यथाशक्ति सहायता करता।

वह मानव जीवन की उन छोटी-छोटी हज़ारों आपत्तियों को हर्ष-पूर्वक सहन करता, जो प्रत्येक मनुष्य को अपने जीवन में सहन करनी पड़ती हैं। वह बहुत सहनशील था। लोगों के भिन्न-भिन्न मत देख कर उसे ज़रा भी क्रोध न आता। यह गुण बड़ा कठिन है और विरले आदमियों में ही पाया जाता है, क्योंकि प्रत्येक मनुष्य अपने मन में सारे संसार के मनुष्यों को अपने से छोटा समझता है। साथ-साथ वह यह भी समझता है कि सब उसी जैसे हैं।

उसका विवाह एक दुष्ट प्रकृति की स्त्री के साथ हुआ था। परन्तु वह उससे कभी विमुख नहीं हुआ और उसके दुर्गुणों को क्षमा करता रहा। उसने स्त्री को कभी न अनुभव करने दिया कि वह जवान और खूबसूरत नहीं है। वह लेखक और कवि था, इसलिये अपने प्रतिद्वन्द्वियों

की विजय पर आनन्दित होता और उन सब से प्रेमपूर्ण मैत्री भाव प्रदर्शित करता।

सारांश में उसका समस्त जीवन दया, नम्रता, भक्ति और संतोष से ओत-प्रोत था। वह महात्मा और भद्र पुरुष समझा जाता।

पर उसकी मुखाकृति पर महात्माओं का सा गांभीर्य नज़र न आता था। उसको देख कर यही जान पड़ता कि यह मनुष्य भयंकर भोग-विलासी और क्रोधी है। कभी-कभी वह अपनी आँखें इसलिये बन्द कर लेता जिससे कि लोग उसके मन के अन्दर के विचारों को भाँप न सकें; परन्तु इस ओर किसी ने कभी ध्यान न दिया।

बग़दाद के पास मैत्रेय नामक एक साधु रहता था। उसमें बड़े-बड़े चमत्कार दिखलाने की शक्ति थी। उसकी पूजा करने के लिये दूर-दूर से यात्री उसके पास आते। मैत्रेय समाधि में अचल रहता था। उसने अपनी प्रकृति को साधारण मनुष्यों की प्रकृति से अलग बना लिया था। पक्षियों ने उसके कंधों पर घोंसले बना रखे थे। उसकी दाढ़ी गाय की पूँछ जैसी हो गई थी और उसकी कमर तक लटकती थी। उसका शरीर वृक्ष के सूखे तने के समान दिखलाई पड़ता था। वह इस प्रकार लग-भग नब्बे वर्ष तक रहा। उसने जीवन व्यतीत करने का अपना ऐसा ही सिद्धान्त बना लिया था।

एक दिन उसने एक यात्री को यह कहते हुये सुना—

"तूरिरी आरमुज़्द का अवतार मालूम पड़ता है। उसकी बहुत नेक तबियत है। यदि ऐसे मनुष्य को अपनी इच्छा के मुताबिक सब काम करने की ताक़त मिल जावे, तो इसमें ज़रा भी शक नहीं है कि संसार की समस्त आपत्तियाँ मिट जावेंगी।"

मैत्रेय की मुख मुद्रा और अधिक गम्भीर हो गई। ऐसा जान पड़ने लगा कि वह मन ही मन आरमुज़्द के समीप पहुँच गया है। कुछ क्षण विचार करने के बाद उसने यात्री से कहा—

"मैं तूरिरी को आरमुज़्द से वह शक्ति नहीं दिला सकता जिसके द्वारा वह अपनी सब इच्छाओं को पूरी कर सके। काश, ऐसा हो जावे तो वह देवता बन जावेगा। लेकिन आरमुज़्द दया भाव से द्रवित होकर केवल इस बात को स्वीकार करता है कि उस महात्मा के जीवन की पहली उमंग का आदर किया जावेगा। कल से वह जो प्रथम बार इच्छा करेगा वह पूर्ण होगी।"

यात्री ने कहा—"एक ही बात है। अन्यान्य इच्छाओं के समान तूरिरी की पहली उमंग अथवा इच्छा उदार और परमार्थ-पूर्ण रहेगी। पूज्य मैत्रेय, आपने मुझको एक ऐसी बात बतलाई है जिससे मानव समाज का कल्याण होगा। मैं आपको इसके लिये धन्यवाद देता हूँ।"

अगर मैत्रेय की दाढ़ी कम घनी होती, तो यात्री उसके मुख पर की मृदु मुस्कान अवश्य देख पाता; परन्तु इसके बाद शीघ्र ही साधु आँखें बन्द कर अपने ध्यान में लीन हो गया।

यात्री शहर को लौट चला। वह मन ही मन इस बात पर प्रसन्न हो रहा था कि कल तूरिरी को वह शक्ति मिलेगी जिसके द्वारा वह बड़े परमार्थ के काम कर सकेगा। कल उसके चमत्कारों का प्रदर्शन होगा। उसकी शक्ति को देख कर लोग दंग हो जावेंगे।

दूसरे दिन तूरिरी अपनी स्त्री से पहले जागा। वह अपनी स्त्री की ओर कुछ समय तक देखता रहा। गुप्त शक्ति द्वारा प्रेरित होकर वह अचानक उठ बैठी,—उठ कर खिड़की के पास गई, खिड़की की चौखट से कूद कर बाहर आई और उसने अपना सिर फ़र्श के पत्थरों पर पटक कर फोड़ डाला।

वह घर से बाहर निकला। रास्ते में उसे भिखमंगों का एक समूह मिला। वे सब उससे भीख माँगने लगे। वह उनसे एक भी कठोर

शब्द न बोला। ज्योंही उसका हाथ जेब के अन्दर गया, सब भिखारी उसके पैर के पास गिर कर मर गये।

कुछ आगे चलने पर उसे मन्दाकिनी नामक एक सुन्दरी मिली। विद्वान् और गुणवान तूरिरी ने उसे अभिवादन किया। वह उसके पीछे-पीछे उसके घर गया। वहाँ वह उसे अपने जीवन की कहानी सुनाने लगी। जिस समय वह अपनी जीवन-गाथा सुना रही थी, उसी समय वह काल के गाल में समा गई। तूरिरी उसका कोमल हाथ पकड़े और उसे छाती से लगाये यह सब दृश्य देखता रहा।

मन्दाकिनी के मकान से निकल कर जब वह आगे बढ़ा, तो उसे मार्ग में बहुत सी गाड़ियाँ खड़ी हुई मिलीं। वे बिगड़ गई थीं। आगे चल ही न सकती थीं। तूरिरी धैर्य धारण न कर सका। उसे क्रोध आ गया। सब गाड़ीवान और घोड़े ज़मीन पर गिर कर मर गये। ऐसा प्रतीत होने लगा कि किसी अदृश्य शक्ति ने घोड़ों के अंग-अंग को काट डाला हो।

शाम के समय वह नाटक देखने गया। वहाँ उससे सरविलाका नामक एक विद्वान् से एक कविता के सम्बन्ध में वाद-विवाद छिड़ गया। सरविलाका कहता था कि यह निजामी की बनायी हुई है और तूरिरी को पूरा विश्वास था कि वह महाकवि सादी की बनायी हुई है। अचानक वह विद्वान् ज़मीन पर गिर पड़ा। उसने काले खून की एक क़ै की और तत्काल ही इस दुनिया को छोड़ कर चला गया। उस रात को जो नाटक खेला गया था उसका अन्त आनन्दप्रद था। उसमें बड़ी सफलता मिली। दर्शकों ने तालियाँ बजा कर और हृदयोल्लास द्वारा पात्रों की प्रशंसा की। तूरिरी ने भी जब नाटककार को बधाई देने में योग देने का निश्चय किया, तो उसी समय अचानक नाटककार काल की गोद में सर्वदा के लिये सो गया।

इस क़त्ले आम से घबड़ा कर तूरिरी घर लौटा। वह बहुत उदास

हुआ। वह कुछ भी न समझ पाया कि वह सब घटना क्यों कर घटी। उसने अपनी छाती में एक कटार मार कर अपने जीवन का भी अन्त कर डाला।

साधु मैत्रेय भी इसी प्रकार रात को मर गया।

दोनों एक ही साथ आरमुज़्द के सामने आये। साधु सोच रहा था—

"ऐसे बने हुये साधु को अगर कड़ी सज़ा दी जायगी, तो मुझे बड़ी प्रसन्नता होगी। उसके गुणों पर ईरान निवासी मुग्ध थे। सदा उसकी प्रशंसा करते रहते। सबको उसने बेवकूफ़ बनाया। एक दिन उसे शक्ति प्रदान की गई। वह इस समय अपने सद्‌गुणों का प्रदर्शन कर सकता था। उसने एक ही दिन में असंख्य पाप और हत्यायें करके उनका बोझ अपने सिर पर लाद लिया।"

परन्तु बुद्धिमान आरमुज्द ने कहा—"सद्‌गुणी तूरिरी, तू सचमुच भला और दयालु मनुष्य है। तू मेरा विश्वसनीय और ईमानदार सेवक है। आ सदा के लिये इस शान्ति-निकेतन में निवास कर।"

साधु ने कहा—"सचमुच, यह बड़ी मज़ेदार दिल्लगी है।"

आरमुज्द ने उत्तर दिया—"मैं अपने जीवन में सबसे अधिक गम्भीर कभी नहीं हुआ। तूरिरी, तूने अपनी स्त्री का नाश इसलिये चाहा कि वह दयालु और रूपवती न थी। तूने भिखारियों की मृत्यु इसलिये चाही कि वे तुझे तंग कर रहे थे और भयानक भाव-भंगी धारण किये हुये थे। तूने अपनी प्रेयसी की मृत्यु इसलिये चाही कि वह बेवकूफ़ थी। तूने गाड़ीवान और घोड़ों की मृत्यु इसलिये चाही कि उन्होंने तुझे उस वक्त रास्ते पर रुकने के लिये मज़बूर किया, जब तुझे जाने की जल्दी पड़ी थी। तूने विद्वान् सरविलका की मृत्यु इसलिये चाही कि उसका मन तुझसे भिन्न था। तू ने उस सुखान्त नाटक के लेखक की मृत्यु इसलिये चाही कि उसे तेरी अपेक्षा अधिक सफलता मिली।

तेरी सारी इच्छायें बिलकुल स्वभाविक थीं। जिन हत्याओं के लिये मैत्रेय तेरी निन्दा कर रहा है, वे सब बिना तेरे जाने-बूझे हुई हैं। यह सब तेरी पहली उमङ्ग का परिणाम था। किसी भी मनुष्य में शक्ति नहीं है कि वह अपनी पहली उमङ्ग को दबा सके। मनुष्य स्वभाव से ही उस बात को घृणा की दृष्टि से देखता है जो उसके सामने रोड़ा अटकाती है; और जिस वस्तु से वह घृणा करता है, उसका अवश्य-मेव नाश ही चाहता है। प्रकृति स्वार्थपूर्ण है, और स्वार्थ का नाम ही नाश है। सब से श्रेष्ठ सद्‌गुणी पुरुष भी मन ही मन में पहले-पहल प्रथम कोटि का धूर्त्त बन कर ही प्रारम्भ करता है। यदि उसकी पहली उमङ्ग पूरी की जावे, तब तो यह धरती मानव-प्राणी-विहीन एक रेगिस्तान में परिवर्तित हो जावेगी, इसमें ज़रा भी शक नहीं। तूरिरी यही मैं तेरे उदाहरण द्वारा बतलाना चाहता था। मनुष्य की परीक्षा उसकी दूसरी उमङ्ग से की जाती है, क्योंकि वह उसकी इच्छा-शक्ति पर निर्भर रहती है। यदि तुझे गुप्त-शक्ति प्रदान की जाती जिसकी तुझे ज़रा भी खबर नहीं थी, तो तेरा जीवन सदा धार्मिक और परोपकारी बना रहता, जो तेरी इच्छा के बिना ही एक दिन खूँखार बन गया। मुझे तेरी प्रकृति को नहीं देखना है वरन् तेरी इच्छा-शक्ति को देखना है, जो सदा भली थी और हमेशा तेरी प्रकृति को सुधारा करती थी और इस प्रकार मेरे अपूर्ण कार्य को पूर्ण किया करती थी। और यही कारण है कि मेरे प्यारे सहयोगी, मैं तेरे लिये बैकुण्ठ के दर-वाज़े खोल रहा हूँ।"

मैत्रेय बोला—"क्या खूब! और आप मेरे बारे में क्या करने जा रहे हैं? मेरे भाग्य में क्या लिखा है?"

आरमुज्द ने जवाब दिया—"यही तेरे लिये भी है, यद्यपि तू इसे भलीभाँति पाने का अधिकारी नहीं है। तू साधु था; परन्तु तुझ में घमण्ड के अतिरिक्त मानवता का नाम न रह गया था। तूने अपनी

पहला उमग को दबाने में सफलता प्राप्त की। यदि सभी आदमी तेरे समान हो जायँ, तो समस्त पृथ्वी मंडल के मानव प्राणी बहुत शीघ्र नष्ट हो जावेंगे। विनाश इतनी तेज़ी से होगा कि उसकी तुलना उस नाश द्वारा नहीं की जा सकती, जो मेरे एक ईमानदार सेवक द्वारा एक दिन हुआ और जिसका तुझे इतना दुःख हुआ। अगर सब आदमियों को भी ऐसी शक्ति प्रदान कर दी जावे, तो भी उनसे उतना नाश नहीं हो सकता जितना कि तेरे समान जीवन व्यतीत करने से हो सकता है। मेरी इच्छा है कि संसार कुशल-पूर्वक रहे, क्योंकि उससे मेरा मनोरंजन होता है। उसके कुछ भव्य दृश्य देख कर मुझे बड़ा आनन्द प्राप्त होता है। ऐ दुःखी साधु तेरे प्रयत्न भी सुन्दर और सराहनीय थे। मैं तुझे तेरी भयंकर भूलों के लिये क्षमा प्रदान करता हूँ। अन्त में तूरिरी के लिये मैं बैकुण्ठ के दरवाज़े खोलता हूँ। उसे हृदय से लगा कर उसका स्वागत करता हूँ, क्योंकि मैं न्यायी हूँ। मैत्रेय, तुझे भी बैकुण्ठ में प्रवेश करने की आज्ञा देता हूँ, क्योंकि मैं दयालु हूँ।"

मैत्रेय ने कहा—"परन्तु—"

आरमुज्द ने गम्भीर मुद्रा धारण करते हुये कहा—"बस, मैं कह चुका।"

रूस

# मिशा

लेखक—यूजेन चिरकोव

मिशा ने चुप्पी साध ली। उसकी ज़रा भी बोलने की इच्छा न होती थी। जिस समय उसे खाना खाने के लिये बुलाया गया, उसने साफ़ तौर पर खाना खाने से इन्कार कर दिया। उसने कहा—"मैं कुछ भी न खाऊँगा।"

जिस समय उसे चाय पीने के लिये बुलाया गया, उस समय उसने बड़ी दृढ़ता के साथ शान्तिपूर्वक उत्तर दिया—

"आप लोग आनन्दपूर्वक चाय, क़ाफ़ी अथवा जो चाहें पीजिये। मुझे क्षमा कीजिये। मुझे क़िसी भी चीज़ की ज़रूरत नहीं।"

इस उत्तर को सुन कर मिशा की बड़ी बहिन बड़े ज़ोर से खिल-खिलाकर हँस पड़ी। वह कहने लगी—

"क्या तुम समझते हो कि तुम्हारे न खाने-पीने की हमें कुछ परवाह है? यदि तुम चाहो तो खाना-पीना बिलकुल छोड़ दो। हमको उसकी तनिक भी परवाह नहीं है।"

यह कह कर वह बड़ी तेजी के साथ आनन्द-पूर्वक दरवाज़े के बाहर चली गई। बहिन के इस विचित्र व्यवहार और शीघ्रतापूर्वक यहाँ से जाने में भी मिशा को अपने प्रति सहानुभूति की एक सुन्दर झलक दिखलाई पड़ी। वह इस बात के विश्वास दिलाने का प्रयत्न कर रही थी कि उसके चाय और भोजन के त्याग देने की माता-पिता

उसके पिता ने पुकारा—"माइकेल !"

माइकेल कुछ न बोला। चुप रहा। उसके पिता ने दोबारा पुकारा।

मासिक-पत्रिका पर सिर झुकाये हुये मिशा ने रूखेपन के साथ उत्तर दिया—"क्या काम है ?"

"ग़ुस्सा शान्त हुई या नहीं ? यहाँ आओ।"

"मैं तो ज़रा भी नाराज़ नहीं हूँ। मैं पढ़ रहा हूँ। मोची भी कहीं खाना खाते हैं !"

पिता ने कहा—"बेवकूफ़ कहीं का !"

"अच्छा तो मैं बेवकूफ़ ही सही।"—मिशा ने उत्तेजित होकर उच्च स्वर में कहा। उसने धीरे से यह भी कहा—"आपको बेवकूफ़ के साथ सिर खपाने की क्या ज़रूरत है ?"

बहिन ने ज़ोर से कहा—"वह नाराज़ हो गया है।"

मिशा गुनगुनाया। बहिन के इस व्यवहार से उसके प्रति उसे घृणा उत्पन्न हो गई। वह बदला लेने के लिये उतावला हो गया। यदि उसके पिता वहाँ उपस्थित न होते, तो वह उसके इस दुर्व्यवहार का पुरस्कार अवश्य देता। उसकी राय किसी ने न पूछी थी। उसके बीच में बोलने की क्या आवश्यकता थी ? कुपित मुद्रा में उसने कहा—"चुप रह, बेवकूफ़ !" ऐसा कहते हुये उसने मासिक-पत्रिका टेबिल पर फेंक दी। इसके बाद उसने जेब से तलाश करके एक पेन्सिल निकाली उसने एक चित्र निकाला। उस चित्र में एक नवयुवक बेञ्च के नीचे बैठा हुआ था और एक युवती उसके पास खड़ी हुई थी। चित्र में यह भाव प्रदर्शित किया गया था कि वह बेञ्च के नीचे उसका नाम लिख रहा था। बेञ्च के ऊपर सर्वत्र उसका नाम लिखा जा चुका था। उसने इसी चित्र के नीचे लिखा—"ये नीना और वोलोडका पेतुशकोव, दोनों महान् मूर्ख हैं।" उसने मासिक-पत्रिका के इस पृष्ठ को इस उद्देश्य से

खुला रख दिया जिससे उसे सब कोई देख सके। इसके बाद वह अपने कमरे में चला गया। टेबिल पर नीना का टोप देख कर उसे क्रोध चढ़ आया। उसने उठा कर उसे फ़र्श पर फेंक दिया।

"मैं ऐसी गन्दी चीज़ अपनी टेबिल पर नहीं रखना चाहता।" इस प्रकार वह ज़ोर से चिल्लाने लगा। यद्यपि कमरे में उसे छोड़कर उसकी बात सुनने के लिये वहाँ और दूसरा कोई भी न था। मिशा को यह प्रतीत होने लगा कि सब लोग उसके दुश्मन हो गये हैं। उसको ऐसा भास होने लगा कि घर दो विरोधी दलों में विभक्त हो गया है। एक दल में अकेला मिशा है और दूसरे दल में घर के सब लोग सम्मिलित हैं। इस भाव की उत्तुंग तरल तरंगों में जिस समय वह गोते लगा रहा था, उसी समय नौकरानी ने उसके कमरे में आकर उसे पुकारा—"माइकेल विलिच !"

मिशा ने उत्तेजित स्वर में कहा—"हट जाओ यहाँ से।"

नौकरानी ने इस असद् व्यवहार का ध्यान न रखते हुए कहा—"तुमसे मिलने के लिये एक सज्जन आये हुये हैं।"

मिशा ने अधिक उग्रता धारण करते हुये फिर कहा—"मैं कहता हूँ कि तुम यहाँ से हट जाओ।"

नौकरानी ने जाते-जाते कहा—"आज तुमने खाना नहीं खाया है इसीलिये इतना बिगड़ रहे हो।"

मिशा इस बात को भली-भाँति जानता था कि नौकरानी उसके पास भेजी गई है। उसको नौकरानी के प्रति किये गये अपने असद् व्यवहार पर दुःख हुआ। उसकी इच्छा उससे क्षमा-याचना करने की हुई परन्तु वह दूध पीता बच्चा तो था नहीं, इसलिये स्वाभिमान ने उसे आगे क़दम बढ़ाने से ज़बरन रोक दिया। वह सोचने लगा—घर के सब लोग मेरे लिये परेशान हैं। रहें, इसकी उसे क्या चिन्ता? परन्तु इस समय उसे कड़ाके की भूख लग गई। वह सोचने लगा कि रसोई

घर में चल कर खाना खाना चाहिये या नहीं। दो विरोधी भावों का बड़ी देर तक तुमुल युद्ध होता रहा। अन्त में उसके विवेक ने यह निर्णय किया कि रसोई घर जाकर खाना खाना कदापि उचित नहीं। यदि वह खाना खायेगा, तो रसोइया नौकरानी को ज़रूर बतलायेगा। नौकरानी इस बात को सुन कर तुरन्त ही माता और पिता को बतला देगी। इस बात को सुन कर वे भी प्रसन्न होंगे।

उसने सोचा कि इस समय तो भूख बर्दाश्त करना ही उचित प्रतीत होता है। यदि उसके पिता अथवा माता कोई भी उसके पास आयँ और उससे कहें—"मिशा नाराज़ न हो। यह तुम जानते ही हो कि खाना-पीना छोड़ने से तुम बीमार पड़ जाओगे। तुम्हारे बीमार पड़ने से हमको बड़ा क्लेश होगा। जो कुछ भी हुआ, उसका हमें दुःख है। अब ऐसा आगे कभी न होगा।" ऐसी परिस्थिति में मिशा मान सकता है। वह फ़ौरन रसोई घर में जाकर खाना भी खा सकता है। उन लोगों ने खाने के लिये यहाँ कुछ भिजवाया अवश्य है। आज चुकन्दर का रसा बना है। मिशा ने रसा के ऊपर का लुआब पी लिया और दरवाज़े के पास जाकर माता के पैरों की आवाज़ सुनने लगा। उसे पिता के आने की तो आशा थी नहीं। उसे विश्वास था कि माता उसके पास अवश्य आयगी और उसे ज़रूर मनायेगी। वह समस्त घटना पर दुःख प्रदर्शित करेगी और इस प्रकार विजय की माला मेरे गले में ही पड़ेगी।

परन्तु माता भी न आई। उसे भूख सताने लगी। माता के बजाय उस दरवाजे पर कुत्ता फाल्स्टाफ़ आता हुआ दिखाई पड़ा। धीरे-धीरे वह कमरे के अन्दर आया। मिशा को सूँघ कर और पूँछ हिलाकर मानो वह उसको प्रसन्न और शान्त करने की चेष्टा करने लगा। फाल्स्टाफ़ उसके पिता का बड़ा दुलारा कुत्ता था। वह पिता के अध्ययन के कमरे की लिखने वाली टेबिल के नीचे सदा बैठता है। वह यहाँ क्यों

आया ? वह अपने मालिक के पास जावे और वहाँ अपनी दुम हिलावे। उसने इतना अधिक खा लिया है कि उसके पेट के फट जाने की सम्भावना प्रतीत होती है।

कुपित होकर और कुत्ते को एक लात मारते हुये मिशा ने कहा—"यहाँ से बाहर चले जाओ!" आघात पाकर दर्द के कारण वह कुछ गुर्राया। इसके पश्चात् अपमानित होने पर भी उसने अपनी दुम दबाई और बाहर का रास्ता नापा। मिशा की भूख बढ़ने लगी।

बड़ी देर तक वह अपने बायें हाथ की अँगुलियों को चूसता रहा। साथ ही साथ अपनी वर्तमान परिस्थिति पर विचार भी करता रहा। अन्त में उसे एक उत्तम युक्ति सूझी जिससे उसका काम भी चल जायगा और शत्रुओं के समक्ष नतमस्तक भी न होना पड़ेगा। उसके सहपाठी इवानोन ने एक समय अपने भाई की बीजगणित की पुस्तक बेच कर उसके मूल्य से एक चाकू ख़रीदा था।

मिशा भी इसी प्रकार अपनी पुरानी पुस्तकें बेच कर कुछ पैसे प्राप्त कर सकता है। इसके बाद वह दूध वाले की दूकान पर जा सकता है। यहाँ घर के सब लोग उसके लिये परेशान हुआ करें। इसकी उसे ज़रा भी चिन्ता नहीं। झगड़े का बीजारोपण तो उसी तरफ़ से हुआ है। अपराध भी उन्हीं का है। ऐसा करने पर ही ये लोग रास्ते पर आवेंगे। भविष्य में उनका व्यवहार इससे कहीं अधिक अच्छा हो जावेगा।

मिशा ने अपनी पुस्तकों में से ढूँढ़ कर एक पतली पुस्तक निकाली—'मुझे इसकी आवश्यकता तो पड़ेगी परन्तु अभी नहीं, कुछ समय के पश्चात्। उस समय तक इन लोगों को इस बात का ध्यान न रहेगा कि मेरे पास यह पुस्तक थी। तब मेरे लिये नई पुस्तक खरीद ली जावेगी।' इस प्रकार विचारते हुये मिशा ने उस पुस्तक के बेच डालने का निश्चय कर लिया।

वह रसोईघर में नहीं जाना चाहता था, क्योंकि वहाँ सब लोग बैठे होंगे। उसको वहाँ देख कर वे सब सोचेंगे कि वह खाना खाने के लिये किसी बहाने से यहाँ आया है। वह इस प्रकार की भावना उत्पन्न होने का कभी भी अवसर न देगा। उसने द्वार मार्ग से न जाना ही उचित समझा।

वह खिड़की से बाहर कूद पड़ा। उसने पुस्तक को छाती पर छिपा लिया। वह बाज़ार की ओर चल पड़ा। सायंकाल सन्निकट आ रहा था। विलम्ब होने से दूकानों के बन्द हो जाने की आशंका थी। इस लिये शीघ्रता करने की आवश्यकता थी। मिशा द्रुतवेग से चला। अर्द्ध-निर्मित मकानों के बीच से वह एक पगडण्डी से चला। इस मार्ग द्वारा उसके शीघ्र पहुँचने की सम्भावना थी। उसका परिणाम यह हुआ कि उसके जूते में एक ज़बर्दस्त छेद हो गया। यदि यह घटना किसी भी अन्य समय घटी होती, तो इससे उसको महान् दुःख होता। जूते नये थे। खरीदते समय उसको खास तौर पर हिदायत की गई थी कि उनकी पूरी हिफाज़त की जाये। इस समय उसे इस हिदायत की ज़रा भी चिन्ता नहीं थी। झक मार कर नये जूते ख़रीदने पड़ेंगे। ये लोग यह तो अवश्य कहेंगे कि चमारों की तरह नंगे पैर चलो। परन्तु उसको यह बात भी भली भाँति मालूम है कि वे जूते अवश्य ख़रीदेंगे। एक वकील के पुत्र को फटे जूते पहिने हुये देखना उनके लिये काफ़ी अपमानजनक होगा। इसलिये इस विषय में चिन्ता करने की आवश्यकता नहीं। वे लोग जूते ज़रूर ख़रीद देंगे। इस प्रकार विचार करते हुये उसने देखा कि वह बाज़ार पहुँच गया है। वहाँ बड़ी चहल-पहल थी और सुहावना प्रतीत होता था। चारों तरफ़ शोरग़ुल सुनाई पड़ता था। कहीं-कहीं लोग आपस में झगड़ रहे थे। अशान्ति सर्वत्र विराजमान थी।

एक देहाती ने जिसका मुँह चौड़ा, नाक चपटी और वस्त्र गन्दे

थे, ज़ोर से आवाज़ लगाई—"गरमा-गरम पकौड़ी।" मिशा की ओर देख कर उसने पूछा—"क्या आपको पकौड़ी चाहिये?"

मिशा ने पूछा—"पकौड़ी काहे की बनी हैं?"

एक देहाती स्त्री मिट्टी के बरतन में गरम पकौड़ी रखे हुये कहने लगी—"बाबू जी, मेरी पकौड़ियाँ ख़रीदिये। देखिये इसकी पकौड़ियाँ टंढी हो गई हैं और मेरी अभी गरम रखी हैं।"

मिशा ने उत्तर दिया—"अभी मुझे समय नहीं है। ज़रा देर बाद में कुछ पकौड़ियाँ ख़रीदूँगा।" ऐसा कहता हुआ वह इस गन्दे वातावरण से उस ओर बढ़ा, जहाँ पुरानी पुस्तकें ख़रीदी और बेची जाती हैं। बहुत घबराता हुआ वह एक दूकानदार के पास पहुँचा। दूकानदार अपनी मेज़ के पास उत्सुक भावना में संलग्न खड़ा हुआ था। आयु में वृद्ध गम्भीर मुद्रा धारण किये वह दूकानदार-सा नहीं, एक प्रोफ़ेसर-सा प्रतीत होता था। विद्यार्थी को आता हुआ देखते ही उसने अपने को मेज़ के पीछे छिपा लिया और एक पुस्तक खोल कर पढ़ने सा लगा।

"क्या आप पुस्तकें ख़रीदते हैं?" मिशा ने पूछा।

दूकानदार ने उत्तर दिया—"तुम क्या बेचने को लाये हो?"

मिशा ने कहा—"एशिया, अफ्रिका और अमेरिका। देखिये यह कितनी नई पुस्तक है।"

"स्मिरनोव की है क्या?"

"हाँ!"

"यदि यूरोप का भूगोल होता तो इस समय मैं ख़रीद सकता था। इस पुस्तक की तो बहुत-सी प्रतियाँ मेरे पास पड़ी हैं।" इस प्रकार अनिच्छा प्रदर्शित करते हुये मिशा के हाथ से पुस्तक लेकर दूकानदार ने कहा।

"यह पुराना संस्करण है। खैर, अगर चाहो तो मैं इसके दस पैसे देता हूँ।"—पुस्तक के कुछ वर्क़ उलटते हुये दूकानदार ने कहा।

मिशा ने संकुचित भाव से कहा—"परन्तु मुझसे कहा गया है कि इसे पाँच आने से कम में न बेचना।"

दूकानदार ने जम्हाई ली और मिशा को पुस्तक लौटा दी।

मिशा ने कहा—"पन्द्रह पैसे ही दीजिये। देखिये, पुस्तक बिलकुल नई है।"

दूकानदार ने कोई जवाब नहीं दिया।

"अच्छा लाइये, दस पैसे ही दीजिये।"

टेबिल पर दस पैसे रख कर और पुस्तक को लापरवाही से आलमारी की तरफ़ फेंकते और जम्हाई लेते हुये दूकानदार ने कहा—"तुमको इस पुस्तक की बहुत अच्छी क़ीमत मिल गई।" ऐसा कहते हुये वह फिर पुस्तक पढ़ने लगा।

मिशा ने पैसे जेब में डालते हुये कहा—"मैं सम्भवतः यूरोप पुस्तक भी लाऊँगा।"

"अवश्य लाना। क्या वह भी इसी पुस्तक के समान है? दूसरा कोई दूकानदार तुम्हें इस पुस्तक के दस पैसे कभी न देगा। अपने सब मित्रों को भी यहीं भेजा करो। मैं किसी भी दूकानदार की अपेक्षा अधिक मूल्य पर पुस्तकें ख़रीदता हूँ।"

"मैं अपने मित्रों को भी आपके यहाँ आने की सलाह दूँगा।"

मिशा दूकान से बाहर निकला। दूकानों पर वह खाने की चीज़ें देखने लगा। पकौड़ियाँ ख़रीदने के पहले उसकी इच्छा हुई कि वह कुछ हलुवा और मटर खावे। उसने तीन पैसे में हलुवा और मटर ख़रीदा। बड़े प्रेम के साथ इन्हें खा कर वह परम सन्तुष्ट हुआ। उसे इनका स्वाद भी अच्छा लगा। इसके बाद वह पकौड़ी वाली के पास गया।

"काहे-काहे की पकौड़ी है।"

"मशरूम ( कुकरमुत्ता ), गोश्त और गाजर की।"

"क्या भाव ?"

"पाँच पैसे की दो।"

"मुझे गाजर अच्छी नहीं लगती। मुझे एक मशरूम की और एक गोश्त की पकौड़ी दो।"

दो पकौड़ी खाने के पश्चात् उसे प्यास मालूम हुई। बचे हुए दो पैसे में उसने दो गिलास शोरवा ख़रीदा। वह दूसरे गिलास को कठिनाई से पी पाया। वह बदमज़ा और बहुत तीखा था। इतने पर भी वह छोड़ा नहीं जाता था।

दूसरे गिलास को कठिनाई से पीने के बाद मिशा ने कहा—"ओफ्।"

दूकानदार ने शेख़ी के साथ पूछा—"क्यों क्या बात है ? क्या कुछ दिमाग़ पर असर हुआ ?" इसके बाद वह फिर ज़ोर-ज़ोर से आवाज़ लगाने लगा—"शोरवा गरम !"

जिस समय मिशा घर लौटा, उसको अपनी टेबिल पर ठंढे गोश्त की एक रकाबी, एक गिलास दूध और तीन चपाती रखी हुई मिलीं। चपाती देख कर उसके जीभ में पानी आ गया। वह चपातियों का बड़ा शौक़ीन था; परन्तु स्वाभिमान उसे खाने से रोक रहा था। यदि उसे इस बात का विश्वास हो जाता कि उन लोगों को यह स्मरण नहीं है कि उसे कितनी चपाती दी गई हैं—दो अथवा तीन—तो सम्भवतः वह उन्हें खा लेता। उसने बड़ी सावधानी के साथ तीनों से कुछ भाग निकाला और उन्हें खा लिया। वह बहुत स्वादिष्ट थीं। परन्तु नहीं, अब वह ज़रा भी न खायेगा।

शोरवा ने वास्तव में उसके दिमाग़ पर अपना प्रभाव डाल ही

दिया। हलुवा, मटर और गोश्त की ख़राब पकौड़ियों ने उसके पेट में अशान्ति उत्पन्न कर दी।

कुपित होकर वह चिल्ला उठा—"ओफ् भयंकर, महा भयंकर!" ऐसा कहते हुये वह ज़रा-ज़रा सी देर में फ़र्श पर थूकने लगा।

नीना दरवाज़े पर खड़ी होकर पूछने लगी—"तुम कहाँ गये थे?"

"इस बात से तुम्हें क्या सरोकार? मैं तो तुमसे कभी नहीं पूछता कि तुम कहाँ गई थीं।"

जाते समय नीना ने टेबिल पर रखे हुये भोजन पर दृष्टिपात किया—वह ज्यों का त्यों रखा हुआ था।

"माँ ने कहा था कि तुम्हें गोश्त खिला देना। खा क्यों नहीं लेते? कब से यहाँ सब खाना रखा हुआ है!"

"मुझे भूख नहीं है। मैं न खाऊँगा। मैं बेवकूफ़ और मोची हूँ। तुम सब लोग वकील हो! बेवकूफ़ के लिये तुम लोगों को परेशान होने की क्या ज़रूरत?"

"जैसा तुम समझो।"

"ठीक है। तुम अपने पेतुशकोव के साथ घूमने के लिये जा सकती हो। मुझे तंग न करो। ज़रा शान्ति के साथ रहने दो।"

ग़ुस्से में आकर "सिड़ी" कहती हुई वह बाहर चली गई।

मिशा ने अपने को शत्रुओं के जाल से सुरक्षित रखने के लिये सर्वथा समर्थ पाया। वह यह भी समझता था कि उनके सभी आक्रमणों से वह अपनी रक्षा कर सकता था। वह प्रबल शस्त्र भोजन के प्रति उदासीनता बतलाना ही यथेष्ट था। मशरूम तथा गोश्त की पकौड़ियाँ, हलुवा और मटर उसके मित्र बने रहेंगे।

यह भावना बहुत अधिक समय तक रही आती, यदि एक आकस्मिक घटना से पारस्परिक मनोमालिन्य का अन्त न हो जाता। मिशा के पेट में दर्द शुरू हो गया। वह क्षण-प्रतिक्षण बढ़ता ही गया। दर्द

इतना बढ़ा कि उसे पेट के बल मुँह तकिये पर रख कर लेटना पड़ा। वह अपनी इस भयावह परिस्थिति को छिपाना भी नहीं चाहता था। कुछ समय तक तो उसने अपने को सम्हालने की चेष्टा की। वह तकिये पर मुँह रखे हुये कराहता रहा। परन्तु मशरूम की पकौड़ी और तीखे शोरवा ने अपना काम कर ही डाला। वह ज़ोर-ज़ोर से कराहने लगा और तकिये पर बार-बार हाथ पटकने लगा।

"हाय! कैसा दण्ड मिला!" पैर पटकते हुये वह बार-बार कहने लगा। शाम के वक़्त, जब दर्द उसके क़ाबू के बाहर हो गया तब उसने ज़ोर से चिल्लाना शुरू किया। उसके सभी शत्रु उसके बिस्तर के पास आ गये। उसके पिता वहाँ उपस्थित न थे, क्योंकि वे इस समय क्लब जाया करते थे। माँ ने उसका ताप-क्रम नापा। बहिन ने सरसों का बरतन ला दिया। नौकरानी डाक्टर बुलाने दौड़ी। फालस्टाफ़ भी मरीज़ को देखने आया; काम में व्यस्त शत्रुओं के मध्य जाकर उदास और वेदना से पूर्ण मिशा की ओर उसने भी दृष्टिपात किया। उसकी बड़ी-बड़ी आँखों से दया के भाव टपके पड़ते थे।

माँ ने घबड़ाते हुये पूछा—"तुमने यह क्या किया बेटा?" उसे शक हो गया कि इसने विषपान कर लिया है, क्योंकि जब कभी आपस में इस प्रकार मनोमालिन्य हो जाया करता था, तब वह विषपान करने की धमकी दिया करता था।

"मिशा, प्यारे बेटा, बतलाओ, क्या तुमने कुछ खा लिया है? जल्द बतलाओ बेटा!"

"माँ, हाय! मरा! हाय! मरा! माँ, मैंने एशिया, अफ्रिका और अमेरिका बेच डाला! हाय मरा! हाय मरा! और कुछ मशरूम की पकौड़ियाँ खरीदीं!"

"हाय! क्या, मेरे लाड़ले को क्या हो गया! भगवान्, क्या मिशा

को सन्निपात हो गया ! क्लब से जल्द इसके पिता को बुल-वाओ। हाय भगवान् ! दया करो! मेरे लाड़ले को जल्द चंगा करो !"

माँ झुक कर मिशा के मुख की ओर निहारने लगी। उसके मस्तक पर हाथ रख कर उसने उसके गालों को चूम लिया। उसकी बहिन आँखों में आँसू भरे हुये इधर-उधर कमरे में दौड़ने लगी। ऊपर खिड़की से झाँक कर चिन्तातुरा हो देखने लगी कि डाक्टर आ रहा है या नहीं। इसी समय डाक्टर भी आ पहुँचा।

"क्यों भाई, कहाँ दर्द मालूम होता है ? करवट लो।"

मिशा ने तुरन्त करवट बदली। डाक्टर ने उसकी परीक्षा की।

"तुमने आज क्या खाया है ?"

"डाक्टर साहब, उसने तो आज कुछ भी नहीं खाया। स्कूल से लौटने के पश्चात् उसके मुँह में एक कौर भी तो नहीं गया।"

"यह ख़राब बात है। फिर भी तुमने कुछ न कुछ खाया अवश्य है। हम को साफ़-साफ़ बतला दो कि तुमने क्या खाया है ?"

"मैंने कुछ मशरूम की पकौड़ियाँ खाई हैं। मैंने एशिया-अफ्रिका बेच डाला।"

पिता ने क्लब में खेल असमाप्त छोड़ कर फौरन गाड़ी बुलवाई और घबराये हुये वे घर के समीप पहुँचते ही गाड़ी से कूद कर फौरन पुत्र के पास आये और पूछने लगे—"क्या माज़रा है ?"

एक घण्टे के पश्चात् घर में सर्वत्र शान्ति थी। मिशा पेट में पुल्टिस बाँधे हुये बिस्तर पर पड़ा था। उसके समीप उसकी माँ और बहिन बैठी थीं। वे उसके समीप बैठी हुई उसकी सब प्रकार की ज़रूरतों को पूरा कर रही थीं।

दर्द शान्त हो गया। मिशा सन्तुष्ट प्रतीत होने लगा।

रूस

# काकेशस का कैदी

लेखक—लियो टालस्टाय

काकेशस की फौज़ में ज़िलन नाम का एक अफ़सर नौकर था।

एक दिन घर से उसे एक चिट्ठी मिली। चिट्ठी माँ के पास से आई थी। लिखा था—"मैं बूढ़ी हो रही हूँ और मरने से पहले एक बार बेटे की सूरत देखना चाहती हूँ। तुम आकर मुझसे मिल जाओ, आख़िरी सलाम कह जाओ और मेरा क्रिया-कर्म कर जाओ। फिर परमात्मा की मर्ज़ी हो तो मेरा आशीर्वाद लेकर नौकरी पर वापस लौट जाना। हाँ, यह बात ज़रूर है कि मैंने तुम्हारे लिये एक लड़की ढूँढ़ रखी है। वह समझदार है, अच्छी है और उसके पास कुछ जायदाद भी है। यदि तुम्हारी राज़ी हो, तो तुम उससे शादी कर लेना और घर रहना।"

ज़िलन ने सोचा, बात तो ठीक है, माँ के दिन पास आते-जाते हैं और कौन जाने फिर उसकी शक्ल देखने का भी अवसर मिले या नहीं। अच्छा यही होगा कि वह घर जाय और अगर लड़की सुन्दर हो तो उससे शादी कर लेने में ही कौन-सा हर्ज है।

वह अपने कर्नल के पास गया, उनसे छुट्टी ली। फिर साथियों को शराब की दावत दी और उनसे बिदा माँगी, और जाने के लिये तैयार हो गया।

काकेशस में इन दिनों लड़ाई चल रही थी। दिन हो या रात, सड़क पर चलना निरापद न था। अगर कभी कोई रूसी क़िले से निकल कर

कुछ दूर चलने का साहस करता, तो तातार लोग या तो उसे मार डालते या अपनी पहाड़ियों पर ले जाते। इसलिये यह प्रबन्ध हो गया था कि प्रति सप्ताह सिपाहियों का एक जत्था यात्रियों को एक क़िले से दूसरे किले तक कर आवे।

गर्मियों के दिन थे। पौ फटते-फटते किले के नीचे असबाब की गाड़ियाँ तैयार हो गईं। सिपाही लोग सड़क पर चल दिये। जिलन घोड़े पर सवार था और उसका सामान एक ठेले पर सामान की गाड़ियों के साथ था। उन्हें सोलह मील चलना था पर सामान की गाड़ियाँ धीरे-धीरे चल रही थीं। कभी सिपाही रुक जाते थे तो कभी किसी गाड़ी का पहिया ही निकल आता या कभी घोड़ा ही अड़ जाता। इस तरह सब को रुकना पड़ता।

सूरज दुपहरी पार कर गया था, पर वह लोग आधे रास्ते भी न जा पाये थे। गर्मी पड़ रही थी और धूल उड़ रही थी। धूप तप रही थी और कोई छाँह नहीं थी। सड़क के चारों ओर मैदान पड़ा था, न कोई पेड़ था न झाड़ी।

ज़िलन आगे घोड़े पर जा रहा था। सामान की गाड़ियों की बाट देखने के लिए वह रुक गया। तब उसे रुकने का भोंपू सुनाई दिया। गारद फिर रुक गई थी। वह सोचने लगा—यदि मैं अकेला ही बढ़ा चलूँ तो कैसा हो? घोड़ा मेरा बढ़िया है और अगर तातार लोग हमला भी करें, तो मैं भाग कर आ सकता हूँ। फिर भी शायद रुकना ही ठीक होगा।

वह सोच ही रहा था कि एक दूसरा अफ़सर कोस्टिलिन उसके पास आया। वह घोड़े पर सवार था और उसके हाथ में बन्दूक थी। वह बोला—

"आओ ज़िलन आगे बढ़े चले चलें। मुसीबत के मारे मरा जा

रहा हूँ। भूख अलग लग रही है और गर्मी कड़ी पड़ रही है। पसीने के मारे मेरी कमीज़ तरबतर हो रही है।"

कोस्टिलिन मज़बूत और मोटा-ताज़ा आदमी था, पसीना उसके लाल चेहरे से चू रहा था। जिलन ने क्षण भर सोचा, फिर पूछा—
"तुम्हारी बन्दूक भरी है क्या ?"

"हाँ, भरी है।"

"तो आओ चले चलें, पर शर्त यह है कि दोनों साथ रहें।"

बस वह सड़क पर आगे बढ़ दिये। सड़क मैदान के बीच में होकर जाती थी। यद्यपि वह बातें करते जा रहे थे, पर चारों ओर देखते भी जाते थे। सड़क से चारों ओर खूब दिखाई देता था। पर मैदान पार करने के बाद सड़क दो पहाड़ियों के बीच एक घाटी में होकर जाती थी। ज़िलन ने कहा—

"अच्छा हो यदि हम उस पहाड़ी पर चढ़ कर चारों ओर देख लें, नहीं तो कहीं तातार लोग हम पर टूट पड़ें और हमें पता भी न पड़ पावे।"

लेकिन कोस्टिलिन ने कहा—

"इसमें क्या धरा है ? आओ बढ़े चलें।"

पर ज़िलन राजी न हुआ।

वह बोला—"तुम चाहो तो यहाँ रुको और मेरी बाट देखो, पर मैं ऊपर जाऊँगा और देखूँगा।" यह कह कर उसने घोड़ा पहाड़ी पर चला दिया। जिलन का घोड़ा शिकारी घोड़ा था और वह जिलन को हवा की मानिन्द ऊपर ले गया। ( जब वह बछेड़ा ही था तो जिलन ने उसे सौ रूबलों में मोल लिया था और ख़ुद साधा था। ) वह सिरे पर पहुँचा ही होगा तो उसने देखा कि उससे सौ कदम दूर कोई तीस तातार होंगे। जैसे ही उसने उन्हें देखा, वह घूम पड़ा। पर तातारों ने भी उसे देख लिया था। वह उसके पीछे पूरी रफ़्तार पर घोड़ा दौड़ा कर टूट पड़े और चलते-चलते अपनी बन्दूकें निकाल लीं। उधर

जिलन भी घोड़े को पूरी ताक़त से दौड़ा रहा था और कोस्टिलिन को पुकारता जाता था—"बन्दूक़ सँभालो !"

मन ही मन वह घोड़े से बोला—"बेटा, यहाँ से निकाल ले चल ! कहीं लड़खड़ाना मत, नहीं तो सब खेल-ख़तम हो जायगा। एक बार बन्दूक भर मिल जाय, फिर वह मुझे क्या पा सकते हैं ?"

उधर कोस्टिलिन ने तातारों को देखते ही रुकने के बजाय, क़िले की ओर मुँह किया और पूरी चाल पर घोड़ा दौड़ा दिया। वह कभी घोड़े के इधर कोड़ा मारता और कभी उधर। उड़ती धूल में घोड़े की पूँछ ही दिखाई देती थी।

जिलन ने देखा—मामला बिगड़ चुका था। बन्दूक जा चुकी थी और वह अकेली तलवार से कर ही क्या सकता था। उसने बचने के लिये गारद की ओर घोड़े को फेरा, पर छः तातार उसका रास्ता रोकने को दौड़े। उसका घोड़ा बढ़िया था, पर उनके घोड़े और भी अच्छे थे और फिर वह उसके रास्ते में थे। उसने चाहा कि घोड़े की लगाम फिरा कर उसे दूसरी ओर मोड़ दे, पर वह इतना तेज़ जा रहा था कि रुका नहीं और सीधा तातारों की ओर दौड़ गया। उसने देखा कि एक भूरे घोड़े पर इक लाल दाढ़ीबाज़ तातार अपनी बन्दूक़ उठाये, दाँत फाड़े चिल्लाता हुआ उसकी ओर आ रहा था।

जिलन ने मन में कहा—"दुष्टो, मैं तुम्हें खूब जानता हूँ। यदि तुमने मुझे जीते जी पकड़ लिया तो खन्दक में डाल दोगे और खाल खींच लोगे। पर मैं जीते जी पकड़ा नहीं जाऊँगा।"

जिलन यद्यपि बहुत लम्बा चौड़ा नहीं था पर बहादुर था। उसने अपनी तलवार निकाल ली और लाल दाढ़ी वाले तातार की ओर झपटा। मन में सोचा—या तो मैं उससे आगे ही निकल जाऊँगा या उसे तलवार के वार से बेकाबू कर दूँगा।

तातार से वह गज़ दो गज़ दूर ही होगा कि पीछे से बन्दूक़ चली

और गोली उसके घोड़े के लगी। घोड़ा बोझ सँभाल न सका और गिर पड़ा। ज़िलन ज़मीन से लग गया।

उसने जो उठना चाहा तो देखा कि दो कम्बख्त तातार उस पर सवार थे और उसकी मुश्कें बाँध रहे थे। उसने ज़ोर लगाया और उन्हें दूर फेंक दिया, पर तीन और तातार घोड़ों से कूद, उस पर टूट पड़े और अपनी बन्दूकों के कुन्दों से उसके सिर को पीटने लगे। उसकी आँखों के आगे अँधेरा छाने लगा और वह गिर पड़ा। तातारों ने उसे पकड़ लिया और ज़ीन से रस्सियाँ निकाल कर उसके हाथ उसकी पीठ से बाँध दिये और एक तातारी गाँठ लगा दी। उन्होंने उसकी टोपी और जूते निकाल फेंके और उसकी तलाशी ली। कपड़े उसके फाड़ डाले और घड़ी व रुपया जो मिला, अपने हाथ किया।

ज़िलन ने मुड़ कर घोड़े की ओर देखा। वह बेचारा जैसा गिरा था वैसा ही एक करवट से पड़ा था। पैर वह हवा में फेंक रहा था, पर वह धरती में न टिक पाते थे। उसके सिर में एक छेद हो गया था और उसमें से काला-काला ख़ून निकल रहा था। उससे आसपास की एक-एक फ़ुट मिट्टी में कीचड़ हो गई थी।

एक तातार घोड़े तक बढ़ा और उसकी ज़ीन निकालने लगा। घोड़ा दुलत्ती मार रहा था इसलिये उसने कटार निकाली और घोड़े का गला काट डाला। एक चीख़-सी घोड़े के गले से निकली, एक बार वह फिर तड़पा और शान्त हो गया।

तातारों ने जीन व साज़ खोल लिये। लाल दाढ़ीबाज़ तातार अपने घोड़े पर सवार हो गया। दूसरे तातारों ने ज़िलन को उसकी पीठ पीछे बैठा दिया। कहीं वह गिर न पड़े इसलिये उसे तातार की पेटी से बाँध दिया और सब लोग पहाड़ियों की ओर दौड़ पड़े।

इस तरह ज़िलन वहाँ बैठा रहा, कभी इधर लुढ़कता कभी उधर। सिर उसका बार-बार तातार की पीठ से टकराता था। उसे उसकी

मांसल पीठ और मुड़ी हुई भारी गर्दन के सिवाय और कुछ नहीं दिखता था। ज़िलन का सिर घायल था, आँखों के ऊपर खून जम गया था और वह ज़ीन पर न तो स्थान ही बदल सकता था, न खून ही पोंछ सकता था। उसके हाथ इस तरह से कसे थे कि उसकी हँसली की हड्डी दर्द करने लगी।

पहाड़ियों के ऊपर-नीचे वह काफ़ी दूर तक गये। फिर वह एक नदी के पास पहुँचे और उसे पार किया। इसके बाद घाटी को जाने वाली एक पक्की सड़क पर आये।

ज़िलन ने चाहा कि यह देखे कि कहाँ जा रहे हैं, पर उसके पलकों पर खून जम गया था और वह मुड़ नहीं सकता था।

सन्ध्या हो चली थी; उन्होंने दूसरी नदी पार की और एक पथरीली पहाड़ी की ओर बढ़े। वहाँ पर धुयें की गन्ध थी और कुत्ते भौंकने लगे। अब वह एक तातारी गाँव में पहुँच गये थे। तातार घोड़ों से उतर पड़े। उनके बच्चे ज़िलन को आकर देखने लगे। वे खुश होकर चिल्लाते थे और उस पर ढेले फेंकते थे।

तातार ने बच्चों को भगा दिया, ज़िलन को घोड़े पर से हटाया और अपने नौकर को बुलाया। एक लम्बे मुँह का तातार आया। उसके तन पर एक फटा कुर्त्ता था जिसमें छाती दीखती थी। तातार ने उसे कुछ हुक्म दिया। वह जाकर बेड़ियाँ ले आया। बेड़ियाँ क्या थीं, काठ के दो टुकड़े थे, जिनमें लोहे के घेरे लगे थे और घेरों में एक पकड़ और ताला पड़ा था।

उन्होंने ज़िलन के हाथ खोल दिये, बेड़ियाँ उसके पैरों से बाँध दी, और भूसे की कोठरी तक घसीट ले गये। वहाँ उन्होंने उसे धकेल दिया और दरवाज़े पर ताला जड़ दिया।

ज़िलन खाद के ढेर पर जा गिरा। कुछ देर तक वह वैसा

ही पड़ा रहा, फिर एक मुलायम जगह टटोलने लगा और एक जगह जम गया।

( २ )

उस रात जिलन मुश्किल से ही सो पाया। ये साल के वे दिन थे जब रातें छोटी होती हैं और जल्दी ही दीवार की एक संद से धूप दिखलाई पड़ने लगी। वह उठा और उठ कर उसने संद बड़ी की, फिर बाहर की ओर उस संद से झाँका।

उसने संध से देखा, एक सड़क नीचे की ओर जाती थी। दायीं तरफ़ एक तातार की झोपड़ी थी और उसके पास दो पेड़ खड़े थे। देहरी पर एक काला कुत्ता पड़ा था और बकरी व उसके बच्चे दुम हिलाते हुये इधर-उधर घूम रहे थे। फिर उसने एक जवान तातारी स्त्री को देखा जो एक लम्बा, ढीला और चमकदार चोग़ा पहिने थी। उसके नीचे से उसका पायजामा और ऊँचे-ऊँचे जूते दिखाई दे रहे थे। सिर पर एक कोट पड़ा था और वह धात के एक बड़े कलशे में पानी लिये जा रही थी। अँगुली से वह एक छोटे तातार बच्चे को लिये जा रही थी। सिर उसका मुड़ा था और वह फ़कत एक कमीज़ पहिने था। जैसे वह बर्तन को साधे चलती थी उसकी पीठ की पेशियाँ डोल जाती थीं। यह स्त्री पानी को घर के भीतर ले गई। झटपट कल वाला लाल दाढ़ीबाज़ तातार बाहर निकल आया। वह रेशम का कुरता पहिने था, चाँदी की मूँठ की कटार किनारे लटक रही थी, पैरों में जूते थे और एक लम्बी भेड़ की खाल की टोपी खोपड़ी के पीछे रखी थी। वह बाहर आया, अँगड़ाई ली और अपनी लाल दाढ़ी फटकारी। कुछ देर वह खड़ा रहा, फिर नौकर को कुछ हुक्म दिया और चला गया।

इसके बाद दो लड़के अपने घोड़ों को पानी पिला कर उधर से लौटे। घोड़ों की नाकें गीली थीं। कुछ और मुड़ी खोपड़ी के लड़के दौड़ रहे थे। वह पायजामा तक नहीं पहिने थे, सिर्फ़ कमीज़ शरीर पर

थी। वह इकट्ठे हो गये, कोठरी तक आये और संद में से एक लकड़ी का टुकड़ा डालने लगे। जिलन चिल्लाया और वह चीख भर कर भागे। जैसे वह दौड़ रहे थे उनकी नंगी टाँगें चमक रही थीं।

ज़िलन बहुत प्यासा था। उसका गला सूख रहा था और वह सोचने लगा—काश, वह मुझे आकर देख भर लेते।

तब उसने किसी को कोठरी का ताला खोलते सुना। लाल दाढ़ीबाज़ भीतर घुसा। उसके साथ एक दूसरा ठिंगना आदमी था। यह साँवला था, चमकदार काली आँखें थीं, लाल-लाल गाल और छोटी-सी दाढ़ी थी। उसका चेहरा सुहावना था और वह सदा हँसता रहता था। यह आदमी पहले वाले से अधिक क़ीमती कपड़े पहने था। सुनहरी गोट का वह रेशमी कुरता पहिने था, एक चाँदी की बड़ी-सी कटार उसकी पेटी से लटक रही थी। पैरों में वह रुपहली काम के मुलायम लाल स्लीपर पहिने था जिनके ऊपर भारी जूते चढ़े थे। उसके सिर पर एक सफ़ेद चमड़े की टोपी थी।

लाल दाढ़ीबाज़ तातार अन्दर घुसा; कुछ फुसफुसाया जैसे कि वह ग़ुस्सा हो और चौखटे के सहारे खड़ा हो गया। वह कटार से खेलता जाता था और जिलन की ओर ऐसे घूर रहा था जैसे भेड़िया देखता हो। साँवला तातार जो चुस्त और चैतन्य था, कूदता हुआ ज़िलन के सामने जाकर बैठ गया। उसने ज़िलन के कन्धों को थपथपाया और अपनी भाषा में बहुत तेज़ बोलने लगा। उसके दाँत दिखाई देते थे, वह पलक मारता और जीभ चाटता जाता था। बारबार वह दोहरा लेता था—'अच्छा रूसी', 'अच्छा रूसी।'

जिलन उसका एक शब्द भी न समझ सका, पर उसने कहा—"मुझे प्यास लगी है, पीने को पानी दो।"

साँवला तातार हँस दिया। "अच्छा रूसी"—उसने कहा और अपनी भाषा में बोलता रहा।

ज़िलन ने इंजुली बाँध कर और ओठों से लगा कर इशारा किया कि वह कुछ पीना चाहता है। इसे वह समझ गया और हँसने लगा। इसके बाद उसने दरवाज़े से बाहर देखा और किसी को पुकारा—"दीना!"

एक छोटी सी लड़की दौड़ती आई। उसकी उम्र कोई तेरह साल की होगी। वह दुबली, इकहरे बदन की थी और चेहरा-मोहरा साँवले तातार का सा था। वह उसकी लड़की मालूम होती थी। उसकी भी आँखें साफ़ और काली थीं और चेहरा सुन्दर था। वह एक लम्बा नीला चोग़ा पहिने थी जिसकी आस्तीनें चौड़ी थीं। हाँ, उसमें कोई पेटी नहीं थी। चोग़े के सिरे, सामने और अस्तीनों पर लाल गोट लगी थी। पैरों में वह पायजामा और स्लीपर पहिने थी। स्लीपरों पर मज़बूत ऊँची ऐड़ी के जूते पहिने थी। गले में वह रूसी चाँदी के सिक्कों की हमेल पहिने थी। सिर उसका खुला था और काले बाल फीते से बँधे थे। सुनहरी और रुपहली सिक्के उन पर बँधे थे।

उसके बाप ने उसे कुछ आज्ञा दी। वह दौड़ गई और धात का एक कलशा लेकर लौट आई। उसने पानी ज़िलन को दे दिया और बैठ गई। वह जब बैठी तो उसने अपना सिर घुटनों में दे दिया और ज़िलन को पानी पीते हुये ऐसे देखने लगी, मानो वह कोई जंगली जानवर हो।

जब ज़िलन ने खाली कलशा उसे वापस किया, तो वह ऐसी कूदी जैसी जंगली बकरी कूदती हो। यह देख कर उसका बाप हँस पड़ा। उसने उसे किसी काम के लिये फिर भेज दिया। वह कलशा उठा कर भाग गई और जब लौटी, तो एक गोल पट्टी पर कुछ रोटियाँ ले आई। वह फिर घुटनों में सिर देकर झुक कर बैठ, उसे आँखें फाड़-फाड़ कर देखने लगी।

फिर तातार चले गये और दरवाज़े में ताला डाल दिया गया।

थोड़ी देर बाद नोगाय आया और बोला—"आएडा, मालिक आएडा।"

वह भी रूसी नहीं जानता था। ज़िलन इतना भर समझ सका कि उससे कहीं जाने के लिये कहा गया था।

ज़िलन नोगाय के पीछे-पीछे चला पर वह लंगड़ाता था। बेड़ियों ने उसके पैर ऐसे कस दिये थे कि वह ज़मीन पर उन्हें टिका ही नहीं पाता था। कोठरी से निकलने के बाद उसने देखा कि आठ-दस तातार-घरों का गाँव है। एक तातारी मस्जिद भी थी जिसमें एक छोटी सी बुर्जी थी। एक मकान के सामने तीन ज़ीन कसे घोड़े बँधे थे, छोटे लड़के उनकी लगामें थामे थे। साँवले रँग का तातार इस घर से निकला और ज़िलन को अपने पीछे चलने का इशारा किया। फिर वह हँसने लगा, अपनी भाषा में कुछ बोला और घर लौट गया।

ज़िलन उसके पीछे-पीछे मकान में घुसा। कमरा काफ़ी अच्छा था। दीवारों पर मिट्टी लिपी हुई थी। सामने परों से भरे रंगीन चमकदार गद्दे बिछे थे। अगल-बगल की दीवारों पर बढ़िया क़ालीन टँगे थे जो पर्दों का काम देते थे। उन पर बन्दूकें, पिस्तौलें और तलवारें लटक रही थीं। सब पर चाँदी का काम हो रहा था। दीवारों के पास फ़र्श से मिली एक छोटी अंगीठी थी। फ़र्श सफ़ाई से जगमग हो रहा था। एक तरफ़ खुली जगह थी। वहाँ बनात बिछी थी। इस पर गलीचे बिछे थे और मसनदें लगी थीं। इन पाँच गलीचों पर पाँच तातार बैठे थे। एक साँवला था, दूसरा लाल दाढ़ीबाज़ था, तीन और मेहमान थे। वह अपने पैताबे पहिने हुये थे और हर एक की पीठ से एक मसनद लगी थी।

उनके सामने काठ के पट्टे पर रोटियाँ रखी थीं, एक कटोरे में घी और एक बर्तन में तातारी घरेलू शराब, बूजा रक्खी थी। वह रोटियाँ और घी हाथों से खाते जाते थे।

उसके पहुँचते ही साँवला आदमी उठ बैठा और हुक्म दिया कि ज़िलन को गलीचे पर न बैठा कर खाली धरती पर एक कोने में बैठाया जाय। इसके बाद वह बैठ गया और मेहमानों को रोटियाँ व बूजा परोसने लगा। नौकर ने ज़िलन को बैठा दिया। फिर उसने अपने जूते उतारे, उन्हें दरवाज़े के पास दूसरे जूतों के साथ रक्खा और आकर मालिकों के पास बनात पर बैठ गया। वह मालिकों को खाते देखता जाता था और जीभ चाटता जाता था।

तातारों ने भरपेट खाया। फिर एक स्त्री आई। वह वैसी ही पोशाक पहिने थी जैसे लड़की पहिने थी—एक लम्बा चोंग़ा, पायजामा और सिर पर रूमाल बँधा हुआ। वह आई और जूठन उठा ले गई। फिर वह लौटी और एक खूबसूरत परात व टोंटीदार लोटा ले आई। तातारों ने हाथ धोये। फिर छाती पर हाथ रक्खे, घुटनों के बल बैठ गये और चारों ओर घूम कर नमाज़ पढ़ने लगे। फिर कुछ देर तक उन्होंने आपस में बातचीत की। तब एक मेहमान ज़िलन की ओर घूमा और उससे रूसी भाषा में बोलने लगा। लाल दाढ़ीबाज़ तातार की ओर इशारा कर उसने कहा—"तुम्हें काज़ी मुहम्मद ने पकड़ा था और अब उसने तुम्हें अब्दुल मुराद को दे दिया है।"—अब्दुल मुराद की ओर संकेत करके कहा—"अब अब्दुल मुराद तुम्हारा मालिक है।"

ज़िलन चुप रहा। फिर अब्दुल मुराद बोलने लगा। वह हँसता जाता था, जिलन की ओर इशारा करता जाता था और दुहराता जाता था—"सिपाही रूसी, अच्छा रूसी।"

दुभाषिये ने बतलाया—"वह कहता है कि तुम घर चिट्ठी लिख कर रिहाई की रक़म मँगा लो। रुपया आते ही तुम्हें छोड़ दिया जायगा।"

ज़िलन ने एक क्षण सोचा, फिर बोला—"वह कितनी रक़म माँगता है?"

कुछ देर तातारों ने सलाह की, फिर दुभाषिया बोला—"तीन हज़ार रुबल।"

जिलन बोला—"नहीं, मैं इतना नहीं दे सकता।"

अब्दुल खड़ा हो गया और हाथ हिला-हिला कर ज़िलन से बातें करने लगे। वह पहले की तरह अब भी समझ रहा था कि ज़िलन उसकी बात समझ रहा है। फिर दुभाषिया बोला—"तुम क्या दोगे?"

जिलन ने सोच कर बताया—"पाँच सौ रुबल।" इस पर तातार बहुत जल्दी-जल्दी बातचीत करने लगे। अब्दुल लाल दाढ़ीबाज़ पर चिल्ला पड़ा और ऐसे ज़ोर-ज़ोर से बोलने लगा कि उसके मुँह से थूक की बूँदें निकलने लगीं। लाल दाढ़ीबाज़ आँख मिचका कर और जीभ चाट कर रह गया।

कुछ देर के बाद वह शान्त हुये। तब दुभाषिया बोला—"पाँच सौ रुबल से मालिक का काम न चलेगा। दो सौ तो उसने तुम्हारे लिये दिये ही हैं। काज़ी मुहम्मद पर उसका कर्ज़ा आता था और उसने तुम्हें भुगतान में ले लिया है। तीन हज़ार रुबल से कम से काम नहीं चलेगा। अगर तुम लिखने से इन्कार करोगे तो तुम खन्दक में डाल दिये जाओगे और तुम्हारी खाल कोड़े मार-मार कर खींच ली जायगी।"

ज़िलन ने सोचा, "अरे जितना इनसे डरो, उतना ही यह सिर होंगे।"

वह उछल कर खड़ा हो गया और बोला—"उस कुत्ते से कह दो कि यदि वह मुझे डराने की कोशिश करेगा, तो मैं घर बिलकुल नहीं लिखूँगा और वह मुझसे फूटी कौड़ी भी न पा सकेगा। मैं तुम कुत्तों से न कभी डरा हूँ और न कभी डरूँगा।"

दुभाषिये ने ज़िलन की बात उनकी भाषा में बतला दी। फिर वह ज़ोर-ज़ोर से आपस में बतराने लगे।

कुछ देर वह बात करते रहे। फिर अब्दुल उठा और ज़िलन के पास आकर बोला—"बहादुर रूसी, बहादुर!" वह हँसने लगा और दुभाषिये से उसने कुछ कहा। दुभाषिये ने बतलाया—"एक हज़ार रुबल से मालिक को संतोष हो जायगा।"

जिलन अड़ गया, बोला—"मैं पाँच सौ से ज्यादा कौड़ी नहीं दूँगा। और यदि तुम मुझे मार डालोगे, तो तुम्हारे पल्ले कुछ भी नहीं पड़ेगा।"

तातारों ने कुछ देर बातचीत की, फिर नौकर को कुछ लाने भेज दिया। कभी वह ज़िलन को देखते थे और कभी दरवाज़े की ओर। नौकर लौटा तो उसके पीछे एक तगड़ा आदमी था। वह नंगे पैरों था, हालत फटी-टूटी थी और पैरों में बेड़ियाँ पड़ी थीं।

जिलन भौंचक्का रह गया। यह तो कोस्टिलिन था। वह भी पकड़ लिया गया था। वह साथ-साथ बैठा दिये गये। फिर वह आपस में बातें कर आप बीती सुनाने लगे। जब वह बातें करने लगे तो तातार चुपचाप बैठ सुनते रहे। ज़िलन ने बताया, उस पर क्या-क्या बीती। कस्टिलिन ने बताया कि कैसे उसका घोड़ा रुक गया, उसका निशाना चूक गया और इसी अब्दुल ने घेर कर उसे पकड़ लिया।

अब्दुल उछल पड़ा, कोस्टिलिन की ओर इशारा किया और कुछ बोला। दुभाषिये ने समझाया कि अब वह दोनों एक ही मालिक के नीचे थे और जो पहले रक़म चुका देगा वह पहले छोड़ दिया जायेगा।

फिर वह ज़िलन से बोला—"देखो, तुम तो नाराज़ होते हो, पर तुम्हारा यह साथी बड़ा नम्र है। उसने घर चिट्ठी लिख दी है और वह लोग पाँच हज़ार रुबल भेज देंगे। उसको अच्छा खाना मिलेगा और उसको भली प्रकार रखा जायेगा।"

जिलन ने उत्तर दिया—"मेरा साथी जो चाहे कर सकता है। यह भी हो सकता है कि वह मालदार हो, पर मैं मालदार नहीं हूँ। मैंने तो जो

कह दिया है वही होगा। चाहो तो तुम मुझे मार डालो, पर इससे तुम्हें कुछ मिलने का नहीं। मैं घर पाँच सौ रूबल से ज्यादा के लिये नहीं लिखूँगा।"

वह सब चुप हो गये। एकाएक अब्दुल उछल कर गया और एक सन्दूकची उठा लाया। उसमें से उसने क़लम दवात और काग़ज निकाला और उन्हें ज़िलन को दे दिया। फिर उसने उसका कंधा थपथपाया और इशारा किया कि वह चिट्ठी लिख दे। वह पाँच सौ रुबल लेने को तैयार हो गया था।

ज़िलन ने दुभाषिये से कहा—"ज़रा रुको! उनसे कह दो कि वह हमको ठीक से खाना खिलायें, अच्छे कपड़े और जूते दें, और हमें साथ रहने दें। इससे हमारा मन लगेगा। और वह हमारे पैरों से बेड़ियाँ निकलवा दें।"

यह कह कर उसने मालिक की ओर देखा और हँसा। मालिक भी हँसा। उसने दुभाषिये की बात सुनी और बोला—"मैं उन्हें उम्दा से उम्दा कपड़े दूँगा। ऐसे बढ़िया चोग़े और जूते जैसे मानो बरात में सजने के लिये बने हों। मैं उन्हें रईसी खाना दूँगा और यदि वह चाहें तो साथ-साथ कोठरी में रह सकते हैं। पर मैं उनकी बेड़ियाँ नहीं हटा सकता। नहीं तो वे भाग जायँगे। हाँ रात में उन्हें निकाल दिया जाया करेगा।" फिर वह उछलकर बढ़ा और ज़िलन को थप-थपाने लगा। बीच-बीच में वह चिल्लाता जाता था—"तुम अच्छे, मैं अच्छा।"

जिलन ने चिट्ठी लिख दी पर उसका पता ग़लत लिखा, जिससे वह अपने ठीक स्थान पर कभी न पहुँच सके। मन में उसने सोच लिया—"मैं भाग जाऊँगा।"

जिलन और कोस्टिलिन कोठरी में वापस ले जाये गये। वहाँ उन्हें बिछाने को पुआल, पीने को पानी का बर्तन, कुछ रोटियाँ, दो पुराने

चोग़े और कुछ फटे फौजी बूट दे दिये गये। मालूम होता था कि यह बूट रूसी सिपाहियों की लाशों से निकाले गये थे। रात में उनके पैरों की बेड़ियाँ निकाल दी गईं और वह कोठरी में बन्द कर दिये गये।

( ३ )

जिलन और उसका साथी दोनों इस तरह एक महीने रहे। मालिक हमेशा हँसता था और कहता था—"तुम इवान अच्छे, मैं अब्दुल अच्छा!" पर वह उन्हें बहुत बुरा खाना खिला रहा था। कभी-कभी मक्का के आटे की मोटी-मोटी रोटियाँ मिलतीं और कभी कच्चे आटे का थोपा ही।

कोस्टिलिन ने घर दुबारा चिट्ठी दी। वह दिन भर ऊँघता और रुपये की बाट जोहता। वह दिनों सोता रहता या चिट्ठी आने के दिन गिनता।

जिलन जानता था कि उसकी चिट्ठी कहीं नहीं पहुँचने की है और उसने दुबारा कोई चिट्ठी नहीं डाली। उसने सोचा—"मेरी माँ बेचारी के पास इतनी रक़म कहाँ से आती जो वह मुझे छुटा पाती। उसकी तो गुज़र उसी से चलती थी जो मैं भेज देता था। अगर उसे पाँच सौ रुपयों का इन्तज़ाम करना पड़ता, तो बेचारी बर्बाद हो जाती। ईश्वर की दया हुई तो निकल भागूँगा।"

इसलिये वह चौकन्ना हो गया और भाग निकलने की तरकीबें सोचने लगा।

वह गाँव में सीटी बजाता घूमा करता। कभी बैठ कर मिट्टी की गुड़ियाँ बनाता या सीकों की डालियाँ बुनता। हाथ की दस्तकारी में ज़िलन होशियार जो था।

एक दिन उसने एक गुड़िया बनाई। इसके हाथ-पैर और आँख-नाक थीं। उसे उसने एक तातारी चोग़ा भी पहिना दिया और छत पर रख दी। जब तातारी औरतें पानी भरने आईं, तो मालिक की लड़की

दीना को गुड़िया दिखाई दे गई। उसने यह गुड़िया गाँव की औरतों को बुला कर दिखाई। वह बेचारी अपने अपने घड़े वहीं रख कर गुड़िया को देखती और हँसती रहीं। पर उसे छूने की हिम्मत किसी में नहीं हुई। जिलन ने गुड़िया उतार कर नीचे रख दी और कोठरी में जाकर बाट देखने लगा कि देखें क्या होता है।

दीना गुड़िया के पास दौड़ आई, इधर उधर ताका और पट गुड़िया झपट कर भाग गई!

दूसरे दिन तड़के ही उसने बाहर निगाह डाली। दीना घर से बाहर आई और देहरी पर गुड़िया लेकर बैठ गई। गुड़िया को उसने कपड़ों के लाल टुकड़े पहिना रक्खे थे और उसे गोदी में बच्चों की तरह झुला कर एक तातारी लोरी गाती जाती थी। इतने में घर से एक बुढ़िया निकली। उसने दीना को डाँटा और गुड़िया छीन कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये। फिर दीना को उसने काम पर भेज दिया।

तो ज़िलन ने एक दूसरी गुड़िया बना दी। यह पहली से अच्छी थी। इसे उसने दीना को दे दिया। दीना एक घड़ा ले आई, उसे धरती पर रख दिया और जिलन की ओर देख कर वह घड़े का संकेत कर हँसने लगी।

ज़िलन ने 'चकित होकर सोचा—कि यह ऐसी खुश क्यों है! उसने घड़ा उठा लिया। सोचा था, पानी होगा। उसमें दूध निकला। दूध उसने पी लिया और बोला—"यह खूब रहा।"

दीना की खुशी का क्या ठिकाना था! बोली—"अच्छा ईवान, बहुत अच्छा।" फिर वह उछल कर तालियाँ बजाने लगी और घड़ा लेकर भाग गई। उसके बाद तो वह चोरी-चोरी रोज़ दूध लाने लगी।

तातार लोग बकरी के दूध का एक ख़ास तौर का पनीर बनाते हैं। इसे कभी वह छत पर सुखा देते हैं और कभी बाहर। दीना कभी-

कभी वह पनीर ले आती। और एक बार जब अब्दुल ने एक भेड़ मारी तो वह थोड़ा गोश्त भी आस्तीन में छिपा कर ले आई। वह सब चीज़ें फेंक भर जाती और चट भाग जाती।

एक दिन बड़े ज़ोर का तूफ़ान आया और घंटे भर मूसलधार वर्षा होती रही। सब नदी नाले चलने लगे। बाँध के पास इतना पानी भर गया कि सात-आठ फीट तक चढ़ गया। धार इतनी तेज़ हो गई कि पत्थर बहने लगे। हर जगह नाले चलने लगे और पहाड़ियों में गूँज फैल उठी। जब तूफ़ान ख़तम हुआ तो पानी की धारायें गाँव की सड़कों पर बह रही थी। ज़िलन ने मालिक से एक चाक़ू माँग लिया और इसकी सहायता से एक गोल नली सी तैयार की। फिर कुछ काठ के तख्तों को काट कर उसने एक पहिया बनाया जिसमें दो गुड़ियाँ लगा दीं। दोनों एक ओर थीं। छोटी-छोटी लड़कियाँ कुछ चिथड़े उठा लाईं जिसे उसने उन गुड़ियों को पहिना दिये। एक किसान लगता था और दूसरी किसान की स्त्री। फिर उसने उन्हें अपनी-अपनी जगह बैठा दिया और पहिया घुमा दिया। पानी की धार पहिया चला रही थी। पहिया घूमने लगा और गुड़ियाँ नाचने लगीं।

इस तमाशे का देखने के लिये समूचा गाँव इकट्ठा हो गया। छोटे लड़के-लड़कियों की तो क्या मर्द और औरत सभी आ खड़े हुये और जीभें चटकार कर कहने लगे—"ओह रूसी, ओह इवान!"

अब्दुल के पास एक रूसी दीवाल-घड़ी थी। यह बिगड़ गई थी। उसने ज़िलन को बुला कर उसे दिखाई। जिलन बोला—"लाओ, मुझे दे दो। मैं सुधारे देता हूँ।"

उसने उसे चाकू से खोल डाला, फिर सब हिस्से छान बीन कर उन्हें दुबारा ठीक लगा कर रख दिये और घड़ी बन्द कर दी। घड़ी चलने लगी।

मालिक प्रसन्न हो गया। उसने उसे एक पुराना कुरता भेंट किया।

इसमें छेद ही छेद थे पर ज़िलन को स्वीकार करना पड़ा। वह कम से कम रात में ओढ़ने के काम में तो आ ही सकता था।

फिर तो ज़िलन की कीर्ति फैल गई। दूर दूर के गाँवों से तातार आने लगे। कभी किसी की बन्दूक की मरम्मत होती तो पिस्तौल या घड़ी की। उसके मालिक ने भी उसे कुछ औज़ार दे दिये—छेनी, हथौड़ी, पेचकस आदि।

एक दिन एक तातार बीमार पड़ा। वह लोग जिलन के पास आकर कहने लगे—"भई, उसे आराम कर दो।" ज़िलन डाक्टरी रत्ती भर नहीं जानता था, पर वह देखने चला गया। सोचा, किसी न किसी तरह काम चल ही जायगा।

वह कोठरी को लौटा, पानी में कुछ रेत मिलाई, फिर तातारों के सामने उस पर कुछ मंत्र सा पढ़ा और उसे बीमार आदमी को पीने को दे दिया। भाग्य की बात, वह अच्छा हो गया।

ज़िलन धीरे-धीरे उनकी भाषा सीखने लगा। कुछ तातारों से त उसकी अच्छी खासी जान-पहिचान हो कई। वह जब कभी उसे बुलान चाहते तो 'इवान, इवान' चिल्लाते। पर कुछ लोग अब भी उसक आँखें तरेर कर देखते थे जैसे वह कोई जंगली जानवर हो।

लाल दाढ़ीबाज़ ज़िलन से घृणा करता था। जब कभी वह उसे देखता तो मुँह बना कर चल देता या गुनगुनाने लगता। वहाँ एक और बुड्ढा भी था जो गाँव में नहीं रहता था, बल्कि पहाड़ी के नीं से आता था। ज़िलन को वह तभी दीख पड़ता जब वह मस्जिद जाता वह ठिंगना था और टोपी के चारों ओर एक सफ़ेद साफा बाँधता था उसकी दाढ़ी और मूँछें छटी हुई थीं और बर्फ जैसी सफेद हो गई थीं चेहरे पर उसके झुर्रियाँ ज़रूर पड़ गई थीं, पर था लाल-लाल। ना उसकी बाज़ की सी नुकीली थी और भूरी आँखों से निर्दयता टपकत थी। दाँत उसके रह नहीं गये थे, सिर्फ आगे के दो बड़े-बड़े दाँ

थे। वह जब साफ़ा बाँध कर लाठी टेकता हुआ निकलता तो, ऐसे देखता जैसे खाने का दौड़ेगा। ज़िलन को देख कर तो वह लाल हो जाता और मुँह मोड़ कर चला जाता।

एक बार ज़िलन पहाड़ी से नीचे यह देखने को गया कि वह कहाँ रहता है। वह सड़क-सड़क नीचे गया। आगे उसे एक छोटा बाग़ मिला जिसके चारों ओर पत्थर की दीवाल थी। दीवाल के भीतर उसे बादाम और अखरोट के पेड़ व एक छतदार झोपड़ी दिखाई दी। पास आकर उसने देखा, तो मधु-मक्खियों का छत्ता नज़र आया। मक्खियाँ भिनभिनाती हुई उड़ रही थीं। बूढ़ा घुटनों के बल बैठा छत्ते से कुछ कर रहा था। ज़िलन जैसे ही तन कर देखने लगा, उसकी बेड़ियाँ खनक उठीं। बूढ़े ने इधर-उधर देखा, एक चीख़ मारी और पेटी से पिस्तौल निकाल कर ज़िलन पर वार किया। जिलन दीवाल के पीछे बैठ कर बच गया।

बुड्ढा ज़िलन के मालिक के पास शिकायत करने गया। मालिक ने जिलन को बुला कर, हँस कर पूछा—"तुम इनके घर क्यों गये ?"

ज़िलन बोला—"मैंने इनका कुछ बिगाड़ा तो है नहीं। मैं यही देखने गया था कि यह कैसे रहते हैं।"

मालिक ने ज़िलन की बात दोहरा दी।

लेकिन बूढ़े की गुस्सा निकली पड़ रही थी। वह बड़बड़ाने लगा और तैस में आ सिसकारी मारने लगा। आगे के दाँत बराबर दीखते थे और वह ज़िलन की ओर अपना घूँसा दिखाता जाता था।

जिलन उसकी पूरी बात न समझ सका। पर यह समझ गया कि बूढ़ा अब्दुल को समझा रहा था कि उस रूसी के गाँव में नहीं रखना चाहिये, उन्हें तुरन्त मार डालना चाहिये। फिर वह चला गया।

ज़िलन ने मालिक से पूछा कि यह बूढ़ा कौन था।

मालिक बोला—"वह एक बड़ा आदमी है। वह हम सबसे ब

दुर था। उसने बहुत-से रूसी मारे थे। एक वक्त वह रईस भी काफ़ी बड़ा था। उसके तीन स्त्रियाँ और आठ लड़के थे और सब एक ही गाँव में रहते थे। इतने में रूसी चढ़ आये। उन्होंने गाँव नष्ट कर दिया और उसके सात लड़कों को मार डाला। एक ने आत्म-समर्पण कर दिया। बूढ़े ने भी आत्म-समर्पण कर दिया और रूसियों के साथ तीन महीने रहा। इसके बाद उसे अपना लड़का मिल गया। उसे उसने अपने हाथों मार डाला और भाग आया। फिर वह लड़ते-लड़ते हज़ करने चला गया। इसीलिये वह साफ़ा पहिनता है। जो मक्का हो आता है, वह हाज़ी कहलाता है और साफ़ा पहिनता है। वह तुम लोगों को नहीं चाहता। वह मुझसे कहता है कि तुम्हें मार डालूँ। पर मैं तुम्हें कैसे मार सकता हूँ। मैंने तुम्हारे लिये रुपया दिया है, और फिर इवान तुम मुझे अच्छे भी लगते हो। मारना तो दूर रहा अगर मैंने वायदा न किया होता, तो मैं तुम्हें जाने भी न देता!" यह कह कर वह हँस पड़ा और रूसी में बोलने लगा—"तुम इवान अच्छे, मैं अब्दुल अच्छा।"

( ४ )

ज़िलन इस तरह महीने भर रहा। दिन भर वह गाँव में घूमता या कोई दस्तकारी का काम करता, पर रात में जब गाँव भर में सन्नाटा होता तो वह कोठरी के फ़र्श को खोदता। पर यह कोई साधारण काम न था। पत्थर लगे हुये थे। पर उसने उनको अपनी छेनी से काट लिया और इतना बड़ा छेद बना लिया कि निकल जा सके।

उसने सोचा—बस यहाँ का रास्ता जानने की कसर है। पर कोई तातार भला क्यों बताने लगा।

एक दिन जब मालिक बाहर गया हुआ था, खाना खाने के बाद ज़िलन गाँव के बाहर की पहाड़ी पर चढ़ने चल दिया। उसने सोचा था, वहाँ से इधर-उधर देख लेगा। पर घर छोड़ने से पहले अब्दुल हमेशा

अपने लड़के से कह जाता था कि वह जिलन पर निगाह रक्खे और उसे आँखों से ओझल न होने दे। वह जिलन के पीछे दौड़ा और चिल्लाने लगा—"उधर मत जाओ! उधर जाने की पिता की आज्ञा नहीं है। लौटते हो कि पड़ोसियों को बुलाऊँ!"

जिलन ने उसे फ़ुसलाने की चेष्टा की और कहा—"मैं कोई दूर थोड़े ही जा रहा हूँ; मैं तो उस पहाड़ी पर चढ़ना भर चाहता था। मैं एक बूटी की तलाश में हूँ, उससे बीमारों को आराम होता है। तुम चाहो तो मेरे साथ-साथ आओ। यह बेड़ियाँ पहिन कर मैं भाग ही कैसे सकता हूँ? कल तुम्हारे लिये मैं तीर-कमान बनाऊँगा।"

लड़का उसकी बातों में आ गया और वह लोग चढ़ गये। देखने में चोटी दूर नहीं मालूम होती थी पर बेड़ियाँ पहिन कर चढ़ना मुश्किल हो गया। जिलन चढ़ने को तो चढ़ गया पर इसमें उसकी सारी शक्ति भी लग गई। वहाँ वह बैठ गया और गाँव का आस-पास देखने लगा। कोठरी से आगे दक्षिण की तरफ़ एक घाटी थी जिसमें घोड़े चर रहे थे। उस घाटी के नीचे सिरे पर एक दूसरा गाँव था। उस गाँव के आगे एक ऊँची पहाड़ी थी और उसके आगे एक और पहाड़ी थी। इन पहाड़ियों के बीच में जो नीली-नीली जगह दिखाई देती थी, वहाँ जंगल थे और उनके आगे पहाड़ थे जो एक दूसरे से ऊँचे होते गये थे। उन सब से ऊँचे जो थे वह बर्फ़ से ढके थे और चाँदी के माफ़िक चमकते थे। उनमें एक बर्फ़ीली चोटी सब से ऊँची दीखती थी। पूर्व और पश्चिम में भी ऐसी पहाड़ियाँ थीं और उनकी घाटियों में बसे गाँवों से धुआँ निकल रहा था। जिलन ने सोचा—अरे, यह तो सब तातार प्रदेश हैं। फिर वह रूस की ओर मुड़ा। पहाड़ी के नीचे ही उसे एक नदी दिखाई दी और वह गाँव था जिसमें वह रहता था। गाँव बाग़ों से घिरा था। उसे नदी के किनारे कपड़े धोती औरतें दिखाई दीं जो गुड़ियों-सी लगती थीं। गाँव के आगे एक पहाड़ी थी जो दक्षिण वाली पहाड़ी से नीची

थी। उनके आगे दो और पहाड़ियाँ थीं जिन पर खूब घना जंगल था। इन दोनों के बीच में एक चिकना-सा, नीला-सा मैदान था और उस मैदान से बहुत दूर एक धुयें का बादल-सा दीख रहा था। जिलन ने याद करने का प्रयत्न किया कि जब वह क़िले में रहता था तो सूरज किधर उगता-डूबता था। और उसे यक़ीन हो गया कि वह ग़लती नहीं कर रहा है। रूसी क़िला उसी मैदान में होना चाहिये था। उसने सोचा, उसे भाग निकलने के बाद इन्हीं दोनों पहाड़ियों में रास्ता ढूँढ़ निकालना होगा।

सूरज डूब ही रहा था। सफ़ेद बर्फ़ीले पहाड़ लाल हो गये, काली पहाड़ियाँ और गहरी हो गईं। घाटियों से कोहरा निकलने लगा और जिस घाटी में उसने रूसी क़िले का अनुमान किया था, वह भी संध्या के प्रकाश से चमक उठी। जिलन ने सावधानी से देखा—घाटी में कोई चीज़ हिलती-सी मालूम हुई जैसे चिमनी से धुआँ निकलता हो। उसे विश्वास हो गया, रूसी किला वहीं पर था।

देर हो गई थी। मुल्ला की बाँग सुनाई दी। ढोर घर लौट रहे थे, गायें रँभा रही थीं। उधर लड़का कह रहा था—"घर लौट चलो, घर लौट चलो।" पर ज़िलन का जाने का मन न होता था।

आख़िरकार वह लौट ही गये। ज़िलन ने सोचा—"अच्छा, अब मैं रास्ता जान गया हूँ, अब भागने का मौका है।" उसने उसी रात भागने की सोची। रातें अँधेरी थीं, चन्द्रमा उग नहीं रहा था। लेकिन दुर्भाग्य ऐसा पड़ा, तातार उसी रात लौट आये। जब कभी वह लौटते थे तो ढोरों को हाँकते और हँसीख़ुशी घर लौटते थे। पर इस बार कोई ढोर नहीं थे। इस वक्त तो एक तातार की लाश वह साथ लाये। यह लाल दाढ़ीबाज़ के भाई की लाश थी, वह मार डाला गया था। वह रंजीदा घर लौटे और आकर उसको दफ़नाने के लिये इकट्ठे हुये। ज़िलन भी इसे देखने आ गया।

उन्होंने लाश को एक सफ़ेद मलमल से लपेट दिया और बिना किसी अर्थी के उसे गाँव के बाहर ले गये और वहाँ एक पेड़ की छाया में घास पर लिटा दी। मुल्ला व बूढ़े आदमी भी आ गये। उन्होंने टोपियों के ऊपर रूमाल बाँधे, जूते उतारे और लाश के आसपास एक कतार में उखड़ूँ बैठ गये।

मुल्ला सामने था। उसके पीछे साफ़ा बाँधे हुये तीन बूढ़े एक कतार में बैठे थे। उनके पीछे और तातार थे। सब ने आँखें नीची कर लीं और चुपचाप बैठे रहे। बहुत देर तक ऐसा ही रहा। फिर मुल्ला ने सिर उठा कर कहा—"अल्लाह!" उसने यही एक शब्द कहा, और सब ने आँखें नीची कर लीं और बड़ी देर चुप बैठे रहे। वह बिलकुल चुपचाप बैठे थे, न इधर-उधर हिल रहे थे, न कोई आवाज़ हो रही थी।

फिर मुल्ला ने सिर उठा कर कहा—"अल्लाह!" सब ने दोहरा दिया—"अल्लाह! अल्लाह!" और चुप हो गये।

लाश घास पर निश्चल पड़ी थी और वह भी लाश जैसे निश्चल बैठे थे। कोई हिलता-डुलता तक न था। हवा चलने से जो पत्तों में खड़खड़ाहट होती थी, उसे छोड़ किसी तरह की आवाज़ नहीं हो रही थी। फिर मुल्ला ने नमाज़ पढ़ी और वह उठ खड़े हुये। उन्होंने लाश उठा ली और हाथों में लेकर उसे धरती के एक गढ़े में रख दिया। यह कोई मामूली गढ़ा नहीं था, बल्कि धरती के अन्दर ही अन्दर मेहराब की तरह खोदा गया था। लाश के हाथ पैर दाब कर उसे क़ब्र के अन्दर किया गया और उसे धीरे से सरका दिया गया। वहाँ सरका कर उसे धरती पर बैठा दिया गया और हाथ सामने जोड़ दिये।

नोगाय फिर कुछ हरी पत्तियाँ ले आया जिन्हें उन्होंने क़ब्र में भर दिया। फिर उन्होंने उसे मिट्टी से ढाँक दिया और ज़मीन को एक-सा

कर दिया। इसके बाद क़ब्र के ऊपर एक सीधा पत्थर खडा कर दिया। फिर पैरों से चल कर मिट्टी को जमा दिया। तब वह क़ब्र के सामने फिर कतार बाँध कर चुपचाप बैठ गये। फिर वह उठे। तीन बार "अल्लाह-अल्लाह" पुकारा और एक साँस ली।

लाल दाढ़ीबाज़ ने बूढ़ों को कुछ रुपया दिया। फिर उसने उठ कर एक घोड़े को माथे पर तीन बार मारा और घर चला गया।

सवेरे ज़िलन ने देखा कि लाल दाढ़ीबाज और उसके पीछे तीन और तातार एक घोड़ी को गाँव के बाहर लिये जा रहे हैं। बाहर पहुँच कर उसने लबादा उतारा और आस्तीन की बाँहें चढ़ा लीं। उसके मज़बूत हाथ ख़ूब दीखने लगे। तब उसने एक छुरी निकाली और उसे पत्थर पर तेज़ किया और तातारों ने घोड़ी का सिर पकड़ लिया। उसने घोड़ी का गला काट डाला और उसे धरती पर डाल दिया। फिर वह बैठ कर उसकी खाल छील कर उतारने लगा। औरतें और लड़कियाँ भी आ गईं और खाल को भीतर बाहर धोने लगीं। घोड़ी के टुकड़े-टुकड़े कर दिये गये और यह टुकड़े तातार के घर भेज दिये गये। सारा गाँव लाल दाढ़ीबाज के घर दावत खाने के लिये आ बैठा।

तीन दिन तक वह लोग घोड़ी का गोश्त खाते रहे, बूजा पीते रहे और मृतात्मा की शांति के लिये प्रार्थना करते रहे। सब तातार गाँव में ही रहे। चौथे दिन रोटी खा-पी चुकने के बाद ज़िलन ने उन्हें बाहर जाने की तैयारी करते देखा। घोड़े आये और वह तैयार हो गये। कोई दस आदमी, लाल दाढ़ीबाज भी उनमें था, चढ़ कर चल दिये। पर अब्दुल घर ही रहा। चाँद नया-नया निकल रहा था और रातें अँधेरी होती थीं।

ज़िलन ने सोचा—"अरे, आज भाग निकलने का मौक़ा है।" उसने कोस्टिलिन से कहा, पर कोस्टिलिन की हिम्मत न हुई।

वह बोला—"बच के कैसे भागेंगे ? हम लोग तो रास्ता भी नहीं जानते।"

ज़िलन ने कहा—"रास्ता मैं जानता हूँ।"

कोस्टिलिन ने जवाब दिया—"जो तुम रास्ता जानते भी हो, तो भी हम लोग एक रात में तो क़िले तक पहुँच नहीं सकते।"

ज़िलन बोला—"अगर हम नहीं पहुँच सकते तो हम जंगल में सोयँगे। देखो, मैंने कुछ पनीर भी बचा लिया है। यहाँ ही बैठे रहने और ऊँघने में क्या धरा है ? अगर उन्होंने तुम्हें छुड़ाने को रक़म भेज दी तो ठीक है, पर मान लो वह रुपयों का इन्तज़ाम न कर सके ! आज कल तातार नाराज़ हैं। रूसियों ने एक को मार डाला है। वह हम लोगों को मारने की सोच रहे हैं।"

वह बोला—"अच्छा, तो हम लोगों को निकल जाना चहिये।"

( ५ )

ज़िलन छेद में घुस गया। फिर उसने उसे इतना चौड़ा किया कि कोस्टिलिन भी उसमें से निकल सके। तब वह बैठे बाट देखते रहे कि कब गाँव में सन्नाटा छा जाय।

जैसे ही सन्नाटा छाया और ज़िलन दीवार के बाहर निकल आया। फिर उसने धीरे से कोस्टिलिन को पुकारा। कोस्टिलिन भी निकल आया पर ऐसा करने में उसकी टाँग एक पत्थर से अटक गई। इससे खड़-खड़ाहट हो गई।

मालिक का एक कुत्ता था। वह बड़ा भयानक था। वह चितकबरा था और नाम था उसका—उलयाशिन। ज़िलन ने यह चौकसी की थी कि कुछ समय पहले से उसे खिलाना-पिलाना शुरू कर दिया था। उलयाशिन ने आवाज़ सुनी और भौंकने लगा। और कुत्ते भी भौंकने लगे। ज़िलन ने धीमे से सीटी बजाई और उसके सामने पनीर का एक

टुकड़ा डाल दिया। उलयाशिन ज़िलन को पहिचानता था। उसने दुम हिलाई और भौंकना बन्द कर दिया।

लेकिन मालिक ने उलयाशिन की आवाज़ सुन ली थी। वह अपनी झोपड़ी से ही चिल्लाया—"उलयाशिन, उलयाशिन!"

जिलन ने कुत्ते की गरदन थपथपाई और कुत्ता शान्त हो गया। वह पूँछ हिला कर उसकी टाँगों से सिर रगड़ने लगा।

एक कोने में वह लोग कुछ देर बैठे रहे। फिर बिलकुल सन्नाटा हो गया। कभी-कभी बाड़े में एकाध भेड़ भले ही खाँस देती या सोते के पानी की आवाज़ आती। रात अँधेरी थी, ऊपर तारे चमक रहे थे। दूज का चाँद पहाड़ी की ओट में छिप कर धुँधला होता जाता था, उसके सींग के सिरे ही दीखते थे। घाटी का कोहरा जम कर सफ़ेद हो गया था।

ज़िलना उठा और साथी से बोला—"चलो भाई, अब बढ़ें।" वह चल दिये। पर कुछ ही दूर गये होंगे कि उन्हें मुल्ला की आवाज़ सुनाई दी। वह छत पर खड़ा हो अजाँ दे रहा था—"अल्लाह बिस-मिल्लाह, रहमानुल रहीम।" इसके मानी थे कि नमाज़ का वक्त हुआ, लोग मस्जिद जायँगे। इसलिये वह एक दीवाल के नीचे छिप कर बैठ गये और इन्तज़ार करने लगे कि लोग निकल जायँ। आखिर फिर सन्नाटा छा गया।

और फिर यह कहते-कहते कि अब ईश्वर मदद करेगा, वह दुबारा चल दिये। एक बाड़ा पार कर वह पहाड़ी के नीचे नदी की ओर गये, फिर नदी पार की और घाटी में चल दिये।

कोहरा घना था पर धरती के पास ही था। ऊपर तारे खूब चमक रहे थे। जिलन तारों के सहारे चलता गया। कोहरे ने ठंढक कर दी थी और चलना सुहावना लग रहा था। हाँ, पैर के जूते तकलीफ़ दे रहे थे। वह पुराने और घिसे-घिसाये थे। जिलन ने अपने जूते उतार कर फेंक दिये और नंगे पैरों ही पत्थरों पर फुदक-फुदक कर चलने लगा।

मिला। वह जंगल में घुस गये और झाड़ियों में होकर रास्ता ढूँढ़ने लगे। उन में अटक कर उनके कपड़े फट जाते थे। अन्त में उन्हें एक रास्ता मिल गया और वह उस पर चलने लगे।

इतने में उन्होंने रास्ते पर पैरों की टाप सुनी और रुक कर सुनने लगे। पहले वह घोड़े के पैर की सी टाप लगी, फिर रुक गई। वह चले और उन्हें फिर टाप सुनाई दी। जब वह रुके तो टाप रुक गई। जिलन इसके पास सरका, तो उसने रास्ते पर किसी को खड़ा पाया। वहाँ इतना अँधेरा नहीं था। यह कुछ-कुछ घोड़े-सा लगता था, पर बिलकुल घोड़ा भी न लगता था और इसके ऊपर कुछ अजीब-सी चीज़ थी जो आदमी नहीं मालूम होती थी। उसने उसकी घुर्राहट भी सुनी और सोचा कि यह है कौन ? जिलन ने धीरे से सीटी बजाई और वह झपट कर रास्ता छोड़ झाड़ियों में जा छिपा। तमाम जंगल में खड़खड़ाहट सुनाई देने लगी। ऐसा लगा मानो कोई तूफ़ान आ गया हो और झाड़ियों को तोड़े डालता हो।

कोस्टिलिन इतना डर गया कि वह धरती पर बैठ गया। लेकिन जिलन हँसकर बोला—"अरे यह तो बारहसिंगा है। तुम नहीं सुनते हो कि वह अपने सींगों से टहनियाँ तोड़े डाल रहा है। हम उससे डर रहे हैं और वह हमसे डर रहा है।"

वह बढ़ चले। सप्तर्षि छिपने जा रहे थे। भोर होने वाला था और उन्हें मालूम नहीं था कि वह ठीक रास्ते पर जा रहे हैं या नहीं। जिलन सोच रहा था कि यही रास्ता है जिधर से तातार उसे लाये थे और रूसी क़िला अब भी कोई सात मील दूर था। पर उसके पास रास्ते जानने का कोई निश्चित उपाय नहीं था और रात में रास्ता अक्सर भूल जाता है। कुछ देर बाद वह एक चौराहे पर पहुँचे। कोस्टिलिन बैठ गया और बोला—"तुम जो चाहो करो, मैं तो एक क़दम आगे नहीं चल सकता। मेरे पैर काम नहीं देते।"

जिलन ने उसे फ़ुसलाने की कोशिश की।

"नहीं भाई, मैं कभी भी वहाँ न पहुँच सकूँगा। यह मेरे वश की बात नहीं है।"

जिलन नाराज़ हो गया और रुखाई से बोला—

"अच्छा कोई बात नहीं है, मैं अकेला ही चला जाऊँगा। नमस्कार।" इस पर कोस्टिलिन फिर उछल कर पीछे हो लिया। वह तीन मील और आगे बढ़े। जंगल में कोहरा घना छा गया था। उन्हें सामने गज भर दूर की जमीन नहीं दीखती थी और तारे धुँधले गये थे।

एकाएक उन्होंने अपने सामने घोड़े के खुरों की आवाज सुनी। पत्थर पर टाप साफ़ सुनाई दे रही थी। जिलन चित्त लेट गया और कान लगा कर सुनने लगा।

"हाँ, यही बात है! एक घुड़सवार हमारी ओर आ रहा है।"

वह रास्ता छोड़ कर भागे, झाड़ियों के नीचे घुस गये और बाट देखने लगे। जिलन सड़क की ओर सरक गया और देखने लगा। एक घुड़-सवार तातार एक गाय को हाँकता जाता था और कुछ गुन-गुनाता जाता था। वह निकल गया। जिलन कोस्टिलिन के पास लौट आया।

"ईश्वर की कृपा से वह आगे निकल गया है। खड़े हो जाओ और बढ़े चलो।"

कोस्टिलिन ने उठने की कोशिश की, लेकिन फिर गिर पड़ा।

"मैं नहीं चल सकता, सच कहता हूँ, मैं नहीं चल सकता! मुझ में ताक़त तो रह ही नहीं गई है।"—वह बोला।

वह भारी और मोटा था और ज़ोर-ज़ोर से साँस ले रहा था। पैर लोहू-लुहान थे और कोहरे की ठंढ पड़ रही थी, इस कारण वह बिलकुल लुंज हो गया था। जिलन ने उसे उठाने की कोशिश की कि वह एकाएक चीख़ पड़ा—"अरे, बड़ा दुखता है!"

जिलन का दिल बैठ गया।

"अरे क्यों चिल्ला रहे हो। तातार पास ही में है, उसने सुन लिया होगा।" और उसने सोचा कि यह तो बिलकुल खतम हो चुका है। अब क्या करूँ। एक साथी को छोड़ कर जाना भी ठीक न होगा।

"अच्छा, तो तुम खड़े हो जाओ और मेरी पीठ पर चढ़ लो। अगर तुम चल ही नहीं सकते हो, तो मैं तुम्हें अपनी पीठ पर ले जाऊँगा।"

उसने कोस्टिलिन को चढ़ा लिया, फिर वह उसे लेकर रास्ते पर चल दिया।

जिलन बोला—"ईश्वर के नाम पर मेरा गला न दबा डालो। मेरे कन्धे ही पकड़े रहो।"

जिलन को बोझ भारी पड़ा। उसका भी पैर लोहू-लुहान था और वह थक गया था। कभी-कभी वह कोस्टिलिन को साधने के लिये झुक जाता था और उसे एक दचका दे कर ऊँचा बैठा लेता। फिर चल देता।

लेकिन तातार ने ज़रूर कोस्टिलिन की चीख़ सुन ली थी। एकाएक जिलन ने किसी को अपने पीछे सरपट दौड़ते और तातारी भाषा में चिल्लाते सुना। वह झाड़ियों में घुस गया। तातार ने अपनी बन्दूक निकाल कर चलाई, पर गोली उनके न लगी। वह अपनी भाषा में चिल्लाता हुआ सड़क पर दौड़ गया।

जिलन बोला—"दोस्त, अब हम मारे गये। वह कुत्ता और तातारों को इकट्ठा कर हम लोगों का शिकार करायेगा। अगर हम यहाँ से दो एक मील न निकल गये तो सब खेल खतम है।" और वह मन में सोचने लगा कि इसको मैंने अपने सिर बाँधा ही क्यों? जो अकेला होता तो कभी का पहुँच गया होता।

कोस्टिलिन बोला—"तुम अकेले ही चले जाओ। मेरे कारण तुम भी क्यों मरो।"

"नहीं, मैं नहीं जाऊँगा। मैं एक साथी को नहीं छोड़ सकता।"

और उसने कोस्टिलन को पीठ पर बैठाया और फिर चल दिया। वह अपने रास्ते पर आध मील या कुछ और ही गये होंगे। वह जंगल में ही थे और उसका छोर नहीं दिखाई देता था। लेकिन कोहरा छा रहा था और बादल घिर रहे थे। तारे दिखाई नहीं देते थे। जिलन बिलकुल थक गया था। रास्ते में उन्हें एक ऐसा सोता मिला जिसके दोनों तरफ पत्थर जमे थे। जिलन रुक गया और उसने कोस्टिलिन को बैठा दिया।

वह बोला—"कुछ देर आराम कर लें और पानी पी लें। जो पनीर बँधा है उसे भी खा लें। अब बहुत दूर नहीं है।"

पर वह मुश्किल से पानी पीने बैठा ही होगा कि उसे पीछे से घोड़ों की टाप सुनाई दीं। वह फिर दाहिनी ओर की झाड़ियों में घुस गये और एक डाल के नीचे पड़ रहे।

उन्हें तातारों की बोली सुनाई दी। तातार वहीं रुके जहाँ से उन्होंने रास्ता बदला था। फिर उन्होंने कुछ बातचीत की और यह मालूम हुआ कि खोज लेने के लिये कुत्ता छोड़ दिया। झाड़ियों के खड़खड़ाने की आवाज़ हुई और पीछे से एक अजीब कुत्ता आ खड़ा हुआ। वह रुक गया और भौंकने लगा।

तब तातार भी जो अजनबी थे, चढ़े चले आये। उन्होंने जिलन और कोस्टिलन को पकड़ लिया और उन्हें बाँध कर घोड़ों पर बैठा दिया। फिर वह चल दिये।

जब वह दो मील गये होंगे तो उन्हें अब्दुल व दो और तातार मिले। अजनबियों से बात कर उसने जिलन और कोस्टिलिन को अपने दो घोड़ों पर बैठाया और उन्हें गाँव वापस ले गया।

अब्दुल न इस बार हँसा, न उसने उनसे कुछ कहा।

भोर होते-होते वह गाँव पहुँच गये और गली में बैठा दिये गये।

बच्चों ने आकर उन्हें घेर लिया। वह चिल्लाते, ढेला फेंकते और कोड़े मारते।

तातार एक घेरा बना कर बैठे। पहाड़ी किनारे का बूढ़ा भी उनमें था। वह सलाह करने लगे। जिलन ने सुना कि वह सोच रहे थे कि उसके और कोस्टिलिन के साथ क्या करना चाहिये। किसी ने कहा, उन्हें और दूर पहाड़ों में भेज देना चाहिये। लेकिन बूढ़ा बोला—"इन्हें मार डालना चाहिये।"

अब्दुल ने उससे बहस की और कहा—"मैंने इन पर रुपया लगाया है। मुझे इनके मुआवज़े की रक़म तो मिल जानी चाहिये।" लेकिन बूढ़ा बोला—"तुम्हें यह कुछ नहीं देने के, और तुम पर उल्टी मुसीबत लावेंगे। रूसियों को खिलाना पाप है। इन्हें मार कर सब क़िस्सा ही खत्म कर दो।"

फिर वह उठ गये। जब चले गये तो मालिक जिलन के पास आकर बोले—"अगर तुम्हारे मुआवज़े की रक़म पन्द्रह दिन में नहीं आती तो मैं तुम्हारी चमड़ी उधेड़ दूँगा। और अगर तुमने भागने की कोशिश की तो तुम्हें कुत्ते की मौत मारूँगा। घर एक चिट्ठी लिख दो और ठीक तरह से लिख दो।"

कागज़ लाया गया और उन्होंने चिठ्ठियाँ लिख दीं। उनके पैरों में बेड़ियाँ डाल दी गईं और वह मस्जिद के पीछे गहरे गढ़े में छोड़ दिये गये। गढ़ा कोई बारह फीट लम्बा-चौड़ा होगा।

( ६ )

अब उनकी ज़िन्दगी बड़ी मुसीबत की हो गई। उनकी बेड़ियाँ कभी उतारी नहीं जाती थीं और न उन्हें खुली हवा में घूमने दिया जाता था। उनके लिये बिना पका आटा फेंक दिया जाता था, जैसे कुत्तों को फेंक दिया जाता है और तसले में पानी लटका दिया जाता था।

गढ़े में सील और बड़ी बदबू भरी थी। कोस्टिलिन तो बीमार पड़ गया। उसका सारा शरीर सूज गया और शरीर भर में दर्द होता। दर्द के मारे या तो वह कराहता रहता या सोया करता। जिलन भी सुस्त पड़ गया। भविष्य अच्छा नहीं दीखता था और उसे बचाव का कोई रास्ता नहीं सूझा।

उसने एक सुरंग बनाने का प्रयत्न भी किया, पर मिट्टी डालने को बाहर कोई जगह न थी। उसके मालिक ने यह देख लिया और उसे मार डालने की धमकी दी।

एक दिन वह ऐसे ही गढ़े के फ़र्श पर बैठा भाग निकलने की सोच रहा था। मन बहुत उदास था। एकाएक उसकी गोदी में एक रोटी गिरी, फिर दूसरी गिरी, फिर तो टपापट कुछ खुबानियाँ आ गिरीं। उसने ऊपर मुँह किया—दीना खड़ी थी। उसने उसकी ओर देखा, फिर हँसी और भाग गई। और जिलन सोचने लगा—"क्या दीना मेरी मदद न करेगी?"

उसने गढ़े में कुछ ज़मीन साफ़ की! फिर कुछ मिट्टी खुरच ली और खिलौने बनाने लगा। उसने आदमियों, घोड़ों और कुत्तों की शक्लें बनाईं। वह सोचता था—"अगर दीना आयेगी तो मैं इन्हें फेंक दूँगा।"

लेकिन दूसरे दिन दीना न आई। जिलन ने घोड़ों की टाप सुनी और कुछ लोग पास से निकल गये। तातारों ने मसजिद के पास सभा की। वह चिल्लाते जाते थे और बहस करते जाते थे। कई बार 'रूसी' 'रूसी' नाम सुन पड़ा। उसने बूढ़े की आवाज़ भी सुनी। पर वह यह समझ न पाया कि क्या बात हो रही थी। उसने अन्दाज लगाया कि रूसी सेना आस-पास थी और तातारों को डर था कि कहीं वह गाँव में न आ जाय। वह यह भी नहीं समझ पा रहे थे कि अपने कैदियों का क्या करें।

कुछ देर बातचीत करके वह चले गये। एकाएक उसने ऊपर कुछ खड़खड़ाहट सुनी। सिर उठाया तो सिरे से झुकी दीना दीख पड़ी। वह इतनी झुक गई थी कि सिर घुटनों से भी नीचे लटक आया था और उसकी हमेल की मोहरें गढ़े पर लटक रही थीं। उसकी आखें तारों-सी चमक रही थीं। उसने आस्तीन से दो पनीरें निकालीं और उसके पास फेंक दीं। जिलन लेकर बोला—"तुम पहले क्यों नहीं आईं। मैंने तुम्हारे लिये कुछ खिलौने बनाये हैं। लो, पकड़ो।" और वह एक-एक कर के खिलौने फेंकने लगा।

उसने सिर हिलाया और उनकी ओर देखा भी नहीं।

वह बोली—"मुझे कुछ नहीं चाहिये।" कुछ देर चुप बैठी रही फिर कहती गई—"इवान, वे लोग तुम्हें मार डालना चाहते हैं।" और उसने अपने गले की ओर इशारा किया।

"कौन मुझे मार डालना चाहता है?"

"पिता जी। बूढ़े लोग कहते हैं कि तुम्हें मार डालना चाहिये। लेकिन भाई, मुझे तुम्हारे लिये रंज है।"

जिलन बोला—"अच्छा, जो तुम्हें मेरे लिये रंज है तो मुझे एक लम्बा बाँस ला दो।"

उसने सिर हिलाया मानो कहा, "नहीं, मैं नहीं लाऊँगी।"

उसने हाथ जोड़े और प्रार्थना कर कहा—"दीना, मेहरबानी करके यह काम कर दो। अच्छी दीना, रानी दीना, मैं तुम्हारे हाथ जोड़ता हूँ।"

वह बोली—"मैं नहीं ला सकती। वह मुझे बाँस लाता देख लेंगे। अभी सब घर पर ही हैं।" और वह चली गई।

जब शाम हुई तो जिलन इधर-उधर देखता बैठा रहा। वह सोच रहा था कि अब जाने क्या होगा। तारे चमक रहे थे, पर चन्दमा अभी नहीं निकला था। मुल्ला की अजाँ सुनाई दी, फिर सन्नाटा हो गया।

जिलन ऊँघने लगा था। वह सोच रहा था—"लड़की बाँस लाने में डरती होगी।"

एकाएक उसे सिर पर कुछ मिट्टी-सी गिरती मालूम पड़ी। ऊपर देखा, तो एक लम्बा बाँस गढ़े के सामने की दीवार में घुसता आ रहा था। इस तरह दीवार से अटकता-अटकता वह धीरे-धीरे सरक कर गढ़े में आ गया। जिलन की तबियत सचमुच हरी हो गई। उसने उसे पकड़ कर धरती पर गिरा लिया। यह एक मज़बूत बाँस था। उसने इसे मालिक के मकान की छत पर पड़ा देखा था।

उसने ऊपर देखा। ऊँचे आकाश में तारे चमक रहे थे और ठीक सिरे के ऊपर अँधेरे में दीना की आँखें ऐसी चमक रही थीं जैसे बिल्ली की आँखें चमकती हैं। सिरे के पास उसने मुँह झुकाया और धीरे से फुस-फुसाई—"इवान, इवान?" उसने अपने मुँह के सामने अँगुली रख कर इशारा किया कि वह भी धीरे से बोले।

"क्या है?"—जिलन बोला।

"सब चले गये हैं। बस दो रह गये हैं।"

जिलन बोला—"अच्छा कोस्टिलिन, आओ चलें। एक कोशिश और सही। मैं तुम्हारी मदद करूँगा।"

लेकिन कोस्टिलिन कुछ सुनने को तैयार न था। वह बोला—"नहीं भाई! यह साफ़ मालूम है कि मैं यहाँ से निकल नहीं सकता। जब मैं उठ बैठने लायक नहीं हूँ तो चलूँगा कैसे?"

"अच्छा भाई तो मैं बिदा माँगता हूँ। देखो मेरा बुरा न मानना।" और दोनों गले मिले। जिलन ने बाँस उठा लिया और दीना से कहा कि वह उसे पकड़े रहे। और फिर वह चढ़ने लगा। एकाध बार वह फिसला भी, बेड़ियों के मारे चढ़ा नहीं जाता था। कोस्टिलिन ने उसकी मदद कर दी और वह सिरे पहुँच गया। अपने नन्हें-नन्हें हाथों से

उसकी कमीज़ का छोर पकड़ कर दीना ने भी पूरी ताकत लगा कर खींचा। वह हँसती जा रही थी।

बाँस खींच कर जिलन ने उसे दीना को दिया और बोला—"इसको अपनी जगह पर रख देना दीना, नहीं तो वह देख लेंगे और तुम पर मार पड़ेगी।"

वह बाँस खींच ले गई और जिलन पहाड़ी के नीचे चला गया। जब वह ढाल पर पहुँचा तो उसने एक तेज़ पत्थर उठा लिया और सोचा कि बेड़ी काट डाले। लेकिन बेड़ियाँ मजबूत थीं, दूसरे उन पर चोट भी पूरी नहीं पड़ती थी। तब उसने पहाड़ी से किसी को धीरे-धीरे फुदकते-दौड़ते आते सुना। उसने सोचा—जरूर यह दीना ही होगी।

दीना आई, उसने पत्थर उठाया और बोली—"लाओ मैं भी देखूँ।"

वह घुटने टेक कर बैठ गई और बेड़ी तोड़ने की कोशिश करने लगी। पर उसके नन्हें-नन्हें मुलायम हाथ थे और उनमें ताक़त भी नहीं थी। उसने पत्थर फेंक दिया और रोने लगी। तब ज़िलन फिर बेड़ियों पर जुट गया और दीना उसके कन्धे पर हाथ धरे उसके पास बैठी रही।

ज़िलन ने इधर-उधर देखा और पहाड़ी के पीछे कुछ लाल-लाल प्रकाश दीखा। चन्द्रमा निकल ही रहा था। उसने सोचा—"चन्द्रमा निकलने से पहले ही मुझे घाट पार कर जंगल में पहुँच जाना चाहिये।" वह उठ खड़ा हुआ और पत्थर फेंक दिया। बेड़ियाँ रहें या न रहें वह चला ही जायगा।

उसने कहा—"अच्छा बिदा दीना रानी! मैं तुम्हें जन्म भर न भूल सकूँगा।"

दीना ने उसके कपड़े पकड़े और टटोल कर देखा कि जो पनीर वह लाई थी उसे कहाँ बाँधे है। जिलन ने उससे पनीर ले लिया।

"धन्यवाद, रानी बिटिया ! अब मैं चला जाऊँगा तो तुम्हें गुड़ियाँ कौन बनायेगा ।" और उसने उसका सिर थपथपापा दिया।

दीना रो पड़ी और उसके हाथों में उसने अपना सिर छिपा लिया। फिर वह बकरी की तरह फुदकती पहाड़ी पर चढ़ गई। उसकी हमेल की मुहरें उसकी पीठ से लग कर बजती जाती थीं।

ज़िलन ने सूली का चिन्ह अंकित किया, ईश्वर का नाम लिया, बेड़ियों का ताला हाथ में लिया, जिससे वह बजे नहीं और सड़क पर चल दिया। वह अपने बेड़ी बँधे पैर घसीटे जा रहा था, निगाह उसकी उधर थी जिधर चन्द्रमा उगने को था। अब वह रास्ता जानता था। यदि वह सीधा चलता तो छः मील चलने को था। बस उसे चन्द्रमा के निकलने से पहले जंगल पहुँच भर जाना था। उसने नदी पार की। पहाड़ी के पीछे रोशनी सफ़ेद होती जा रही थी। उसे देखते-देखते वह घाटी में बढ़ता गया। चन्द्रमा अभी नहीं दिख रहा था। फिर रोशनी कुछ तेज़ हो गई। घाटी का एक हिस्सा रोशनी से डूबता जाता था और अँधेरा पहाड़ी के नीचे आता जाता था। रोशनी धीरे-धीरे उसके पास आ रही थी।

ज़िलन अँधेरे में चलता चला गया। वह जल्दी-जल्दी भाग रहा था, पर चन्द्रमा उससे भी जल्द चल रहा था। पहाड़ियों के दाहिने ओर के सिरे तो चमकने भी लगे थे। जैसे ही वह जंगल के पास पहुँचा, चन्द्रमा पहाड़ियों के पीछे से चमका और दिन का-सा भक्काटा हो गया। पेड़ों की एक-एक पत्तियाँ गिनी जा सकती थीं। पहाड़ी पर रोशनी तो थी, पर मौत का-सा सन्नाटा छा रहा था। सिवाय नदी के पानी की कलकल के दूसरी आवाज़ सुनाई नहीं देती थी।

ज़िलन बेखटके जंगल पहुँच गया। उसे कोई मिला नहीं। वहाँ उसने एक अँधेरा स्थान पसन्द किया और सुस्ताने बैठ गया।

वहाँ उसने आराम किया और एक पनीर की टिकया खाई। फिर उसने एक पत्थर उठा लिया और बेड़ियाँ तोड़ने लगा। पत्थर मारते-मारते उसके हाथ दुखने लगे, पर उनका आँकड़ा न टूट सका। वह उठा और सड़क पर चल दिया। कोई आध मील से ज़्यादा पहुँचा होगा कि वह बिलकुल थक गया। उसके पैर ज़ोरों से दर्द कर रहे थे। हर दस क़दम पर उसे रुकना पड़ता। "पर" उसने सोचा, "इसके अलावा कोई चारा भी नहीं है। जब तक दम में दम है, मुझे घिसटना चाहिये। अगर मैं एक बार बैठ गया तो उठना दूभर हो जायगा। मैं किले तक तो नहीं पहुँच सकता, पर जब दिन हो जायगा तो मैं जंगल में पड़ रहूँगा। वहाँ दिन भर पड़ा रहूँगा और फिर रात में चल दूँगा।"

वह रात भर चलता रहा। घुड़सवार तातार उसको पार कर निकल गये। पर उसने उनकी आवाज़ दूर से सुन ली थी और वह एक पेड़ के पीछे छिप रहा था।

चन्द्रमा पीला पड़ता जा रहा था और ओस गिरने लगी थी। भोर होने वाला था और ज़िलन जंगल के छोर तक नहीं पहुँच पाया था। उसने सोचा—"कोई बात नहीं है, मैं तीस क़दम और चलूँगा और फिर पेड़ों में घूम कर कहीं बैठ जाऊँगा।"

वह तीस क़दम चला तो देखा कि वह बिलकुल छोर पर आ लगा था। उसने किनारा पार किया। अब रोशनी हो रही थी और उसके सामने मैदान व किला दीख पड़ रहा था। बायीं तरफ़ ढाल के नीचे एक जगह आग बुझ रही थी और उसके चारों ओर धुआँ उठ रहा था। अलाव के आस-पास आदमी बैठे थे।

उसने ग़ौर से देखा तो बन्दूकें चमकती दिखाई दीं। वह सब सिपाही थे—कोसक थे!

ज़िलन ख़ुशी के मारे फूल गया। उसने अपनी सारी शक्ति बटोरी

और पहाड़ी के नीचे चलना शुरू किया। मन में कहता जाता था—"ईश्वर करे कोई मुझे घुड़सवार तातार न देख पाये! अब मैं खुले खेत में हूँ। यद्यपि अब मैं पास हूँ, फिर भी वक्त पर वहाँ नहीं पहुँच पाऊँगा।"

उसने यह कहा ही होगा कि कुछ सैकड़े गज़ दूर एक पहाड़ी पर उसने तीन तातार देखे।

उन्होंने भी उसे देख लिया और दौड़े। उसका दिल बैठ गया। उसने हाथ हिलाया और सारी शक्ति लगा कर चिल्लाया—"भाइयो, भाइयो, बचाओ!"

कोसकों ने भी उसकी आवाज़ सुन ली। उनमें से एक घुड़सवार टुकड़ी तातारों का रास्ता रोकने के लिये बढ़ी। पर कोसक दूर थे और तातार पास थे। फिर भी ज़िलन ने आखिरी कोशिश की। बेड़ियों को हाथ से उठाये वह कोसकों की ओर भागा। उसे यह ध्यान नहीं था कि वह क्या कर रहा था, पर वह बराबर ईश्वर का नाम लेता जाता था और चिल्लाता जाता था—"भाइयो, भाइयो, भाइयो!"

कोई पन्द्रह कोसक थे। तातार डर गये और उसके पास पहुँचने से पहले ही रुक गये। ज़िलन कोसकों तक लड़खड़ा कर पहुँच गया।

उन्होंने उसे घेर लिया और पूछने लगे—"तुम कौन हो? क्या करते हो? कहाँ से आ रहे हो?"

लेकिन ज़िलन आपे से बाहर था। वह तो रोता था और बार-बार चिल्लाता था—"भाइयो, भाइयो!"

फिर और सिपाही दौड़ते आये और उसे घेर लिया। एक ने उसे रोटी दी तो दूसरे ने वोडका। एक उसका•एक लबादा उठाने लगा, सरा बेड़ियाँ तोड़ने लगा।

अफ़सरों ने उसे पहिचान लिया और उसके साथ किले तक गये। सिपाही उसको वापस पाकर ख़ुश हुये। उसके तमाम साथियों ने उसे घेर लिया।

ज़िलन ने सारी आप बीती उन्हें सुना दी।

वह बोला—"भाई, ऐसे मैं घर गया और शादी की। नहीं नहीं, मालूम होता है, मेरे भाग्य में ही यह बदा नहीं था।"

और वह काकेशस में नौकरी ही करता रहा। एक महीने बाद कोस्टिलिन भी छोड़ दिया गया। उसे पाँच हज़ार रुबल मुआवज़े के देने पड़े। जब वह वापस लाया गया, तो मरने के पास पहुँच गया था।

रूस

# शर्त

लेखक—एण्टन चेख़व

शरद ऋतु की एक अँधेरी रात थी। वृद्ध महाजन रईस अपने कमरे में इधर से उधर घूम रहा था और कुछ सोचता जाता था। उसे पन्द्रह वर्ष पहले की याद आ रही थी, जब कि एक दिन उसने अपने मित्रों को प्रीति-भोज दिया था। भोज में अनेक चतुर और बुद्धिमान् लोग सम्मिलित थे और आपस में मनोरञ्जन की अनेक प्रकार की बातें हुई थीं। बहुत-सी बातों के बीच में मृत्यु-दण्ड का भी विषय उठा। अधिकांश अतिथि-गण, जिनमें कितने ही सम्पादक, लेखक तथा भिन्न-भिन्न विषयों के विशेषज्ञ थे, मृत्यु-दण्ड के विपक्ष में रहे। उनकी समझ में मृत्यु-दण्ड एक पुराना और असमयानुकूल दण्ड-विधान था—ईसाई शासन के अयोग्य और नीति तथा आचरण के एकदम विपरीत। अतिथियों में से कुछ का विचार था कि मृत्यु-दण्ड का सर्वत्र बहिष्कार करके उसके स्थान में आजीवन कारावास का विधान होना चाहिये।

गृह-स्वामी ने कहा—"मैं आपसे बिलकुल सहमत नहीं हूँ। जहाँ तक मुझे याद है, मुझे कभी मृत्यु-दण्ड या कारावास नहीं हुआ। परन्तु ऐसे प्रसंगों में पूर्वानुमति से यदि कुछ कहा जा सकता है, तो मैं कहूँगा कि आजीवन कारावास की अपेक्षा मृत्यु-दण्ड कहीं अधिक हित-गर्भ और नीतिसम्मत है। फाँसी पर लटकाने से मनुष्य तुरन्त मर जाता

है; परन्तु जेल में डाल कर आप उसकी धीरे-धीरे जान खींचते हैं। आप ही बतलाइये, कौन अधिक दयाशील है? वह जो कुछ क्षण के भीतर ही आपके प्राण ले लेता है, अथवा वह जो धीरे-धीरे, वर्षों तक, उनको बराबर आपके भीतर से निकालता रहता है।"

एक अतिथि बोला—"यह दोनों ही नीति-विरुद्ध हैं, क्योंकि दोनों का अभिप्राय एक ही है—मनुष्य का जीवन लेना। आपकी शासन-व्यवस्था ईश्वरीय तो है नहीं। फिर क्या अधिकार है आपको कि जिस वस्तु को आप लौटा नहीं सकते, उसे केवल अपनी इच्छा के कारण दूसरे से ज़बर्दस्ती छीनें?"

उपस्थित सज्जनों में एक महाशय वकील भी थे। इनकी आयु लगभग पच्चीस वर्ष की होगी। जब उनकी सम्मति पूछी गई तो उन्होंने कहा—"मृत्यु-दण्ड और आजीवन कारावसा, वास्तव में दोनों एक से ही नीति-विरुद्ध हैं; परन्तु मुझे यदि दोनों में से किसी एक को पसन्द करना पड़े तो मैं कारावास को ही पसन्द करूँगा। किसी न किसी तरह जीते रहना, न जीने से फिर भी अच्छा है।"

इसके पश्चात् एक अच्छा शास्त्रार्थ हो पड़ा। महाजन, जो उस समय अब से पन्द्रह वर्ष छोटा था, उत्तेजित और अधीर हो उठा। मेज़ के ऊपर अपना हाथ पटकते हुये उसने वकील की ओर घूम कर कहा—"बिलकुल ग़लत बात है। मैं दो लाख की शर्त लगाने को तैयार हूँ। आजीवन! आप एक ही कोठरी में बराबर पाँच साल भी बन्द नहीं रह सकते।"

"अच्छा, यदि आप शर्त लगा रहे हैं तो मैं भी कहता हूँ, मैं पाँच साल नहीं, पन्द्रह साल तक रह सकता हूँ।"

"पन्द्रह? अच्छा तो फिर तय!" महाजन ने उत्तेजना के भाव से कहा—"मित्रो, मैं इन्हें दो लाख रुपया दूँगा।"

इस प्रकार एक साधारण मज़ाक से इस उन्मत्त और भयानक

शर्त की परिणति हुई। स्वेच्छावृत और दुर्ललित महाजन के पास उस समय लाखों की कोई गिनती नहीं थी। वह अपने गौरव के आनन्द में आपे से बाहर था। भोजन के समय उसने हँसी के भाव से वकील से कहा—"मेरे मित्र, आप अभी नवयुवक हैं। अपनी उत्तेजना को सँभालिये जिससे बाद में पछतावा न हो। दो लाख मेरे समीप कुछ नहीं है। परन्तु आप अपने जीवन के सर्व-श्रेष्ठ भाग के तीन-चार वर्ष व्यर्थ में नष्ट करने का इरादा कर रहे हैं। मैं कहता हूँ, तीन-चार, क्योंकि मैं जानता हूँ कि इससे अधिक आप कदापि नहीं रह सकेंगे। साथ ही यह भी याद रखिये कि ज़बर्दस्ती के कारावास की अपेक्षा अपनी इच्छा से स्वीकार किया हुआ कारावास कहीं अधिक कठिन और कष्टप्रद है। यह विचार ही कि आप इच्छा होने पर किसी समय भी अपने को मुक्त कर सकते हैं, आपके बन्दी-जीवन को सदा दुःख देता रहेगा। मुझे आप पर तरस आता है।"

इस समय वही महाजन अपने कमरे के एक कोने से दूसरे कोने में चक्कर लगा रहा था और चिन्ता कर रहा था।

( २ )

वह सोचता था—

मैंने यह शर्त क्यों बदी? क्या लाभ हुआ? वकील के जीवन के पन्द्रह वर्ष नष्ट हुये और मैं दो लाख रुपया खो रहा हूँ। क्या इस सब से संसार को विश्वास हो जायगा कि मृत्यु-दण्ड कारावास से अच्छा है या बुरा है? कैसा वाहियात और भद्दा मालूम होता है! मेरी रोटी लग कर मुटाये हुये आदमियों की सी बात थी। और वकील की केवल धनलोलुपता थी। बस, इससे अधिक और कुछ नहीं।

फिर भोज के बाद जो कुछ हुआ था उसकी महाजन को याद आई। यह निश्चित हुआ था कि महाजन के ही मकान में, बगीचे की तरफ़ की एक कोठरी में वकील अपनी कारावधि बिताये और उसके

ऊपर कठोर निरीक्षण और पूरी चौकसी रक्खी जावे। यह तय हुआ था कि इस अवधि के भीतर उसे कोठरी के बाहर नहीं निकलने दिया जायेगा और वह किसी से मिल-जुल नहीं सकेगा; मनुष्य का शब्द भी नहीं सुन सकेगा; परन्तु उसे समाचार-पत्र और मित्रों के पत्र आदि मिल सकेंगे। वह गाने-बजाने का सामान रख सकता था, पुस्तकें पढ़ सकता था, पत्र लिख सकता था, शराब और तम्बाखू पी सकता था। प्रतिज्ञा के अनुसार वह एक खिड़की के द्वारा जो इसी अभिप्राय से बनाई गई थी, शेष सृष्टि के साथ संवाद कर सकता था; परन्तु खमोशी के साथ मूक और निश्चल दर्शन के रूप में। प्रत्येक आवश्यक वस्तु जैसे पुस्तकें, शराब, वाद्य-सामग्री आदि छोटा सा पुर्जा लिख भेजने से उसको मिल सकती थी जिसे उसको खिड़की से गिरा देना होता था। प्रतिज्ञा-पत्र में उस प्रत्येक छोटी और बड़ी बात का उल्लेख किया गया था, जिससे वकील का जीवन अधिक से अधिक एकान्त, निरोग और विविक्त हो सकता था, और इस प्रतिज्ञा-पत्र के अनुसार वकील बाध्य था कि वह पूरे पन्द्रह वर्ष—१४ नवम्बर सन् १८७० के बारह बजे से १४ नवम्बर सन् १८८५ के बारह बजे तक—कोठरी में बन्द रहे। कोठरी से निकल भागने की वकील जरा सी भी कोशिश, चाहे वह नियत समय से दो ही मिनट पहले हो, महाजन को दो लाख देने की उसकी जिम्मेदारी से मुक्त करती थी।

कारावास के प्रथम वर्ष में वकील का जहाँ तक उसके पुर्जों से पता चलता था, अपनी एकान्तता और जीवन की निर्विशेषता से बड़ा कष्ट पहुँचता था। रात और दिन उसके कमरे से पियानो की आवाज़ आती रहती थी। शराब और तम्बाखू से उसने किनारा कर लिया। उसने लिखा था,—शराब पीने से इच्छायें बढ़ती हैं और इच्छायें एक कैदी की परम शत्रु हैं। इसके अतिरिक्त और किसी बात से इतनी झुँझलाहट नहीं होती, जितनी सदैव अच्छी शराब ही पीते रहने से।

शराब और तम्बाखू पीते रहने से उसकी कोठरी की वायु ख़राब होती थी। पहले वर्ष में वकील को हलकी और रोचक पुस्तकें पढ़ने के लिये भेजी गईं—पेचीदे और संकीर्ण प्रेम-रस के उपन्यास, पाप और पाप के कुतूहल आदि की कहानियाँ, सुखान्त प्रहसन इत्यादि।

दूसरे वर्ष पियानो की ध्वनि बिलकुल नहीं सुनाई दी और वकील ने केवल श्रेष्ठ और प्राचीन साहित्य के ग्रान्थों के लिये ही इच्छा प्रकट की। पाँचवे वर्ष पुनः संगीत सुनाई दिया। और बंदी ने शराब माँगी। जो लोग उसके निरीक्षण के लिये नियुक्त थे, उन्होंने बतलाया कि उस वर्ष भर इसने खाने-पीने, मदिरा-पान और चारपाई पर पड़े रहने के अतिरिक्त और कुछ नहीं किया। वह प्रायः जम्हाइयाँ लिया करता और क्रोध में अपने आप ही कुछ बातें किया करता। पुस्तकें उसने बिलकुल नहीं पढ़ी। कभी रात को वह दीपक के सामने लिखने बैठ जाता और घंटों लिखा करता। फिर दिन निकलने पर सबको फाड़ डालता। अनेक बार मालूम हुआ कि वह रोता था।

छटे वर्ष के पिछले भाग में बंदी ने बड़े उत्साह के साथ दर्शन, इतहास तथा भिन्न-भिन्न भाषाओ का अध्ययन करना आरम्भ किया। उसकी अध्ययन-क्षुधा इतनी अधिक बढ़ी कि महाजन को उसके लिये पुस्तकें प्राप्त करना कठिन हो गया। चार वर्ष के भीतर उसे, वकील की प्रार्थना पर लगभग छः सौ ग्रन्थ मँगवाने पड़े। इसी उन्मत्त उत्साह के समय में एक बार महाजन को उसका एक छोटा पत्र मिला, जिसमें लिखा था—"प्रिय काराध्यक्ष ! मैं अपनी इन पंक्तियों को छः भिन्न-भिन्न भाषाओं में लिख कर भेजता हूँ। कृपया इन्हें निपुण भाषाविज्ञों को दिखाना, वे इनको पढ़ें और यदि उन्हें इनमें कोई भी भूल या अशुद्धि न मालूम हो तो, मेरी तुम से प्रार्थना है कि बाग़ में एक बन्दूक छुड़वा देना। उसकी आवाज़ से मैं समझ जाऊँगा कि मेरी मेहनत बेकार

नहीं गई है। प्रत्येक देश और काल के प्रतिभासम्पन्न व्यक्ति अपनी-अपनी भिन्न-भिन्न भाषाओं में बोलते और व्यवहार करते हैं; परन्तु उन सब के भीतर समरूप से एक ही धारा प्रवाहित होती रहती है। आह! यदि तुम मेरे उस अलौकिक आनन्द की कल्पना कर सकते जिसका मैं इस समय अनुभव कर रहा हूँ—अब, जब कि मैं उन सबको समझ कर हृदयंगम कर सकता हूँ।"

बन्दी की इच्छा पूर्ण हुई। बग़ीचे में महाजन की आज्ञा से दो बार बन्दूक़ का शब्द सुनाई दिया।

इसके बाद दसवाँ वर्ष बीतने पर वकील चुपचाप निश्चल भाव से अपनी मेज़ के सामने बैठा रहता और केवल इञ्जील पढ़ा करता। महाजन को इस बात पर प्रायः आश्चर्य होता कि जिस मनुष्य ने चार वर्ष के भीतर छः सौ भारी-भारी और कठिन तथा गंभीर विषयों के ग्रन्थ छान डाले। उसे इस समय केवल एक अति सरल और पतली सी पुस्तिका के पढ़ने में एक वर्ष के लगभग लग जाये। तत्पश्चात् इंजील का अध्ययन समाप्त हो जाने पर धर्म-ग्रन्थों तथा भिन्न-भिन्न धर्मों के इतिहास का अध्ययन आरम्भ हुआ।

कारागार-जीवन के अन्तिम दो वर्षों में क़ैदी ने असाधारण और बिलकुल असमीक्ष्य रूप से पढ़ा। कभी वह प्राकृतिक विज्ञान की पुस्तकें पढ़ता, कभी बायरन और शेक्सपियर को पढ़ता। प्रायः उसके पास से पुर्जे आते जिनमें वह एक साथ ही रसायन-शास्त्र और वैद्यक ग्रन्थ, उपन्यास, तथा दर्शन और धर्म-शास्त्र सम्बन्धी पुस्तकों की आकांक्षा करता। उसकी पढ़ाई इस प्रकार की थी मानो वह समुद्र में नष्टपोत के भग्नावशेषों के बीच तैरता-उतराता हो और जीवन-रक्षा की चिन्ता में जिस किसी वस्तु पर भी उसकी दृष्टि जाती है, उसीको पकड़ने के लिये व्याकुल हो उठता है।

( ३ )

महाजन इन तमाम बातों की याद करता था और सोचता था। वह सोच रहा था—कल बारह बजे यह अपनी स्वतंत्रता प्राप्त कर लेगा। प्रतिज्ञा के अनुसार मुझे उसको दो लाख देने पड़ेंगे। यदि मैं देता हूँ तो बस मेरा तो निपटारा हो गया। हमेशा के लिये तबाह हो जाऊँगा।

पन्द्रह वर्ष पहले उसके लाखों की कोई गिनती नहीं थी, परन्तु इस समय वह स्वयं अपने मन से यह प्रश्न करते डरता था—मैं किसका अधिक गर्व कर सकता हूँ, रुपये का या अपने ऊपर चढ़े हुये ऋणों का? जुआ खेल कर, सट्टेबाजी कर के और अपनी उस उच्छृ-ङ्खलता के कारण, जिससे वह बुढ़ापे में भी मुक्त नहीं हो सका था; उसका व्यवसाय धीरे-धीरे नष्टप्राय हो गया था। वह पुराना निःशङ्क, आत्म-निर्भर और गर्वीला व्यवसायी नहीं, अब एक साधारण महाजन रह गया था और बाज़ार के ज़रा-ज़रा से उतार-चढ़ाव पर उसे घब-राहट होती थी। अपने सिर को दोनों हाथों से पकड़ कर उसने कहा—"वह मूर्खता वाली शर्त? वह मर ही क्यों न गया। अभी चालीस ही का तो है, मेरी एक-एक पाई मुझसे निचोड़ कर शादी कर लेगा, जीवन भर मौज उड़ाएगा, सट्टेबाजी करेगा और मैं एक भिखारी होकर यह सब देखूँगा और जलन से मरा करूँगा। रोज़ वह मुझसे कहा करेगा —मेरा यह सब सुख-वैभव तुम्हारे ही कारण है। मुझे भी आपकी कुछ सहायता करने दो...नहीं, नहीं यह सब मेरे सहन के बाहर हैं। बस, एक ही उपाय है, एक ही उपाय है, इस शर्मिन्दगी से बचने का—यह मनुष्य किसी तरह मर जाय।"

घड़ी में अभी तीन का घंटा बजा था। महाजन सुन रहा था। घर में हर कोई सोया हुआ था और सन्नाटा इतना था कि बाहर पाले से लदे हुये पेड़ों में हवा की मन्द सनसनाहट के अतिरिक्त और कुछ सुनाई

न देता था। बहुत धीरे-धीरे, बिना कोई शब्द किये हुये, उसने अपने लोहे की सन्दूक में से उस द्वार की चाबी निकाली, जो आज पन्द्रह वर्ष से नहीं खुला था। फिर अपना ओवरकोट पहिन कर वह मकान से बाहर निकला। बग़ीचे में शीत और अन्धकार था। ओस से भींगी हुई वायु की तीक्ष्ण लहर गुरगुग रही थी और वृक्षों को चैन नहीं लेने देती थी। अपनी ईक्षण शक्ति पर भरसक ज़ोर देने पर भी महाजन को न भूमि दिखाई देती थी, न श्वेत पत्थर की मूर्तियाँ और न बग़ीचे के वृक्ष। बाग़ के पार्श्व को प्राप्त होकर उसने दो बार चौकीदार को आवाज़ दी; परन्तु कोई उत्तर न मिला। चौकीदार मौसम की निष्ठुरता से त्राण पाने के लिये कहीं रसोई घर आदि में जाकर सो रहा था।

महाजन सोचने लगा—यदि साहस करके मैं इस समय अपना काम बना लूँ तो सब से पहले लोग चौकीदार पर ही संदेह करेंगे।

अन्धकार में सीढ़ियों और द्वार को टटोल कर वह बड़े कक्ष में पहुँचा। तब एक तंग से रास्ते में पहुँच कर उसने दियासलाई जलाई। वहाँ प्राणी का आभास भी न था। एक चारपाई पड़ी थी, परन्तु उस पर विस्तर न था और लोहे की एक अंगीठी अपनी कृष्णकाय गंभीरता से एक कोने में सो रही थी। बंदी के कोठरी के द्वार पर जो ताले लगाये गए थे वे जैसे के तैसे लगे हुये थे।

दियासलाई के जल चुकने पर वृद्ध मनुष्य ने उद्वेग से काँपते हुये छोटी खिड़की के भीतर झाँका।

बंदी की कोठरी में एक मोमबत्ती धुँधला प्रकाश कर रही थी। बंदी स्वयं अपनी मेज़ के किनारे एक कुरसी पर बैठा था। केवल उसकी कमर, उसके सिर के बाल और उसके हाथ दिखलाई देते थे। खुली हुई पुस्तकें मेज़ पर, कुरसियों पर और भूमि पर फैली पड़ी थीं।

पाँच मिनट बीत गये। परन्तु बन्दी एक बार भी न हिला। पन्द्रह साल के एकान्त कारावास ने उसको निश्चेष्ट बैठा रहना सिखला दिया

था । महाजन ने खिड़की पर धीरे से अपनी अँगुली से खटखटाया, पर इसके उत्तर में बंदी की ज़रा सी चेष्टा तक न दिखाई दी । तब महाजन ने सावधानी से तालों का खोला और चाबियों को तालों में लटका दिया । पन्द्रह वर्ष में तालों में जंग लग गई थी, जिसके कारण कुछ शब्द हुआ और द्वार ने भी अपनी झुँझलाहट का परिचय दिया । महाजन समझा कि इस शब्द से बन्दी तुरन्त उछल कर चिल्ला पड़ेगा और उसका पद-शब्द सुनाई देगा । परन्तु तीन मिनट तक कोठरी के भीतर वैसे ही स्तब्धता रही, जैसी पहले थी । महाजन ने सोचा, अब भीतर चलना चाहिये ।

मेज़ के किनारे साधारण मनुष्यों से भिन्न एक नर-आकृति बैठी हुई थी । महाजन ने अपने सामने मनुष्य का केवल एक ढाँचा देखा जिसके ऊपर, मालूम होता था, खाल मढ़ी हुई है । स्त्रियों के जैसे लम्बे-लम्बे घूमे हुये बाल थे और उलझती हुई दाढ़ी । चेहरे का रंग पीला, मिट्टी की भाँति था, गाल भीतर को घुसे हुये और कमर लम्बी और तंग । जिस हाथ पर वह अपना सिर टेके हुये था, वह इतना दुबला और चर्मभूत हो गया था कि देखने से दुख होता था । उसके बाल सफ़ेद हो चले थे और उसके जराजन्य दुर्बल मुख को देख कर विश्वास करना कठिन था कि इसकी आयु अभी चालीस ही वर्ष की है । मेज़ पर, उस झुके हुये सिर के नीचे, एक कागज़ का पन्ना रक्खा था जिस पर छोटे-छोटे अक्षरों में कुछ लिखा हुआ था ।

महाजन ने अपने मन में कहा—"अभागा, बेचारा ! शायद यह सो गया है । और इस समय लाखों का स्वप्न देख रहा है । मुझे शायद कुछ भी न करना होगा । इसको उठा कर चारपाई पर पटक देने और आध मिनट तकिये से पीटने से ही इसका काम तमाम हो जायगा और फिर अच्छी से अच्छी मृतक परीक्षा भी नहीं बतला सकेगी कि इसकी स्वभाविक मृत्यु नहीं हुई है ।

परन्तु अपने संकल्प को कार्यरूप में परिणत करने से पहले महाजन को उत्सुकता हुई कि बन्दी के सामने रखे हुये कागज़ को पढ़े। बेचारे को क्या मालूम था कि इसके बाद वह और कुछ नहीं लिख सकेगा! उसके अन्तिम लेख को इस समय पढ़ने के कौतूहल को रोकने की महाजन ने चेष्टा नहीं की। फाँसी लगाने से पहले अपराधी को कुछ कहने का अवकाश दिया जाता है, इसीलिये कि उसके मरने से पहले उसे सब कोई सुने। महाजन भी बन्दी को यह अधिकार देना चाहता है। कैसा अच्छा विनोद है!

महाजन ने मेज़ से कागज उठाया और पढ़ने लगाः—"कल रात को बारह बजे मुझे मुक्ति मिल जायगी। मुझे लोगों से मिलने-जुलने का अधिकार प्राप्त होगा। परन्तु इस कोठरी को छोड़ने से पहले मैं तुमसे कुछ बातें कहना आवश्यक समझता हूँ। अपनी आत्मा की गवाही देकर और सर्वान्तर्यामी के सामने मैं तुमसे इस बात की घोषणा करता हूँ कि मैं इस स्वतन्त्रता को घृणा की दृष्टि से देखता हूँ। मैं इस जीवन से घृणा करता हूँ। इस स्वास्थ्य से घृणा करता हूँ। उन सब बातों से घृणा करता हूँ जिन्हें तुम्हारी ये बड़ी-बड़ी पोथियाँ जीवन का परम सुख बतलाती हैं।

"पन्द्रह वर्ष तक मैंने बड़े परिश्रम के साथ इस लौकिक जीवन का अध्ययन किया है। यह सच है कि इस बीच में न मैंने पृथ्वी के दर्शन किये, न आदमियों से मिल सका; परन्तु तुम्हारे ग्रन्थों में मैंने सुरभि मदिरा का रसास्वादन किया है; मधुर रागिनियाँ गाई हैं; हिरन और जंगली सुअर का शिकार किया हैं; स्त्रियों से प्यार किया है। कैसी स्त्रियाँ? आकाश के बादलों के समान सुन्दर, तुम्हारे लोकोत्तर कवियों की प्रतिभा से उपजी हुईं! क्या तुम्हारा कभी ऐसी स्त्रियों से संसर्ग हुआ है? ये रात में मेरे पास आ-आ कर मेरे कानों के पास मुँह लगा कर मधुर और आश्चर्य-लोक की कहानियाँ सुनाया

करती थीं। मेरा सिर घूम जाता था। मैं मद से मतवाला हो जाता था।

"और सुनो। मैं तुम्हारी पुस्तकों में संसार के ऊँचे से ऊँचे पहाड़ों पर चढ़ा हूँ और वहाँ से मैंने सूर्य का निकलना देखा है। वह सूर्य उषा को प्यार करता था और चलते समय अपने लाल-लाल ओठों की मुस्कराहट से सन्ध्या को आश्वासन दे जाता था। समुद्र और पहाड़ों की किनारियाँ उन ओठों की मुस्कराहट में रँग जाती थीं। फिर वहीं खड़ा-खड़ा मैं अपने ऊपर बिजलियों का चमकना देखता; बादलों का गरजना सुनता; मैं हरे-हरे जङ्गल और खेत देखता; नदी, नाले, झीलें और नगर देखता। मैंने विमोहिनियाँ के मधुर गायन सुने हैं, बीनों का बजना सुना है, और उन चमक-दमक वाले मायावी मुनियों के पैरों को छुआ है, जो मुझसे ईश्वर के विचित्र सन्देश कहने के लिये उड़कर आते थे।

"तुम्हारी पुस्तकों के भीतर मैंने अनन्त गुफ़ाओं और खोहों में प्रवेश किया है। पाताल की खोज की है। बड़े-बड़े अद्भुत कर्म किये हैं। कितने ही नगरों को जला कर धूल में मिला दिया, कितने ही नये-नये धर्मों को जन्म दिया, कितने ही द्वीपों और महाद्वीपों को विजय किया।

"तुम्हारी पुस्तकों ने मुझे बहुत सिखाया है। सैकड़ों शताब्दियों में उपार्जित किया हुआ मनुष्य का चिरन्तन विचार-गौरव मेरे इस छोटे से मस्तिष्क पिण्ड में ठसा पड़ा है। मैं जानता हूँ कि मैं तुम सब से अधिक बुद्धिमान और ज्ञानशील हूँ।

"और मैं तुम्हारी पुस्तकों से घृणा करता हूँ। तुम्हारे संसार के अखिल सुख और ज्ञान से घृणा करता हूँ। सब निरर्थक, असार और क्षणभंगुर है—मरीचिका की भाँति भ्रमपूर्ण और खेद-जनक। तुम अपने रूप और ज्ञान का घमण्ड कर लो; परन्तु एक दिन मृत्यु तुमको इस पृथ्वी पर से इस तरह पोंछ लेगी जैसे चूहा बिल में समा जाता है।

तुम्हारी भावी संतान, तुम्हारा भूत इतिहास, तुम्हारे प्रतिभा-सम्पन्न नर-रत्नों की अमरता बर्फ़ की भाँति जम जायगी। एक रोज तुम्हारा पृथ्वी मण्डल भी नष्ट होगा—उसी के साथ सब कुछ भस्म हो जायगा।

"तुम पागल हो, उलटे रास्ते पर चल रहे हो। असत्य को सत्य समझते हो और कुरूपता को सुरूपता। तुम्हें आश्चर्य होगा—यदि अचानक तुम्हें दिखाई दे कि सेव और नारंगी के वृक्षों पर फलों के स्थान में मेंढक और कछुए लगने लगे हैं या गुलाब के फूलों से पसीने में नहाये हुये खच्चर की दुर्गन्ध आने लगी है। इसी प्रकार तुम्हें इन बातों पर आश्चर्य होता है कि तुम स्वर्ग और पृथ्वी का विनिमय करने चले हो। मुझे तुम्हारी सभ्यता समझने की इच्छा नहीं है।

"जिन बातों को तुम सुख समझते हो, जिन बातों के लिये तुम जीते हो, उन सब से मुझे सच्ची घृणा है। इसका प्रमाण देने के लिये मैं उन दो लाख पर लात मारता हूँ, जिनको किसी समय में स्वर्ग से अधिक समझता था और जिनको अब मैं हेय समझता हूँ। अपने को दो लाख रुपये के अधिकार से वञ्चित करने के लिये मैं निश्चित समय से पाँच मिनट पहले, अर्थात् आज रात को जब बारह बजने में पाँच मिनट होंगे, इस कोठरी से बाहर निकल आऊँगा। इस प्रकार मैं अपनी उस प्रतिज्ञा को तोड़ दूँगा जिसके पूरा करने पर मैं दो लाख रुपये पा सकता था।"

पढ़ चुकने पर महाजन ने काग़ज़ को फिर मेज़ पर रख दिया। वह उस विचित्र बन्दी के चरण को दूर से चूम कर रोने लगा और वहाँ से चला गया। जीवन में कभी उसे अपने ऊपर इतनी घृणा नहीं हुई थी जितनी इस समय हुई। अपने मकान में आकर वह पलँग पर लेट गया, परन्तु संक्षोभ और अश्रु-प्रवाह के कारण उसको बहुत देर तक नींद न आई।

दिन निकलने पर चौकीदार उसके पास आया और उसने बन्दी के खिड़की से कूद कर भाग जाने का समाचार सुनाया। बन्दी बग़ीचे के फाटक से निकल कर न मालूम कहाँ ग़ायब हो गया था। महाजन उसी समय अपने नौकरों को लेकर वहाँ पहुँचा। चौकीदार का कहना सत्य था। जनवाद फैलने के भय से उसने बन्दी का लिखा हुआ वह काग़ज़ मेज़ से उठा लिया और उसे ले जाकर अपने लोहे के सन्दूक़ में सुरक्षित कर दिया।

रूस

# टूटी घड़ी

लेखक—आर्काडी ओवरशैंको

कुरसी पर आराम से बैठ कर, मेरी ओर कुछ देर तक देखते हुये प्रसन्नता के साथ उसने कहा—"अच्छा ! आप इस तरह से काम किया करते हैं ?"

विनय के साथ मैंने मुस्करा कर कहा—"जी हाँ।"

"क्या आप बहुत दिनों से यह काम कर रहे हैं ?"

"चार साल से।"

"मैंने भी कुछ लिखने का विचार किया है।"

मैंने कुछ कड़े स्वर से कहा—"क्या आपने कुछ लिखा भी है ?"

"मैं अपना लेख साथ लाया हूँ। यह आपको पसन्द आयगा और आप उसे अवश्य छाप देंगे।"

"क्या आप बहुत दिनों से लेख लिख रहे हैं ?"

"नहीं; मेरे मन में न जाने कितने भाव बहुत दिनों से इकट्ठे हो रहे थे। अब वह बाहर आ रहे हैं। मैंने अपनी पत्नी को गाँव भेज दिया है। अब मैं सोच नहीं पाता कि कैसे समय कटे। इसीलिये तो मैंने लिखने का काम उठा लिया। अभी आपसे कहा न कि मैं अपना लेख साथ लाया हूँ, उसे मैं आपको छपाने के लिये दूँगा। आप दो-चार लाइनें पढ़िये, तब आप मन ही मन कहेंगे कि फिर मानो 'वायरन' का आविर्भाव हुआ है !"

"बहुत ठीक है। पर मुझे अभी इस लेख को सुधार कर प्रेस में देना है।"—मैंने अपने सामने बैठे हुये उस लेखक को साफ़-साफ़ फ़ुरसत न रहने की बात जता दी।

वह एक भड़कीली पोशाक पहिन कर आया था। कुछ देर तक वह चुप रहा। बहुत सन्तोष के साथ नीची निगाह किये बैठा रहा। पर उसने मुझे दो मिनट से अधिक चुप-चाप काम नहीं करने दिया।

"आपका जीवन बहुत आराम का है। आप लिखते हैं, वह छपता है। लोग उस लेख को पढ़ते हैं और फिर उससे आप धन कमाते हैं।"

मैंने अपने काम से सिर न उठा कर ही कहा—"लिखना इतना सहज नहीं है, जितना आप सोच रहे हैं।"

उसने कहा—"सहज नहीं! आप मज़ाक कर रहे हैं? मैं तो टेबिल पर जाकर बैठा और जितनी जल्दी लेखनी चला सका, लिखता गया—एक पर एक शब्द निकलता आया। मैंने अपना यह लेख घंटे भर में लिख डाला है।"

मैंने अपना काम हटा कर एक ओर रख कर कहा—"कहाँ है आपका वह लेख?"

"यह है। यह मेरा पहला प्रयास है। इसीलिये मैं इसे बहुत सस्ते में दे दूँगा। आप एक चवन्नी प्रति लाइन के हिसाब से ही दीजियेगा। भविष्य की रचनाओं के लिये हम लोग फिर तय कर लेंगे।"

"बहुत अच्छा। दो हफ़्ते के भीतर इस लेख पर मेरी राय आपको मालूम हो जायगी।"

मैंने अपनी आँखो के सामने उस पाण्डुलिपि को रख कर उस पर निगाह डाली और उससे बिना कहे रह नहीं सका—"देखिये, यह पहली लाइन—'अस्तमान सूर्य दिगन्त से चमक रहा था।' यह तो बिलकुल असम्भव है।"

प्रसन्न-चेहरे से उसने मुस्करा कर कहा—"आप चाहे जो कुछ बदल दीजिये—मुझे कुछ भी एतराज नहीं है। यह मेरा प्रथम प्रयास है। ख़ैर, मैं आपका क़ीमती समय अब और नष्ट नहीं करूँगा।"

उसने अपनी जेब से एक घड़ी निकाली।—"शैतान!—फिर बन्द हो गई।"

"क्या आपकी घड़ी टूट गई है?"

"एक हफ़्ता भी नहीं गुजरा कि इसे मरम्मत करा के लाया था!... तंग आ गया; साहब, तंग आ गया!"

"जी हाँ, यह सब घड़ीसाज...अच्छा लाइये, देखूँ आपकी घड़ी। शायद मैं उसे ठीक भी कर दूँ।"

मेरी ओर विस्मित दृष्टि से देखकर उसने कहा—"क्या आप घड़ी की मरम्मत करना जानते हैं?"

"नहीं के बराबर।"

उसने मेरे हाथ में घड़ी दी। अनिच्छा से मैंने घड़ी का ढक्कन खोला। फिर अपने चाक़ू को घड़ी के पुर्जों में डाल दिया। कई पुर्जे निकल कर मेरे टेबिल पर बिखर गये। मैंने बड़बड़ा कर कहा—"मामला कुछ ठीक नहीं जँच रहा है।" फिर घड़ी के पतले 'हेयर-स्प्रिङ्ग' को दोनों अँगुलियों से खोल कर खींच कर बाहर निकाला। इसी समय और तीन-चार पुर्जे निकल कर टेबिल पर बिखर गये।

कुरसी पर बैठा वह आदमी घबराहट और असन्तोष के साथ मेरा कार्य लक्ष्य कर रहा था। उसने चिन्तित भाव से कहा—"क्या बात है?"

घड़ी में से और कई पुर्जे निकाल कर मैंने कहा—"इस घड़ी के भीतर इतनी तरह के पुर्जे भर दिये गये हैं कि अब यह कहना मुश्किल है कि किस वजह से घड़ी बन्द हो गई।"

वह आदमी कूद कर खड़ा हो गया। एक बार उसने पुर्जे निकाली

हुई घड़ी की ओर देखा, फिर चिल्लाकर कहा—"आप घड़ी के बारे में कुछ जानते भी हैं?"

मैंने धीमे स्वर से कहा—"जानता भी हूँ, और...नहीं भी।"

"क्या इसके पहले आपने कभी किसी घड़ी की मरम्मत की थी?"

"अगर साफ़-साफ़ कहूँ तो...नहीं। यही मेरा पहला प्रयास है।"

वह घड़ी के सब पुर्जों को एक-एक कर उठाते हुये करुणा तथा निराशा भरे स्वर से बोला—"आप जो काम बिलकुल नहीं जानते हैं, उसमें क्यों हाथ डाला?"

अब मेरे नाराज़ होने की बारी थी। मैंने कुछ ऊँचे स्वर से कहा—

"आपको यह कहने का कोई अधिकार नहीं है। आप किस साहस से लेख छपाने के लिये आये हैं? क्या आप समझते हैं कि एक घड़ी के पुर्जे खोलकर लगाने की अपेक्षा सरल, सुन्दर साहित्य लिखना आसान है?"

हम दोनों एक दूसरे की ओर क्षण भर के लिये घृणा के भाव से देखते रहे, फिर हम दोनों ही हँस पड़े।

उसने कहा—"अगर मेरा यह लेख ठीक नहीं लिखा गया हो, तो मैं एक दूसरा ला दूँगा।"

मैंने कहा—"अच्छी बात है। और आपके पास अगर कोई दूसरी घड़ी हो, तो साथ लेते आइयेगा। इसी तरह अभ्यास करते-करते शायद हम दोनों सीख जायँ।"

रूस

# जीवन का एक चित्र

**लेखक—व्लेडीमीर कोरोलेंको**

अँधेरा हो रहा था।

छोटी-सी नदी के किनारे, ताड़ के जंगल में बसा हुआ वह छोटा सा गाँव बसन्त की ताराच्छादित रजनी की गोधूली में डूबा हुआ था। उस समय पृथ्वी से उठता हुआ कोहरा पेड़ों की छाया को घनी कर रहा था और सारे वायुमंडल को रुपहली और नीली भाप से ढँक रहा था। सब कुछ स्थिर और उदास था, और गाँव शांत भाव से निद्रित हो रहा था। कोठरियों की काली दीवारें साफ़ दिखलाई पड़ रही थीं। कहीं कहीं दीपक टिमटिमा रहे थे। कभी-कभी फाटक के चरमरा कर खुलने की ध्वनि होती थी और कभी-कभी दूर कर कोई कुत्ता अचानक भौंक उठता था। रह-रह कर जंगल के अँधेरे को चीरता हुआ कोई घुड़सवार या कोई गाड़ी खड़खड़ाती हुई निकल जाती थी...वे सब देहात के रहने-वाले थे और बसन्त की छुट्टी मनाने घर जा रहे थे।

गिरजा-घर गाँव के मध्य में एक ऊँची पहाड़ी पर स्थित था। पुराना ऊँचा घण्टा-घर आकाश की नीलिमा में मिल कर अस्पष्ट-सा हो रहा था। जब बूढ़ा घण्टा बजाने वाला मिखेचिच घण्टा बजाने जाता, तो घंटे पर की सीढ़ियाँ चरमरा उठतीं और वायुमंडल के बीच उसकी छोटी-सी लालटेन नक्षत्र के समान चमकती।

बेचारे बूढ़े से सीढ़ियाँ नहीं चढ़ी जाती थीं। उसके पैर बेकाम हो चले थे और आँखों से ठीक सूझता भी नहीं था। उसके समान बूढ़े को अब आराम करना चाहिये था, पर ईश्वर ने अभी तक उसे मौत नहीं दी थी। वह अपने बेटों और पोतों तक दफ़ना चुका था। कितने ही बूढ़ों और जवानों को उनकी क़ब्र तक ले जा चुका था। पर वह अभी तक जीवित था और यह कम दुःख की बात नहीं थी। कितनी बार वह वसन्त की छुट्टी मना चुका है, यह वह गिन नहीं सकता था। कितनी बार वह घंटे-घर पर नियमित समय पर घंटा बजाने इसी प्रकार आ खड़ा हुआ है और अभी तक ईश्वर की वही इच्छा थी।

बूढ़ा घंटाघर खोलने गया और रेलिंग पर झुक कर खड़ा हो गया। नीचे अंधकार में फैले हुये क़ब्रिस्तान को उसने देखा, जिसमें पुराने 'क्रॉस' मानो अपनी भुजा फैला कर क़ब्रों की रक्षा कर रहे थे। उन "क्रॉसों" के ऊपर जहाँ-जहाँ पेड़ों की डालें झुक गई थीं, मानो उनका अभिवादन कर रही थीं। छोटी-छोटी कलियों की भीनी सुगंध वायु के साथ मिल कर मिखेच्चिच के पास तक आ रही थी और मानो उसमें उस अटूट निद्रा की करुणा मिली हुई थी।

अब वह कहाँ रहेगा? क्या अगले साल उसे फिर घंटाघर पर चढ़ना होगा और पीतल के उस बड़े घंटे को हिला कर निद्रित रजनी को जगाना पड़ेगा? या वह भी किसी 'क्रॉस' के नीचे क़ब्रिस्तान के एक अँधेरे कोने में सोता रहेगा? ईश्वर जाने!...वह तैयार था, पर इसी बीच ईश्वर ने उसके लिये एक बार फिर घंटा बजा कर बसंत का स्वागत करने की आज्ञा दी। "ईश्वर की जय हो!" उसके वृद्ध ओठों ने अस्फुट स्वर में कहा और अगणित झिलमिलाते तारों से भरे आकाश की ओर देख कर उसने क्रॉस का चिन्ह बनाया!

"मिखेच्चिच! मिखेच्चिच!" किसी बूढ़े ने उसे पुकारा और अपनी

भीगी आँखों पर हाथ की छाया दे कर मिखेचिच को ढूँढ़ने के लिये घंटाघर की ओर आँखें फाड़ कर देखने लगा ।

"क्या कहते हो ? मैं यहाँ हूँ ।" घंटाघर से नीचे देख कर मिखेचिच ने कहा—"क्या देख नहीं पा रहे हो ?"

"नहीं, मैं देख नहीं पा रहा हूँ । पर मेरा ख्याल है कि घंटा बजाने का समय हो गया है । क्या कहते हो ?"

दोनों ने तारे की ओर देखा । स्वर्ग के सहस्त्रों दीपक चमक रहे थे । मिखेचिच ने सोच कर कहा—"अभी नहीं...मैं जानता हूँ...।" और वह वास्तव में जानता था । उसको घड़ी की आवश्यकता नहीं थी । ईश्वर के रचे हुये नक्षत्र स्वयं ही उसे खबर दे देते थे । अँधेरे से ढँके हुये आकाश और पृथ्वी, आकाश पर तैरते हुये श्वेत सुकुमार बादल, जङ्गल की अस्पष्ट 'मर्मर' ध्वनि और नदी की 'कल्-कल्' उससे हिल-मिल गये थे—उसके जीवन का अंग बन गये थे ।

अतीत की स्मृति जाग उठी । उसे स्मरण हुआ, किस प्रकार वह प्रथम बार अपने पिता के साथ इस घंटा घर पर आया था । भगवान् ! कितने दिन बीत गये, पर मानो कल की बात है । उसको अपने जीवन के प्रभात की याद आई, और उसके नेत्र चमक उठे । तेज वायु चल पड़ी और उसके बाल हवा में तितर-बितर हो गये । ऊपर से गाँव के मनुष्य और झोपड़े खिलौनों के समान दीख रहे थे—और मैदान असीम !

यही जीवन का ढंग है,—सफ़ेद बालों वाला मिखेचिच मुस्करा उठा । बुढ़ापे से पहिले मनुष्य को जीवन का अन्त नहीं दीखता । पर अब...मानो सब कुछ उसकी मुट्ठी में बन्द है—जन्म से लेकर क़ब्र के उस एकान्त कोने तक, जिसकी वह अभी कल्पना कर रहा था । यह तो आराम करने का समय है । उसने अपने जीवन के बोझ को

ईमानदारी और धीरज के साथ सँभाला है और वह नम पृथ्वी उसे अपनी माँ की तरह दीखती है।

समय हो चला था। बूढ़े मिखेचिच ने एक बार फिर नक्षत्रों की ओर देखा, 'क्रास' का चिन्ह बनाया, और घंटे का रस्सा पकड़ कर खींच लिया। और दूसरे ही क्षण वायु घंटे की ध्वनि को लेकर फैल गई और सारे वायुमंडल में टन्-टन् की ध्वनि प्रतिध्वनित हो उठी।

घंटा रुका। गिरजे में उपासना शुरू हो गई थी। पहले मिखेचिच की आदत थी चुपचाप कोने में खड़ा हो कर उपासना सुनने की, पर आज वह नहीं गया। वह थका था और इतनी सीढ़ियाँ तय करना उसके लिये कठिन था। वह पीतल के घंटे की क्षीण आवाज़ को, जो क्रमशः लोप हो रही थी, सुनने लगा और सोचने लगा,—क्या ? उसकी लालटेन से क्षीण प्रकाश फैल रहा था; रह-रह कर नीचे से संगीत की ध्वनि उसके कानों में पड़ जाती थी और घंटे से बँधा हुआ रस्सा हवा में हिल उठता था।

बूढ़े का सिर उसके वक्षःस्थल पर झुक गया और उसका मस्तिष्क तरह-तरह की कल्पनाओं में उलझ गया। अब स्तुति प्रारम्भ हो गई है, उसने सोचा और उसके सामने उपासना-भवन का चित्र अनायास ही खिंच गया। सैकड़ों सिर उठते और झुकते थे, जिस प्रकार पके हुये अनाज के पौधे हवा के झोंके से सिर झुका देते हैं। किसानों ने भक्ति और विश्वास से 'क्रास' का चिन्ह बनाया...। सब बूढ़े मिखेचिच से परिचित थे...यद्यपि अब वे सब मर चुके थे, और मानो इन्हीं के मध्य में उसे अपने पिता का चेहरा दीख पड़ा। और उनके समीप वह स्वयं खड़ा था,—उसके चमकदार स्वस्थ मुख-मंडल पर अनजान आशा और आनन्द की आभा दीख रही थी। पर वह आशा और वह आनन्द गया कहाँ ?...एक क्षण के लिये बूढ़े के मस्तिष्क में अतीत की घटनाओं को प्रकाशित करती हुई बिजली दौड़ गई। उसने वहाँ

पाई—मेहनत, दुःख और निराशा...। उसकी बाईं ओर गाँव की स्त्रियों का एक समूह था और उनके मध्य में थी उसकी प्रेमिका।...कितना दुःख उठाया था उस बेचारी ने...और वह देवी थी। चिर दरिद्रता और कठिन कार्य !...ये दोनों सुन्दरता को नष्ट कर देने में भला कितना समय लेते हैं ? उसकी आँखों की चमक धुँधली पड़ जाती है, और सुन्दरता के स्थान पर उसका चेहरा आशंकाओं का घर बन जाता है। हाँ, तो उसकी प्रसन्नता कहाँ थी ? उसका एक पुत्र था—पर वह इस माया-जाल में फँसने के लिये अत्यन्त कमज़ोर था।

फिर वह उसका वहाँ धनी शत्रु था, और वह माँग रहा था क्षमा, अपने अनगिनती अपराधों के लिये—अनाथों के उन शत्रुओं के लिये जो उसके लिये कुछ भी मूल्य नहीं रखते थे। उसने भी 'क्रॉस' का चिन्ह बनाया ! मिखेच्चिच का मन विद्रोह से भर उठा। अब उसके लिये उसकी दुनिया गिरजाघर के घंटे तक ही परिमित थी। जहाँ रात में हवा चुपचाप प्रवेश कर रस्से को हिला जाती थी। "ईश्वर तुम्हारा फ़ैसला करे !" बूढ़े ने कहा, सफ़ेद बालों से ढँका उसका सिर झुक गया और उसके सूखे गालों पर आँसू लुढ़क पड़े।

"मिखेचिच, मिखेचिच ! क्या तुम सो गये हो ?" नीचे से किसी ने पुकारा।

"क्या है ?" बूढ़े ने खड़े हो कर कहा, "हे भगवान् ! क्या मैं सच-मुच ही सो गया था ? पर इस तरह तो पहले कभी नहीं हुआ !" फिर शीघ्रतापूर्वक उसके बूढ़े, अनुभवी हाथों ने घंटा बजा दिया। उसके नीचे जुलूस निकल रहा था और चमकदार झण्डे हवा में फहरा रहे थे। जुलूस ने घण्टा-घर की प्रदक्षिणा की और फिर मिखेचिच को तरह-तरह की आनन्द-सूचक ध्वनि सुनाई पड़ी। बूढ़े का मन एक बार खुल कर उस ध्वनि में मिल जाने के लिये आतुर हो उठा। उसको लगा मानो मोमबत्तियों का प्रकाश अधिक उज्ज्वल हो उठा, जुलूस अधिक उत्सा-

हित हो उठा और हवा जुलूस की आतुर आवाज़ को अपने विस्तृत पंखों पर लाकर घण्टे की 'टन-टन' में मिला रही है। उसके पहले बूढ़े ने कभी इस प्रकार घण्टा नहीं बजाया था। उसका हृदय मानो उस घण्टे में मिल कर एक हो गया था, और घंटे की ध्वनि उसके हृदय के सुर में सुर मिला कर रो उठी, और उसकी ध्वनि तारों के मूक संगीत से जा मिली। घंटा-घर मानो काँप उठा और पवन मिखे-चिच के मुख के पास अपने पंख फड़फ़ड़ा कर कह उठा—"ईश्वर की जय हो।"

बूढ़ा-हृदय अपने दुःख के साथ अपने जीवन को भी भूल गया। वह भूल गया कि उसका जीवन केवल घंटा-घर तक ही परिमित है, और वह संसार में अकेला है। उसने गाने की वह ध्वनि सुनी जो हर्ष से आकाश में गूँज कर फिर रोती हुई पृथ्वी को लौट आती थी। उसने देखा, मानो वह अपने पोतों और नातियों से घिरा हुआ है, और सारे बूढ़े बच्चे मिल कर एक ही सुर में उसे गीत सुना रहे हैं—वह गीत जो उसने कभी नहीं सुना था। उसके हृदय पर एक स्वर्गीय आनन्द का धुँधला प्रकाश छा गया। उसने घण्टे का रस्सा पकड़ कर खींच लिया और उसकी आँखों की कोरों से आँसू टपक पड़े।

घंटा-घर के नीचे लोग घंटे की आवाज़ को सुन रहे थे और कह रहे थे कि मिखेचिच ने इस उत्साह से कभी घंटा नहीं बजाया।

अचानक घण्टे की एक अस्पष्ट ध्वनि हुई और फिर वह चुप हो गया। अपनी प्रतिध्वनि सुन कर लज्जित हो उठा! बूढ़ा चूर होकर गिर पड़ा और आँसुओं की दो अन्तिम बूँदें उसके सूखे गालों पर गिर पड़ीं।

"अरे! जल्दी ही किसी दूसरे को भेजो। बूढ़े ने अन्तिम बार घंटा बजा लिया है।"

रूस

# क्रान्तिकारी

लेखक— माइकेल आरज़ीवाशेव

अध्यापक जेब्राइल एण्डर्सन अपने स्कूल के बाग़ में घूम रहा था। दो मील दूर पश्चिम में घने वृक्षों की एक पंक्ति सफ़ेद बर्फ़ की पहाड़ियों की तराई में ऐसी प्रतीत होती थी मानो किसी सुन्दरी की शुभ्र साड़ी का रंगीन फीता है। आज दिन खूब साफ़ था। सूर्य की किरणें जमीन पर सीधी पड़ रही थीं। वायु में एक प्रकार की चपलता थी। वसन्त काल का प्रारम्भ स्पष्ट दृष्टिगोचर होता था। एण्डर्सन कुछ क्षण अनिश्चित-मति ठहरा रहा, फिर मुँह उठा कर जङ्गल की ओर चल पड़ा।

"मेरे जीवन में फिर बसन्त आया है!" वह धीरे-धीरे गुनगुनाया। उसमें भावुकता थी और कविता में भी कुछ रुचि थी, परन्तु छन्दोज्ञान उसका अपूर्ण था। वह बग़ल में बेत दबाये और दोनों हाथों को पीठ-पीछे जोड़े आस्मान की ओर देखता हुआ क़दम बढ़ा रहा था।

अभी वह थोड़ी ही दूर पहुँचा होगा कि उसे एक जत्था फ़ौजी सिपाहियों का मय तैनात घोड़ों के दिखलाई दिया। चमकते बर्फ़ पर घोड़ों की परछाईं और हथियारों की चौंध खूबसूरत दिखाई देती थी। एण्डर्सन हैरान था कि यह फ़ौजी यहाँ क्या कर रहे हैं? अचानक उसे सूझा उनकी नृशंसता, जिसके लिये वे वहाँ थे, उसे स्पष्ट भासने लगी। उसने अपने को कहीं छिपाना चाहा। तब वह बाँईं ओर मुड़ा और

घास के ढेर के पीछे दुबक कर बैठ रहा। फिर भी सिर उठा कर देखने से उसे सामने की हर चीज साफ़ दिखाई दे सकती थी।

वे सिपाही कुल बारह थे। उनका एक युवा अफ़सर था जिसने खाकी कोट पहिन रक्खा था और जिसकी कमर में चाँदी की पेटी मजबूती से जड़ी थी। उसका मुँह इतना लाल था कि उसके मुक़ाबले में पतली मूछें और घनी भौंहें दूर से ही ज़ाहिर होती थीं। खरखराती हुई उसकी कठोर आवाज़ अध्यापक को वहाँ भी सुनाई दी :—

"मुझे मालूम है कि मैं क्या करने लगा हूँ। मुझे किसी की नसीहत की जरूरत नहीं!" उसने ग़ुस्से से तिलमिलाते हुये एक सिपाही की ओर देख कर कहा—"मैं तुम्हें बतलाऊँगा कि बग़ावत करने का क्या नतीजा होता है!"

एण्डर्सन का हृदय तीव्र गति से धड़कने लगा। "ओ मालिक! क्या यह सम्भव है?" उसने अपनी अन्तरात्मा से पुकारा! उसका सिर एकदम ठण्डा पड़ गया, मानो किसी शीतल हिमवात का झोंका लगा हो।

सिपाहियों में से एक शान्त, निश्चित और प्रभावोत्पादक आवाज़ आई—"अफ़सर! तुम्हें कोई अधिकार नहीं है...इसका निर्णय अदालत में होना चाहिये...तुम जज नहीं हो...यह नाहक़ ज़ुल्म है; क़त्ल है...!"

"चुप!" अफ़सर ने गरज कर कहा। उसकी आवाज़ में क्रोध मानो शरीर धारण किये था—"अदालत का अभी पता लगेगा। इवानोव आगे बढ़ो!"

उसने ऐड़ी लगाई और घोड़ा क़दम उठाने लगा। एण्डर्सन ने देखा कि घोड़ा किस नियम से तुले हुये पैर उठाता है। उसके कान इर्द-गिर्द की आवाज़ पकड़ने के लिये सीधे खड़े हैं! फ़ौजियों में हिलने की आवाज़ हुई। तीन सिपाहियों को छोड़ कर शेष सब इधर-उधर

"कम से कम लड़के को तो छोड़ दो!" एक दूसरी आवाज़ वायु को चीरती हुई सुनाई दी—"बच्चे को क्यों नाहक मारते हो! उस बेचारे ने क्या गुनाह किया है?"

"इवानोव! मेरा हुक्म पूरा करो!" अफ़सर ने गरजते हुये कहा। उसका मुख सरदी और क्रोध से मटियाला-लाल हो रहा था।

और भयानक दृश्य दिखाई दिया। वह छोटा आदमी जिसके हलके बाल और गुलाबी कान थे, बच्चों की-सी तीखी चीख मार कर धड़ाम से एक ओर गिर पड़ा। फ़ौरन दो सिपाही वहाँ पहुँचे। अभी तक वह कुछ जोर लगा रहा था, तब फिर दो और आये।

"ओ! ओ! ओ! मुझे जाने दो—मुझे छोड़ दो!" बच्चे ने दर्द भरी आवाज़ में कहा।

उसकी चीख़ वैसी ही थी जैसे एक हिरन की, गोली लगने पर होती है। अभी वह आकाश में गूँज ही रही थी कि एकाएक दन-दन दन-दन की आवाज आई। कई गोलियाँ एक साथ चलीं। उनकी पीली चमक, उनका दुर्गन्धि-युक्त धुआँ एण्डर्सन ने देखा। और सामने दोनों लम्बी आकृतियाँ जमीन पर लोटने लगीं। फौजी अपने घोड़ों पर चढ़े। फिर ऐड़ी लगा कर जङ्गल की मटियाली सड़क पर दौड़ने लगे। उनके हथियारों की आवाज़ और घोड़ों की टाप उड़ती हुई मिट्टी के रास्ते आकाश में फैलने लगी।

उसने यह सब अपनी आँखों से देखा। अब वह सड़क के ठीक बीच में खड़ा था। सारा भयानक दृश्य उसके सामने प्रत्यक्ष था। हृदय में एक प्रकार की जलन थी। सिर में चिंता और उसके मुख पर मुर्दानी की कालिमा। न जाने वह क्या सोच रहा था? क्या अनुभव कर रहा था? लेकिन उसकी दशा ठीक न थी, इसमें तनिक भी सन्देह नहीं।

ज्योंही फौजी सड़क पर दूर जङ्गल की ओर मुड़े, न जाने कहाँ से आदमी दौड़ कर उस घटनास्थल पर आ गये।

तीनों मुर्दे वहाँ बरफ़ पर पड़े थे। बच्चे की लम्बी, पतली गर्दन एक ओर मुड़ी हुई और सिर लटका हुआ था। दूसरे आदमी का सिर गिरते समय धड़ के नीचे आ जाने से स्पष्ट नहीं दीखता था। तीसरा आदमी जिसकी काली दाढ़ी थी, अपनी विशाल भुजायें फैलाये मृत्यु की करवट सो रहा था। साथ में बहे हुये खून के चिन्ह बरफ़ पर दीखते थे। आगन्तुक ग्रामवासी उन्हें घेर कर खड़े हुये मनमानी समीक्षा कर रहे थे।

× × ×

उस रात को जेब्राइल एण्डर्सन ने यथापूर्व कविता नहीं की। वह खाट पर पड़ा दूर आकाश में चन्द्रमा के पीले प्रकाश को देखता रहा। उसका दिल भारी हो रहा था, उसके विचार चिन्ता-पूर्ण थे, उसकी बुद्धि बादलों से घिरे आकाश की तरह धुँधली हो गई थी।

तब चन्द्रमा के प्रकाश में उसे फिर वही दृश्य दीखने लगा। सड़क का किनारा। फौजियों का आना। दो बड़े और एक छोटे व्यक्ति का दूर पर खड़े होना। गोलियाँ चलीं। तीनों धड़ाम से जमीन पर गिरे!...

उसने सोचा—समय आयगा जब किसी को मारना असम्भव होगा। समय आयगा जब अफ़सर और सिपाही दोनों ही महसूस करेंगे कि जिस बात पर उन्होंने उन तीनों प्राणियों का वध किया, वह बात उचित और प्रशंसनीय नहीं थी। उन्हें भी वैसा ही करना चाहिये।

हाँ! जल्दी ही ऐसा समय आयगा।—उसकी भावुकता बढ़ गई। उसकी आँखों से आँसू निकल कर गालों पर गिरने लगे। इस वृष्टि की ओट में आकर सामने आकाश में चन्द्रमा भी ओझल हो गया।

उसे उन तीन प्राणियों के लिये अत्यन्त दया हो आई और निर्दयी हिंसकों के लिये अपरिमित क्रोध। सहसा उसकी शान्ति भंग हो गई।

आँखों से आग बरसाने लगी। नथुने फड़के, ओंठ काँपे और बाहें अकड़ कर मुट्ठियाँ कसने लगीं।

तब अध्यापक ने बाइबल का एक वाक्य दोहराया—'उन्हें मालूम नहीं वे क्या करते हैं!' दो-तीन बार धीरे-धीरे बोलने से उसे कुछ शान्ति मिली। क्रोध मानो प्रभु ईसा की दयालुता में लीन हो गया।

× × ×

दिन खूब साफ़ और सुन्दर था। बसन्त ऋतु अपने यौवन पर थी। गीली मिट्टी से फूलों की सुगन्ध आ रही थी। जहाँ-तहाँ बरफ़ के टीलों से निर्मल जल की पतली धाराएँ बह रही थीं। वृक्षों की कोमल टहनियाँ नूतन पुष्पों और फलों के बोझ से झुकी जा रही थीं।

परन्तु यह बसन्त का सौन्दर्य ग्रामवासियों के लिये नहीं था। वह केवल जङ्गलों, पहाड़ों और बग़ीचों में था। ग्राम में तो वायु वैसे ही गरम, दुर्गन्धित तथा निर्जीव थी। जिब्राइल एण्डर्सन सड़क के बीच खड़ा हुआ था। उसके इर्द-गिर्द अनेक मनुष्य उदास, मुँह लटकाये हुये इधर-उधर आ-जा रहे थे। एण्डर्सन ने ऐड़ियाँ उठाईं और मुँह उचका कर दूर देखने का प्रयत्न किया, जहाँ सात किसानों को कोड़े लगाने की तैयारियाँ हो रही थीं।

वे सब सामने बरफ़ पर एक पंक्ति में खड़े थे। एण्डर्सन आश्चर्य में था कि क्या ये वे ही आदमी हैं जिन्हें वह वर्षों से जानता है! अभी कुछ ही मिनटों में जो भयानक, पाशविक और निर्दयतापूर्ण व्यवहार उनसे होने वाला था, उसने उन्हें शेष समस्त संसार से पृथक कर दिया था। और इसीलिये शायद उन्हें मालूम न था कि उनका चिर परिचित अध्यापक उनके विषय में क्या सोच रहा है और न ही उसे मालूम था कि घोर अपमान और अत्याचार के मुख में पड़ कर उन ग़रीबों के दिल पर क्या बीत रही है।

उनके साथ ही कुछ घुड़-सवार सिपाही अपनी चमकीली वर्दियों

के मद में ऐसे झूम रहे थे मानो समस्त प्राणिमात्र उनके पैरों तले रौंदने की चीज हैं। उनके हृष्ट-पुष्ट घोड़े अपने तने हुये शरीर और अकड़ाई हुई गर्दनों से अपने मालिकों के प्रभुत्व-अहंकार का जीवित प्रतिबिम्ब थे। एण्डर्सन ने यह देखा। वह भयानक दृश्य भी उसके मानस-चक्षुओं के सामने एकबारगी फिर गया। साथ ही ध्यान में आई उसे अपनी असमर्थता। उसे मालूम हुआ मानो वह दो बड़ी बड़ी बर्फ़ीली चट्टानों के बीच खड़ा है जहाँ से वह इधर-उधर देख तो सकता है, परन्तु हिल नहीं सकता। चीख़ तो सकता है, परन्तु उस अरण्य में उसके रोदन को सुनने वाला कोई नहीं। वह अपनी असमर्थता से स्वयं ही लज्जित होने लगा।

उन्होंने पहले किसान को लिया। अध्यापक ने उसकी विचित्र, भयभीत और प्रार्थनामय आकृति देखी। उसके ओठ हिले, परन्तु कोई शब्द नहीं सुनाई दिया। उसकी आँखें इधर-उधर घबराई हुई देख रही थीं; उन आँखों में पागलपन की चमक थी। उसका मन न समझ सका कि यह भयानक काण्ड क्यों किया जा रहा है। उसका चेहरा इतना खौफ़नाक था और उसकी आँखों में वह दर्द-भरी चमक थी कि अध्यापक ने शुक्र किया जब सिपाहियों ने आकर उसे मुँह के बल बर्फ़ पर गिरा दिया। अब केवल उसकी नंगी पीठ मध्याह्न के सूर्य में चमक रही थी।

लाल मुँह वाला अफ़सर नज़दीक आया। सरदी में ठिठुरती हुई किसान की चौड़ी पीठ देखी और कहा, "अच्छा! शुरू करो।"

एण्डर्सन अपने विचारों में इतना तल्लीन था कि उसे न तो सिपाही नज़र आते थे और न आकाश। न घोड़े, न समूह। उसे सरदी, भय और लज्जा भी न प्रतीत होती थी। न ही उस मोटे कोड़े की ज़ोर से हिलाते समय की आवाज़ और न किसान की दुख भरी चीख़ सुनाई पड़ती थी। उसे केवल-मात्र पीठ पर ऊपर नीचे जाते हुये

अस्थि-चर्म का दृश्य और लाल-नीली कोड़ों की मार की धारायें दिखाई दे रही थीं। थोड़ी देर में पीठ का मांस दीखना बन्द हो गया। अब केवल अन्दर की सफ़ेद मज्जा पर उड़ते हुये खून के धब्बे और नीचे बहती हुई गरम रक्त की धारा दिखाई दी। अन्तिम बार कोड़ा भी आकर वहाँ फँस गया और उसे निकालते समय का दृश्य इतना भयानक था कि अध्यापक ने आँखें मूँद लीं !

इतने में सिपाहियों ने दूसरे किसान को पकड़ा। उसे बरफ़ पर गिराया। उसके भी कपड़े उतारे और नंगी पीठ पर तड़ातड़ कोड़े पड़ने लगे। ऐसा ही तीसरे, चौथे, पाँचवें...के साथ हुआ !

एण्डर्सन गीली, ठण्डी जमीन पर खड़ा हुआ सिर उठाये यह दृश्य देख रहा था। भय से उसका मुख का वर्ण बदल रहा था। माथे से पसीने की बूँदें निरन्तर चू रही थीं। उसे आँखें बन्द किये हुये दिन स्वप्न की भाँति प्रतीत हुआ, मानो उसके भी कपड़े उतारे गये हैं और कोड़े लग रहे हैं ! दूर पर ज़ोर से आती हुई कोड़े की आवाज़ स्वप्न में उसे अत्यन्त समीप प्रतीत हुई। उसने डर से चीख़ मारी। अपनी ही ध्वनि से निद्रा भंग हुई। उसने घबड़ा कर चारों ओर देखा। अभी तक सामने वही हृदय-विदारक दृश्य था। छः किसान लोहू-लुहान होकर ज़मीन पर लोट रहे थे। सातवाँ कोड़े की कर्कश आवाज के साथ कराह रहा था।

थोड़ी देर में अफ़सर के हुक्म से सातों आदमी क़तार में खड़े किये गये और उन्हें चलने का हुक्म हुआ ! उनके मुखों का करुणापूर्ण दृश्य इतना रोमाञ्चकारी था कि अध्यापक ने उधर आँख उठते ही मुँह फेर लिया। इस समय उसके हृदय में केवल एक विचार था—'इस निर्बलता और असमर्थता से तो मृत्यु अच्छी है !'

× × ×

वहाँ सत्रह आदमी थे—पन्द्रह सिपाही, एक सूबेदार और एक साफ़ दाढ़ी वाला युवक अफ़सर। अफ़सर आग के सामने बैठा एकटक शोलों को उठता देख रहा था। सिपाही अपने हथियारों को साफ़ कर रहे थे। वे कभी-कभी अन्धकार में इधर-उधर घूमते थे और आग के समीप पहुँचने पर उनके चेहरे चमक उठते थे।

जेब्राइल एण्डर्सन ओवरकोट पहिने और छड़ी पीठ पीछे छिपाये उनके पास पहुँचा। सूबेदार—मोटा व्यक्ति उसे देखते ही फ़ौरन उछला और "तुम कौन हो? तुम क्या चाहते हो?" तेज आवाज़ में पूछा। उसकी आवाज़ से साफ़ ज़ाहिर था कि वे कितना डरते हैं और अजनबी को देखते ही उनका दिल कैसे काँप उठता है। उन्हें वह सारा इलाका—जिसमें वे अत्याचार और हत्या का ताण्डव कर रहे थे—किस प्रकार खौफ़नाक मालूम होता है!

"अफ़सर!"—उसने कहा—"मैं यहाँ का एक आदमी हूँ,

अफ़सर ने बग़ैर बोले एण्डर्सन की ओर देखा।

"अफ़सर!" एण्डर्सन ने पतली, दबी ज़बान से कहा—"मेरा नाम मिकेल्सन है। मैं यहाँ का व्यापारी हूँ और दूसरे ग्राम में व्यापार के लिये जा रहा हूँ। मुझे भय हुआ कि कहीं आपको रात के समय नाहक़ शक़ हो..."

"तब तुम यहाँ क्या लेने आये हो?" अफ़सर ने ग़ुस्से से पूछा और मुँह फेर लिया।

"यह व्यापारी!" एक सिपाही ने कहा—"इसकी अवश्य तलाशी ली जानी चाहिये। रात को इस तरह घूमने का क्या मतलब? इसके फूले गालों पर कस कर घूँसे लगाने की ज़रूरत है!"

"यह एक सन्दिग्ध व्यक्ति है। क्यों, अफ़सर! यदि आपका हुक्म हो, तो तलाशी ली जाय?"—सूबेदार ने पूछा।

"नहीं !" अफ़सर ने जवाब दिया—"इसे जाने दो। मैं काफ़ी परेशान हो रहा हूँ।"

जेब्राइल एण्डर्सन वहाँ मूक खड़ा था। आग के सामने उसकी आँखें खूब चमक रही थीं। रात के समय सिपाहियों के बीच उसका इस प्रकार खड़ा होना एक विचित्र दृश्य था। उसका भारी लबादा, उसकी बेंत और उसकी ऐनक के शीशे, आग की रोशनी में स्पष्ट दीखते थे।

सिपाहियों ने एण्डर्सन को छोड़ दिया। वह भी दो घड़ी वहाँ खड़ा रह कर, फिर अँधेरे में कहीं चला गया।

× × ×

रात बढ़ चुकी थी। हवा खूब ठण्ढी चल रही थी। अँधेरे में झाड़ियों के सिरे भयानक आकृतियाँ बना रहे थे। एण्डर्सन फिर फ़ौजी पड़ाव की ओर गया; परन्तु इस बार अन्दर न जाकर बाहर ही अन्धकार में झाड़ियों की ओट में बैठा रहा। उसके पीछे कई आदमी काली वर्दियाँ पहिने आ-जा रहे थे। उसके दाईं ओर से एक लम्बा आदमी हाथ में भरा तमञ्चा लिये गुज़रा।

समीप ही ऊँचे स्थल पर अन्धकार में उस फ़ौजी की आकृति अत्यंत विचित्र प्रतीत होती थी। बुझते हुये अंगारों के प्रकाश में अध्यापक ने पहिचाना कि यह वही सिपाही है जिसने उसकी तलाशी के लिये सलाह दी थी।

अध्यापक के हृदय में कोई भाव न था। उसका मुख शान्त और निस्तब्ध था मानो अभी निद्रावस्था में हो। अग्नि के चारों ओर फ़ौजी सिपाही लम्बे पड़े थे। केवल सूबेदार घुटनों में सिर झुकाये परलोक की यात्रा कर रहा था।

एण्डर्सन की दाहिनी ओर वाले व्यक्ति ने पिस्तौल सीधी की, घोड़ा

दबाया, एक चमक के साथ दनदनाती गोली अपने लक्ष्य की ओर रवाना हुई।

एण्डर्सन ने उस फ़ौजी-प्रहरी को छाती पकड़ कर गिरते देखा। चारों ओर से छोटी-छोटी चमक उठी और दर्जनों गोलियों का इकट्ठा भयानक शब्द हुआ। सूबेदार उठा, परन्तु तत्क्षण सामने आग में गिर पड़ा। दूसरे सिपाही भी उठे, परन्तु धड़ाम से चित्त पड़ गये। युवक अफ़सर डर से पत्तों की भाँति फड़फड़ाता हुआ ऐण्डर्सन के समीप से गुजरा। एण्डर्सन ने न जाने क्या सोचते हुये अपना बेंत उठाया। पूरे जोर के साथ उसने अफ़सर के सिर पर वार किया। अफ़सर चोट न सह कर लड़खड़ा गया और बच्चों के समान दोनों हाथों से सिर पकड़ कर चीखने लगा। इतने में किसी ने अपनी बन्दूक तान कर अफ़सर की छाती पर रखी और क्षण भर में उसका शरीर भूमि पर लोटने लगा। कुछ क्षण टाँगें अकड़ी रहीं फिर खुद ब-खुद ढीली होकर फैल गई।

गोलाबारी बन्द हुई। काली पोशाकों वाले इधर-उधर घूम कर मरे हुये फ़ौजियों के अस्त्र सँभालने लगे।

एण्डर्सन यह सब कुछ स्वप्न की भाँति देख रहा था। जब सब समाप्त हो गया, वह अपने स्थान से हिला और फ़ौजी कैम्प में जाकर सूबेदार को टाँगों से पकड़ आग से बाहर निकालने लगा। दो-तीन मर्त्तबा खींचा, परन्तु शायद सिर अधजली लकड़ियों के बीच कहीं अड़ गया था। इसलिये फिर उसे वैसा ही छोड़ दिया।

× × ×

एण्डर्सन अपने स्कूल के अहाते में निश्चेष्ट खड़ा था। सोच रहा था कि किस प्रकार उसने उस रात पन्द्रह फ़ौजियों को धोखा दिया। कैसे उस अफ़सर के सिर पर उसने बेंत का वार किया। उसे अफ़सोस न था। आज भी यदि उसकी बेड़ियाँ निकाल ली जातीं, तो वह फिर उसी कार्य को अनेक बार दोहराता। उसने अपने हृदय के विचारों को टटोलना चाहा; परन्तु उनमें स्पष्टता न थी। रह-रह कर उसे उन तीन व्यक्तियों का बर्फ़ पर मृत्यु-शय्या में पड़े रहने का दृश्य स्मरण होता। ओह! कितना भयानक! कितना रोमाञ्चकारी! अपनी मृत्यु के बारे में उसने क्षण भर भी न सोचा। मानो उस विषय का सारा निर्णय वह अवधियों पहले कर चुका था। उसके अन्दर की कोई चीज़ बहुत

पहले ही मर चुकी थी—विदा हो चुकी थी, और अब उसके जाने का दुःख निरर्थक था।

जब उसे सिपाहियों ने धक्का देते हुये बाहर घसीटा और एक चट्टान के सहारे खड़ा किया, तब भी वह अपने विचारों को केन्द्रित न कर सका था। वह मूर्त्ति की तरह खड़ा था और उसका सिर एक ओर को झुका हुआ था।

"सावधान !" शब्द के साथ उसकी दिवा-निद्रा भंग हुई। सामने आँख जो उठाई, तो देखा कि कई सिपाही अपनी बन्दूकें क्रमशः उसके सिर, मुख, छाती और नीचे की ओर ताने हुये हैं। उसने स्पष्ट देखा कि किस तरह मस्तक के सामने तनी हुई बन्दूक का घोडा गिरा।

न जाने क्या विचित्र भाव उसके हृदय से गुजरा। उसे मृत्यु का भय न था। उसे जीवन से मोह न था। उसने स्वात्माभिमान से पूर्ण ऊँचाई तक अपना शरीर उठाया और फिर छाती आगे बढ़ा कर सिर थोड़ा पीछे की ओर झुका लिया। उसके हृदय में एक दिव्य शान्ति थी जिसकी आभा उसके प्रसन्न मुख-मण्डल पर देदीप्यमान हो रही थी। उसकी आँखों में शहादत का नशा था जिसकी उत्तेजना में वह अपने निर्धन और पराधीन देश की पूर्ण-स्वतन्त्रता का नज़ारा देख रहा था ! उसकी टकटकी ऊपर की ओर लगी थी मानो यज्ञ में पूर्णाहुति देकर वह शीघ्र ही अपने प्रभु के समीप पहुँचने के लिये विह्वल है !

गोलियाँ चलीं। वह अन्तिम चीत्कार के साथ ज़मीन पर गिर पड़ा। खून की बूँदें 'टप्-टप्' करके अनेक स्थलों से पड़ने लगीं। अभी उसमें चेतना थी। वह छटपटा रहा था।

अफ़सर, मानो अभी नृशंसता से पूर्णतया सन्तुष्ट न था, तेजी से आगे बढ़ा और उस गिरे हुये एण्डर्सन के गले में पिस्तौल खोल कर दो गोलियाँ चलाईं।

जीव इस पार्थिव देह को छोड़ कर चला गया। फौजी भी अपने घोड़ों पर सवार हुये—केवल एण्डर्सन की मृत देह वहाँ चट्टान के नीचे निश्चेष्ट पड़ी थी। कभी-कभी उसके बायें हाथ की छोटी अँगुली कुछ फड़क उठती थी। क्यों ? सो किसे मालूम !

रूस

# वानिया

लेखिका—मेडम इस्टेफियेवा

अपने गुलाब के से लाल-लाल सुन्दर मुख को तकिये के अन्दर छिपाये हुये मिलोचका चीख-चीख कर रोने लगी। उसके युवाकाल के जीवन में पहले-पहल भाग्य ने निर्दयता के साथ उसे अचानक एक गहरी निराशा में डाल दिया। वह उस दिन की बड़ी उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा कर रही थी, जब कि वह सुहावने सोलहवें वर्ष में प्रवेश करेगी; बाल्यकाल को समाप्त कर युवावस्था में पदार्पण करेगी और बर्फ़ के समान सफ़ेद मलमली की पोशाक़ पहिन कर पहले-पहल बाल-नाच में शामिल होगी।

वह इस सुनहरे अवसर का सुन्दर स्वप्न बहुत समय से देख रही थी; परन्तु एकाएक उस दिन उसकी माँ ने उससे कहा कि उसे पोशाक न मिलेगी। उसे नाच का विचार भी त्याग देना चाहिये, क्योंकि आर्थिक परिस्थिति इस ख़र्च को बर्दाश्त करने लायक न थी।

मिलोचका के कोमल हृदय पर इस घटना से ज़बर्दस्त आघात पहुँचा। अपने बाल्यकाल से ही वह कुटुम्ब भर से अधिक लाड़िली मानी जाती थी। किसी चीज़ के लिये नाहीं उसने जानी ही न थी! अभी थोड़े समय पूर्व तक वह विलास की समस्त सामग्रियों से घिरी हुई थी। उसके मन में इस विचार के उत्पन्न होने का कभी समय ही न आया कि उसके पिता की मृत्यु के पश्चात् उसके ऐश्वर्य-पूर्ण जीवन का भी इतने जल्द अंत हो जावेगा। अभी मुश्किल से दो वर्ष भी न

बीते होंगे कि जब अचानक उसके पिता का उन लोगों से सदा के लिये विछोह हुआ था। वे जो कुछ हज़ार रुपये छोड़ गये थे, सब खर्च हो गये। अब उन्हें मजबूरी हालत में एक बिलकुल नये और भिन्न प्रकार के जीवन को आरम्भ करना पड़ रहा है।

वह बड़े दिन के त्योहार में बोर्डिंग स्कूल से घर आई थी। बाल-नाच की आनन्दपूर्ण कल्पनायें उसके मन में भरी थीं। इस समय उसके वे सब सुनहरे स्वप्न चूर्ण हो गये। बड़ी भयंकर घटना थी यह !

घर में बड़े दिन के त्योहार मनाने की तैयारियाँ हो रही थीं; परन्तु मिलोचका अपने दुःख में इतनी अधिक लीन हो गई कि उस ओर उसका ध्यान आकर्षित ही न होता था। कभी-कभी वह अपने लुभावने अश्रुपूर्ण सुन्दर मुख को तकिये के बाहर निकाल कर अपने भाई वानिया को बुलाने लगती। वह उन्नीस वर्ष की आयु का सुन्दर नवयुवक है और हाई स्कूल के विद्यार्थी की वर्दी पहिने हुये था। उसे बुला कर निराशा के स्वर में वह दोहरा गई :—

"वानिया, तुम इस बात को भली-भाँति जानते हो कि यह मेरा सदा का सुहावना और सब से मधुर स्वप्न था।" और अपने वर्त्तमान दुःख को क्षण भर के लिये भुला कर वह कहने लगी—"मैं और वेनिया...तुम तो वेनिया को जानते होगे। वही रक्तकेशी चालाक लड़की।"

वानिया ने सिर हिला दिया।

"मैं और वेनिया सदा अपने प्रथम नृत्य की चर्चा किया करते थे। हम लोगों ने यह निश्चय कर लिया था कि उसकी पोशाक गुलाबी और मेरी सफ़ेद रहेगी। परन्तु आज माँ ने कहा है कि अगर मैं पोशाक पहिन भी लूँगी, तो वे मुझे नृत्य में कदापि न ले जावेंगी, क्योंकि उनके पास पहिनने के लिये कोई अच्छे कपड़े नहीं हैं। उनके सब सुन्दर गाऊन बिक चुके हैं। दुःख है कि मैं अपने उस आनन्ददायक

प्रथम नृत्य में न जा सकूँगी।" आँखों से आँसू बहाते हुये और ऐसा कहते हुये उसने फिर से अपना मुँह तकिये के अन्दर छिपा लिया और बड़े ज़ोर-ज़ोर से रोना फिर शुरू कर दिया।

वानिया गम्भीरता-पूर्वक अपनी बहिन की ओर कुछ समय तक निहारता रहा। तब वह मुड़ कर घबराया हुआ-सा जल्दी से बरामदे के अन्दर गया। अन्ना (अपनी सौतेली माँ) के कमरे के आगे जाकर वह दरवाज़े की ओर इस आशय से देखने लगा कि वह वहाँ से बिना किसी के देखे बाहर निकल जा सकेगा अथवा नहीं। और झटपट अपना कोट पहिनने लगा।

उसने अन्ना के कुपित स्वर को सुना। "मुझे दिक्क न करो। मैं तुमको कई मर्तबा कह चुकी कि इस साल हम बड़े दिन के लिये कोई भी वृक्ष* न लेंगे। अगर तुम शोरगुल बन्द न करोगी, तो मैं तुम्हें कमरे से बाहर निकाल दूँगी।"

परन्तु प्रत्यक्ष रूप में इस विकट धमकी का कुछ भी प्रभाव न पड़ा। एक क्षण के बाद ही उसने अपनी सौतेली माँ को अधिक तीव्र स्वर में चिल्लाते हुये सुना—

"इसी तरीक़े से तुम अपनी माँ की आज्ञा का पालन करती हो? अपने कमरे के अन्दर जाओ।" दरवाज़े में अन्ना एक पाँच वर्ष की लड़की को गुस्से के साथ आगे ढकेलती हुई दिखलाई पड़ी। लड़की इस प्रकार चिल्ला रही थी, मानो उसका हृदय फटा जा रहा हो।

"अब तुम कहाँ जा रहे हो?"—अन्ना ने नाराज़ी के स्वर में वानिया की तरफ़ मुड़ कर कहा। उन्होंने देखा कि वह कोट पहिन कर और टोप हाथ में लेकर हवाखोरी के लिये जा रहा है।

---

* नोट—ईसाइयों में बड़े दिन के त्योहार पर सनोवर की डाल काट कर एक वृक्ष बनाया जाता है, जिसमें मेवे व मिठाइयाँ लटका दी जाती हैं।

घबराई हुई आवाज़ में वानिया ने जवाब दिया—"मैं अभी आता हूँ।" वह उनकी दृष्टि को बचाना चाहता था; अपने टोप को इधर-उधर खींच रहा था।

अन्ना अपने सौतेले पुत्र की ओर कुपित दृष्टि से घूरते हुये कहने लगी—"मैं तुम्हारी लगातार गैरहाज़िरी को बिलकुल पसन्द नहीं करती हूँ। मेरी समझ में नहीं आता कि तुम हमेशा कहाँ चले जाते हो। पिछले दो महीने से सिर्फ़ खाना-खाने के वक़्त तुम घर पर दिखलाई देते हो। तुमको इस बात की आवश्कता प्रतीत नहीं होती कि यह मुझे बतला जाओ कि तुम कहाँ जा रहे हो। यद्यपि तुम इस बात को भली-भाँति जानते हो कि तुम्हारे व्यवहार की पूरी ज़िम्मेदारी मेरे सिर पर है। लोग यही कहेंगे कि तुम्हारे लिये मेरा बर्ताव माँ जैसा नहीं है।"

"परन्तु मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूँ कि माँ, मैं कोई बुरा काम नहीं कर रहा हूँ। मैं तो पढ़ने के लिये जा रहा हूँ।"

"आज तुम्हें घर पर रहना चाहिये। तुमको मालूम है कि त्योहार के समय घर पर काम बहुत रहता है। तुम्हारे रहने से मुझे मदद ही मिलेगी। हाँ, यह तो बतलाओ कि तुम दरवाज़े को बन्द करके अपने कमरे में क्यों रहते हो?"

वानिया बहुत घबड़ा गया और झेंप गया—"मेरी वहाँ पर...मुझे भय था कि कहीं सोनिया और मीशिया मेरी किताबें और काग़ज न फाड़ डालें—"

"तुम तो बड़े अक़्लमन्द जान पड़ते हो। कब से तुम्हें किताबों की इतनी हिफ़ाज़त करने की फ़िकर लगी है?"—व्यंगपूर्वक उन्होंने पूछा। इसके बाद ही एकाएक वे रोते हुये बच्चे को लेकर बग़ीचे की ओर चली गईं।

वानिया ने एक क्षण तक देखा कि उसकी माँ अभी लौट नहीं

रही हैं। उसने फौरन अपने सिर पर टोप पहिना और घर से बाहर निकल पड़ा।

रसोई घर में मिलोचका अभी भी रो रही थी। एक कमरे में मिलिया और सोनिया दाई से बढ़-बढ़ कर बतला रही थीं कि बहुत दिनों की बात है, जब बड़े दिन के त्योहार में उनके यहाँ एक सुहावना वृक्ष ख़रीदा गया था। और बड़े दुःख और शोक की बात है कि ईश्वर ने इस वर्ष उनके प्यारे ( पिता ) को उनसे छीन लिया है। माँ कहती थीं कि अब उनके यहाँ कभी भी बड़े दिन के उत्सव में वृक्ष न ख़रीदा जायेगा।

बूढ़ी दाई ने बच्चों को सान्त्वना देने का भरसक प्रयत्न किया। उसने उनके सिर के सुन्दर घुँघराले बालों पर अपना हाथ रख कर एक आश्चर्यजनक बालक का किस्सा बतलाया जो कि ढोरों की नाँद में हुआ था। और उस तारे का ज़िक्र किया जो आकाश में उदित हुआ था और जिसने गड़रियों और बुद्धिमानों को उस स्थान तक पहुँचा दिया जहाँ संसार को पाप से उबारने वाला पड़ा हुआ था।* उसने प्रसन्नता-पूर्वक बड़े मनोरंजक तरीक़े से इस आश्चर्यजनक बालक का वृत्तान्त बतलाना प्रारम्भ किया। बालक उसको घेर कर बैठ गये। वे अपना दुःख भूल गये और बूढ़ी दाई की कहानी बड़े आनन्द और चाव के साथ सुनने लगे।

इसी समय अन्ना अपने बिस्तर पर सिर झुकाये हुये उदास भाव से बैठी हुई थी। उसके मन में अनेक पुरानी स्मृतियाँ उमड़ रही थीं। उसे अपने पिता के यहाँ का स्वतंत्र और आनन्दपूर्ण बाल्यकाल स्मरण हो आया। कालेज के जीवन के प्रेमी मित्र और मधुर घटनायें एक के बाद एक उसके नेत्रों के सामने झूलने लगीं। उसे उस समय का

* यहाँ ईसा के जन्म के प्रकरण का हवाला है।

स्मरण आया जब उसने सोलहवीं वर्ष की आयु में पदार्पण किया था। अब वह लम्बा साया पहिन कर पूरी नवयुवती हो गई थी। उस समय उसे अपना भविष्य कितना उज्ज्वल और लुभावना प्रतीत होता था! उस अज्ञात मधुर भविष्य को प्राप्त करने के लिये उसका हृदय कितना आनन्दित और पुलकित हो आता था। केवल सत्रह वर्ष की आयु में उसका विवाह एक विधुर नवयुवक के साथ हुआ जिसकी प्रथम स्त्री से एक वर्ष का एक बालक था।

उसने अपने पति को सच्चे हृदय से प्यार किया। वह अपने विवाहित जीवन से परम प्रसन्न थी। अगर कभी-कभी आपस में वे लोग झगड़ते भी थे, तो उसका एकमात्र कारण वानिया रहता था। उसको इस बात पर विश्वास ही नहीं होता था कि किसी दूसरी स्त्री के साथ उसका कभी प्रेम रहा होगा। उसे इस बात पर और भी विश्वास न होता था कि उसका प्रेम अभी कुछ समय पूर्व का हो और यह स्त्री अपने प्रेम के स्मृति-स्वरूप एक छोटा-सा बालक छोड़ गई हो, जिसे उसका पिता बहुत प्यार करता था। यह चंचल और जिद्दी लड़का वानिया उसे सदा अविश्वास की दृष्टि से देखा करता था। उसे अपने पिता से बहुत अधिक प्रेम था। पिता भी उस पर सदा प्रेम-दृष्टि रखता था। उसके कारण पति का प्रेम उसके प्रति घटता जाता था। इसी लड़के के कारण उनके आनन्दमय जीवन में मानोमालिन्य उत्पन्न हुआ करता था। वह उससे घृणा करती थी। वह अपनी इस भावना को बड़ी कठिनाई से दबा सकती थी। इस समय बिस्तर पर बैठे हुये अपने बीते हुये जीवन की घटनाओं पर दृष्टिपात करते हुये उसे अपने सौतेले पुत्र के प्रति किये गये अनुचित और निर्दय व्यवहार पर ज़रा भी पश्चात्ताप नहीं हो रहा था। उसे केवल अपनी सन्तान का ध्यान था। वह ग़रीबी की विकराल मूर्त्ति के चित्र को देख कर, जो भयंकर मुँह फैलाये हुये उसकी ओर दौड़ी चली आ रही थी, काँप उठी।

उसने यह भी विचार किया कि ईश्वर ने भी उसके साथ अन्याय किया है।

उसको यह भी याद आया कि कुछ वर्ष पूर्व वह एक सुन्दर नव-युवती थी; सदा विलास के झूले में झूला करती थी। उसका पति भी उसे हृदय से प्यार करता था। बहुत से लोग उसकी प्रशंसा किया करते थे। ऐसे समय वह भी समता के भावों का आनन्द के साथ उपदेश दिया करती थी। उसे इस भावना पर पक्का विश्वास हो गया था। वह दृढ़ विश्वास से और निःसंकोच कहा करती थी कि वह अन्यायपूर्ण कलुषित-काल बहुत समय पहले लद गया जब कि पत्नी पति पर अवलम्बित रहा करती थी। अब पत्नी को भी कुटुम्ब में पति के समान ही अधिकार प्राप्त हैं। जहाँ तक उसकी धारणा है, पति की अपेक्षा पत्नी और माता का कहीं अधिक महत्वपूर्ण स्थान है।

अन्ना सूखे मुँह मुस्कराई।

धीरे-धीरे गुनगुनाते हुये वह कहने लगी—"मैंने अपनी आज़ादी तो क़ायम रखी है। मेरे समान अधिकार भी सुरक्षित हैं। परन्तु शेष सब कब्र में आराम कर रहे हैं!"

उसकी अवस्था इस समय केवल पैंतीस वर्ष की थी। वह अब भी सुन्दर युवती-सी प्रतीत होती थी। परन्तु पति की मृत्यु के पश्चात् वह अपने को वृद्धा समझने लगी थी। वह अपना सारा समय बालकों के लालन-पालन में व्यतीत करती थी। अपनी शक्ति के अनुसार वह सदा ऐसा प्रयत्न करती कि बालकों को किसी प्रकार का कष्ट या कमी न हो। वह अपने को बिलकुल भूल-सी गई थी।

केवल जिस मनुष्य को उसने हृदय से प्यार किया था, उसके लिये हार्दिक शोक और बालकों के भविष्य की चिन्ता एक क्षण के लिये भी उसके चित्त से अलग न होती थी। एकान्त और निस्सहाय होने की भावना अधिकाधिक मजबूत होती जाती थी। उसको अपने

वे दिन स्मरण आते थे, जब वह अपने पति के जीवन-काल में बड़े दिन का त्योहार बड़ी शान से मनाया करती थी; कितने क़ीमती और स्वादिष्ट भोजन तैयार किये जाते थे ; उसके घर पर कितने बेशक़ीमती कपड़े पहिने हुये ख़ुश-मिजाज़ मेहमान आया करते थे, और उसका चित्त दुःख से भर गया। लम्बी-साँस लेते हुये और आँसू की एक बूँद टपकाते हुये वह बिस्तर से उठ खड़ी हुई।

भोजन का समय हो चुका था। धीरे-धीरे रात्रि आ रही थी। अन्धकारपूर्ण आकाश में कहीं-कहीं तारागण धीमा प्रकाश करते हुये नज़र आ रहे थे।

टेबिल के समीप कुरसी पर बैठ कर अन्ना ने पूछा—"वानिया कहाँ है ? क्या फिर निकल गया ?" टेबिल के आस-पास मिनिया और सोनिया अपने सर्वोत्तम त्योहारी-वस्त्र पहिने हुये बैठी हुई थीं। मिलोचका भी बहुत उदास मन से मुँह लटकाये वहाँ बैठी थी। उसकी आँखें रो-रोकर लाल हो गई थीं।

बालकों को शोरवा परसते हुये उसने तेज़ी के साथ कहा—"वह हर वक़्त ही बाहर रहता है।"

माँ को कुपित देख कर बालकों ने चुपचाप खाना खा लिया। भोजनालय के छोटे कमरे की शान्ति केवल तश्तरी और चम्मच की आवाज़ से भंग होती थी। वह आवाज़ भी शान्त हो गई। प्रत्येक प्राणी विचारों में डूबा हुआ निश्चेष्ट बैठा था। केवल गुलाबी गालों वाली मिनिया चारों तरफ़ देख रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि वह कुछ ढूँढ़ रहा है। अन्त में वह अपनी पुरानी दाई की ओर मुड़ा जो उसकी छोटी कुरसी के पास खड़ी थी और उससे फुसफुसा कर पूछा—

"नियानिया, क्या सब छोटे-छोटे देव-दूत आ गये ?"

"हाँ, हाँ, मेरे लाल, ये सब आ गये हैं। जैसा कि मैंने तुम्हें सिखलाया है, भले बनने की कोशिश करो। यदि तुम मेरा कहना न

मानोगे तो वे सब उड़ कर भाग जायँगे और प्यारे प्रभु की वह बड़े दिन के त्योहार की कहानी भी अपने साथ लेते जायँगे।"

इन शब्दों को सुन कर अन्ना के धैर्य का बाँध टूट गया। उसने ग़ुस्से के साथ कहा—

"नियानिया, बच्चों को भोजन के समय परियों की कहानियाँ न सुनाया करो। किसी दूसरे समय ये कहानियाँ इनको सुनाई जा सकती हैं।"

"श्रीमती जी, पर मैं इन्हें परियों की कहानियाँ नहीं सुना रही हूँ। मैं तो उन्हें शिष्ट-व्यवहार करने की शिक्षा दे रही हूँ और उनको यह बतला रही हूँ कि यदि वे ऐसा नहीं करेंगे, तो उन्हें बड़े दिन का वृक्ष न मिलेगा।"

"वह उन्हें मिलेगा अथवा न मिलेगा, इस सवाल पर तो मुझे विचार करना चाहिये। यह तो बतलाओ कि देवदूतों से उससे क्या प्रयोजन है?"

वृद्धा स्त्री को बहुत बुरा लगा। वह कहने लगी—"क्यों नहीं? देवदूतों से इस बात से सम्बन्ध अवश्य है। इस बात को सभी जानते हैं कि बड़े दिन के त्योहार के समय भले आदमियों के पास देवदूत आया करते हैं और उन्हें इनाम बाँटा करते हैं।"

सोनिया बड़ी प्रसन्न हो कर चिल्ला उठी—"माँ, माँ, बनिया आ गया।" उसने अपने बड़े भाई को बरामदे में आते हुये देख लिया था।

"अच्छा, अच्छा, अगर वह आ गया है तो आने दो। तुम इतना शोर क्यों मचा रही हो?" अन्ना ने ग़ुस्से में कहा। अपने सौतेले पुत्र की ओर मुड़ कर वह तेज़ी के साथ पूछने लगी—

"तुम कहाँ गये थे?" उसके उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही वह आगे कहने लगी—"त्योहार के समय तो कम से कम तुम्हें ज़रा अच्छे

कपड़े पहिन लेना चाहिये थे। हमारे यहाँ कोई मेहमान नहीं हैं, यह बात तो सही है, लेकिन फिर भी अच्छे कपड़े पहिन लेने में तो कुछ हर्ज़ नहीं था। देखो तो ज़रा तुम कैसे दिखलाई पड़ते हो ?" ऐसा कहते हुये उसने उसके धब्बे पड़े हुये कोट की तरफ़ अंगुली उठाते हुये इशारा किया।

यह सुन कर बालक का चेहरा तमतमा कर लाल हो गया।

"मेरे पास इससे अच्छे कपड़े नहीं हैं। मेरे सब कपड़े फट गये हैं।" इस प्रकार जवाब देते हुये वह अपनी तश्तरी की तरफ़ देखने लगा।

"तुम्हारी पढ़ाई का क्या हाल है ? तुम पचीस रुबलों से कुछ अधिक प्रति मास कमाते हो।"

"लेकिन मैं जो कुछ भी कमाता हूँ, वह सब तो तुम्हें दे देता हूँ।" वानिया ने बहुत धीमे स्वर में ऐसा कहा। वह अपनी सौतेली माँ की ओर घृणित दृष्टि से देखने लगा।

इस उत्तर को सुन कर अन्ना को बहुत बुरा लगा। उत्तर में एक भी शब्द बिना कहे, उसने अपना सारा ध्यान बालकों की ओर लगाया।

शांति भंग करते हुये सोनिया ने कहा—

"मैंने वानिया के कमरे में एक बहुत सुन्दर तस्वीर देखी। वह फ़र्श पर पड़ी हुई थी और वानिया ने उस पर रंगीन पेन्सिलों से कुछ खींचा था। बड़ी भारी तस्वीर थी माँ, इतनी बड़ी !"—बालिका ने अपने छोटे-छोटे हाथ फैला कर बतलाया। वह अपने गुलाबी ओठों को हिलाती हुई आगे कहने लगी—

"वानिया मुझे देख कर सदा अपना दरवाज़ा बन्द कर देता है। मुझे अपने कमरे में कभी नहीं आने देता। फिर भी मैंने सब कुछ देख लिया है।"

"वानिया, मैं यह क्या सुन रही हूँ। तुम खूब चित्रकारी का खेल खेल रहे हो। इसके लिये मैं तुम्हें मुबारकबादी देती हूँ। छठवीं कक्षा के विद्यार्थी के लिये जिसका इम्तहान नज़दीक आ गया हो, कितना सुन्दर काम है।"—अन्ना ने इस प्रकार ताने के साथ कहा।

वानिया ने कोई जवाब नहीं दिया। उसने अपना सिर तश्तरी पर और अधिक झुका लिया।

अपनी सौतेली माँ के निर्दय व्यवहार का वह आदी बन चुका था, पर तानों से भरे शब्दों से उसको बड़ी वेदना हो रही थी। वह बड़े आनन्द के साथ घर आया था। उसका सारा आनन्द नष्ट हो गया। उसके हृदय में महान् क्लेश उत्पन्न हो गया। उसकी आँखों के सामने अपने बाल्यकाल और प्रारम्भिक तरुण काल के अनेक दुःखद चित्र आ गये। वानिया, जिसे माता के प्रेम प्राप्त करने का सुअवसर नहीं मिला था, अपने पिता के घर में एक अजनबी के समान रहता था। उसका पिता उसे दिल से चाहता था। परन्तु इञ्जीनियरी के पेशे के कारण उसे अपने कुटुम्ब की ओर ध्यान देने का समय नहीं मिलता था। वह मुस्तैद और चुस्त था और किसी न किसी ज़िम्मेदारी के काम में सदा लगा रहता था। अधिक प्यार करके बालकों को बिगाड़ने के पक्ष में वह नहीं था। अपनी अन्य सन्तान के समान वह वानिया के प्रति भी प्रेम का व्यवहार करता था। जिस समय वानिया का पिता उसकी सौतेली माँ के किसी अनुचित व्यवहार को देख कर, उसे सान्त्वना देता था, उस समय उसके हृदय में कितनी प्रसन्नता होती थी। परन्तु ऐसा सदा न होता था। पर वह सब समय निकल गया। दुर्व्यवहार में बाल्यकाल बिता कर वानिया ने अब युवावस्था में पदार्पण किया। वह कुटुम्ब में अपने स्थान को भली भाँति समझता है। यद्यपि वह अपनी सौतेली माँ को कभी भी अप्रसन्न न करना चाहता था, तथापि उनके व्यवहार में विशेष अन्तर नहीं पड़ा। शान्ति, नम्रता और आदर

के साथ वह सदा अपनी माँ के दुर्व्यवहार को सह लेता था। उसकी इस सहनशीलता पर भी माँ को क्रोध आ जाता था।

परन्तु अचानक उसके पिता की मृत्यु हो गई। फलस्वरूप वानिया और समस्त कुटुम्ब के जीवन में ज़बर्दस्त परिवर्त्तन आ गया। आमोद-प्रमोद-पूर्ण वातावरण, परिचित सज्जनों का विस्तृत क्षेत्र तथा आनन्द-पूर्ण स्वतन्त्र जीवन सब के सब ऐसे लोप हो गये मानो जादू हो गया हो। यद्यपि उसके पिता ने अपने व्यवसाय द्वारा अपार सम्पत्ति अर्जन की, तथापि मरने के समय कुटुम्ब के पालन-पोषण के लिये वे एक छोटी पेंशन के सिवाय कुछ भी न छोड़ गये। उस अल्प पेन्शन से गुज़र भी नहीं हो सकती थी।

बहुमूल्य सामग्रियों से सुसज्जित विशाल निवास-गृह को छोड़ कर कुटुम्ब को मजबूरी हालत में, केवल पाँच कमरे वाले एक मकान में रहने के लिये जाना पड़ा। यहाँ उन्हें चिन्तापूर्ण एकान्त जीवन का अनुभव करना पड़ा। इस समय वानिया पूरे अठारह वर्ष की आयु का था।

कुटुम्ब की यह दुर्दशा देख कर उसने कुछ काम तलाश किया जिसके द्वारा वह स्कूल की फ़ीस और मकान का किराया चुका सकता था।

पहले अन्ना उससे रुपया न लेना चाहती थी; परन्तु कुछ समय के पश्चात् अनिच्छापूर्वक उसने अपने सौतेले पुत्र की यह सहायता स्वीकार कर ली।

वानिया अपने छोटे भाई और बहिनों को बहुत प्यार करता था। वह पढ़ने में भी बहुत होशियार था। वह उस समय भी उत्सुकता-पूर्वक प्रतीक्षा कर रहा था, जब कि वह टेकनिकल स्कूल में प्रवेश पा सकेगा। वह अपने पिता के पद-चिह्नों पर चल कर उन्हीं के व्यवसाय को ग्रहण करना चाहता था। उसके जीवन का उद्देश्य था कि पिता की

असामयिक मृत्यु के कारण कुटुम्ब का जो अधःपतन हो गया है उसका उद्धार करना; सौतेली माँ पर नैतिक विजय प्राप्त करना और उस कलुषित व्यवहार की समाप्ति करना जिसे वह इतने वर्षों से सहता हुआ चला आ रहा है।

उसे इस समय अपनी माँ की ज़बान से अनुचित शब्दों का सुनना बहुत दुःखद प्रतीत हुआ। परन्तु वह यह नहीं बतलाना चाहता था कि उसके इन शब्दों से उसके दिल पर कितना ज़बर्दस्त धक्का लगा है। टेबिल से उठते समय सदा के समान उसने अपनी माँ के हाथ का चुम्बन लिया और इसके बाद वह अपने कमरे को चला गया।

अन्ना ने वानिया की लौटती आकृति पर एक दृष्टि डाली, अपने कंधों को हिलाया और चुपचाप टेबिल पर से उठ गई।

मिलोचका ने लम्बी साँस ली और अपने सोफ़ा पर चली गई। वृद्धा दासी बालकों से धीरे-धीरे कुछ बोली और उन्हें उनके कमरों तक पहुँचा आई।

अन्ना के हृदय-रूपी आकाश पर उदासी के बादल छा गये। वह कमरे में बहुत देर तक घूमती रही। उसको इस बात का ज़रा भी ध्यान नहीं था कि नौकर ने टेबिल से सब चीज़ें हटा लीं अथवा मिलोचका वहाँ निश्चेष्ट भाव से सोफ़ा पर बैठी हुई है।

उसके विचार एक बार फिर पिछले दिनों की ओर दौड़ गये। अपनी इच्छा के विरुद्ध वह अपने पति के साथ के स्वतंत्र और आनंद-मय जीवन का दृश्य देखने लगी।

इतना अधिक काम करने पर भी उसका कितना सुन्दर और आनन्ददायक स्वभाव था। उनके समीप जो कोई भी जाता, वह जीवन के आनन्द में विभोर हो जाता।

"पिता और पुत्र के स्वभाव में कितनी विभिन्नता है।"—अन्ना ने वानिया के शान्त और एकान्त-प्रिय स्वभाव पर दृष्टिपात करते हुये

विचारा—"वह अपनी माँ के समान होगा।" जिस डाह की अग्नि ने उसे इतने वर्ष तक जलाया था, वही अग्नि फिर से उसके हृदय में प्रज्ज्वलित हो पड़ी। वह तेज़ी के साथ अपने कमरे की ओर लौटी। इसी समय अचानक उसे वानिया की आवाज़ सुनाई दी—

"माँ और मिलोचका मेरे कमरे में आओगे? मैंने बालकों के लिये एक आश्चर्यजनक चीज़ तैयार की है। सोनिया और मीनिया को बुलाओ। उनसे कहो कि जल्द आवें।"—वह घबड़ाहट में अचानक बोल उठा—"मैंने उनके लिये बड़े दिन का वृक्ष तैयार किया है और बत्तियाँ भी जला दी हैं।"

"तुम? बच्चों के लिये, बड़े दिन का वृक्ष तैयार करोगे?" अन्ना ने उसकी ओर आश्चर्य के साथ देखते हुये पूछा। उसे अपने कानों पर विश्वास न होता था।

उसने माँ की तरफ़ देखा और मुस्कराते हुये धीरे-धीरे कहने लगा—

"हाँ, मैंने उसे तुमसे छिपा रखा है। यह सब मैंने बच्चों को आश्चर्य में डालने की ग़रज़ से किया है।"

अन्ना को इस बात पर विश्वास ही नहीं हुआ कि वह उदासीन और अनुभव-शून्य नवयुवक उनको आश्चर्य में डालने का इस प्रकार कभी विचार भी कर सकता है।

वानिया कमरे की ओर चिल्लाता हुआ दौड़ा—"सोनिया, मीनिया, यहाँ आओ। प्रभु ईसामसीह ने तुम्हारे लिये उपहार में बड़े दिन का वृक्ष भेजा है। मेरे कमरे में जल्द चलो।" ऐसा कहता हुआ वह अपनी सौतेली माँ और बहिन के कमरा की ओर दौड़ा। वे लोग इस समय उसके कमरे के दरवाज़े पर खड़ी हुई थीं।

वानिया ने अपना छोटा कमरा बहुत साफ़-सुथरा कर लिया था। कुरसियाँ और टेबिल दीवार से सटा कर रखे हुये थे। कमरे के

बीचोंबीच प्रकाश में चमकता हुआ एक सुहावना छोटा वृक्ष खड़ा हुआ था।

बालक वृक्ष की ओर बड़ी प्रसन्नता से निहारने लगे। ताली बजाते हुये वे बराबर कहने लगे—

"दयालु प्रभु ईसामसीह ने हमारे लिये बड़े दिन का वृक्ष भेजा है। धन्य है, उस परम पिता परमेश्वर को!"

मिलोचका अपना व्यक्तिगत दुःख बिलकुल भूल गई। वह अपने भाई की ओर बड़ी प्रसन्नता से दौड़ी और बड़े आश्चर्य के साथ पूछने लगी—

"वानी उशा, तुम बड़े चतुर परन्तु खराब लड़के हो। बतलाओ तो सही कि तुमने सब चीजें खरीद कर ठीक वक्त पर इसे कैसे तैयार कर लिया?"

उसने कुछ घबराई हुई आवाज़ में कहा—

"मैंने माँ के लिये और तुम्हारे लिये भी कुछ तैयार करके रखा है।"

अपनी छोटी बहिन के हाथों में सुन्दर-सुन्दर वस्त्रों से अलंकृत एक बड़ी पुतली, जिसके सुनहरे घुँघराले बाल बड़े भले मालूम होते थे, देते हुये उसने कहा—

"प्यारी सोनिया, दुलारी सोनिया, यह तुम्हारे लिये है।" सोनिया पुतली को देख कर आनन्द से फूल उठी।

मिनिया को एक चकोंवाला बड़ा घोड़ा देते हुये उसने कहा—

"यह तुम्हारे लिये है, प्यारे मीनिया!"

मीनिया फ़ौरन अपने घोड़े पर सवार हो गया। अपनी बहिन की ओर विजयी सवार की भाँति देखता हुआ वह घोड़े को चाबुक जमाने लगा।

"सोनिया, होशियार रहना। घोड़े के पास न आना, नहीं तो वह

तुम्हें कुचल डालेगा।" इस प्रकार वानिया ने गंभीरता से कहा। इस प्रकार कहते हुये वह दीवार से भिड़ कर खड़ा हो गया। अपने इस आचरण से वह सब को विश्वास दिलाना चाहता था कि वह घोड़े से बहुत भयभीत हो गया है।

अन्ना मुस्कराती हुई इस अजीब बालक की ओर प्रेम-भरी दृष्टि से निहारने लगी। उसने वानिया के चेहरे की ओर टकटकी लगा कर देखा। वह आनन्द की उमंग में लाल हो रहा था। उसकी आँखों में आनन्द की एक निराली छटा चमक रही थी, जो ठीक उसके मृत पिता के समान दिखलाई देती थी।

"मैंने इस बात को आज तक क्यों नहीं देखा?" इस प्रकार हृदय में विचारते हुये वह अपनी निन्दा करने लगी। परिवर्त्तित बालक के मुख की ओर वह बार-बार प्रेम-भरी दृष्टि से देखने लगी।

उसकी आज की मुख-कान्ति में, जो आनन्द से ओत-प्रोत है, और सदा के उदास चेहरे में जमीन आसमान का अन्तर है।

बसन्त ऋतु के उज्ज्वल सूर्य की एक किरण से जिस प्रकार बर्फ़ पिघल जाता है, उसी प्रकार अन्ना निकोलो वन्ना का हृदय, जिस पर पुत्र के प्रति घृणा के भाव का बर्फ़ जम गया था, इस समय आनन्द-रूपी सूर्य की स्मृति-किरण पड़ने से पिघल गया। उसकी अन्तरात्मा अपने सौतेले पुत्र के प्रति—जिसको आज तक उसने कभी प्यार नहीं किया था—सच्चा प्यार करने के लिये मचल उठी।

वानिया ने डरते-डरते माँ के हाथों में एक मखमल का छोटा, परन्तु सुन्दर डब्बा देते हुये कहा—

"माँ, तुम्हारे लिये मैं यही तैयार कर सका हूँ।"

उसने डब्बे को कौतूहल-वश खोला। डब्बा खोलते ही उसका हृदय आनन्द से स्पन्दन करने लगा।

डब्बे में गहरे लाल मखमल के ऊपर एक सुहावना बड़ा सोने

का क्लिप रखा हुआ था। उस पर बड़ी सफ़ाई और खूबसूरती के साथ उसके पति के छोटे दस्तखत खुदे हुये थे।

अन्ना ने अठारह वर्ष में पहले-पहल आज सिर झुकाये हुये अपने नवयुवक पुत्र का प्रेम के साथ चुम्बन ले लिया।

उसने अपनी माँ के इस प्रेमपूर्ण व्यवहार का उत्तर उसके हाथों का आदरपूर्वक चुम्बन लेकर किया। उसके पश्चात् वानिया टेबिल की ओर लपका और वहाँ उसने एक बण्डल खोला।

"वाह!" मिलोचका ऐसा कहती हुई टेबिल की ओर दौड़ी। वानिया ने उसके सामने एक सुन्दर रेशम का वस्त्र रख दिया।

मिलोचका अपनी आँखों पर विश्वास न कर सकी। इस उपहार की वह कभी भी आशा न कर सकती थी।

वानिया दूसरे बण्डल को खोल कर बर्फ के समान सफेद, सुन्दर रेशम को निकालते हुये कहने लगा—

"माँ की पोशाक के लिये यह सामग्री उपयुक्त होगी।"

"अब तुम माँ के साथ नूतन वर्ष के उपलक्ष्य में अपने प्रथम नृत्य के लिये जा सकती हो।" ऐसा कहता हुआ वह मुस्कराया। अपनी बहिन के चेहरे पर आनन्द की रेखा झलकती देख कर वह कहने लगा—

"आशा है कि अब तुम न रोओगी। बतलाओ क्या अभी भी तुम रोओगी?"

"प्यारे वानिया! दुलारे वानिया!" इस प्रकार उत्तेजित होकर मिलोचका जोर से चीख उठी। उसने अपने भाई के गले में अपने दोनों हाथ डाल दिये और कहा—

"तुम बड़े अच्छे और उदार स्वभाव के बालक हो। मैं तुमको बहुत प्यार करती हूँ। इतना प्यार करती हूँ कि उसका वर्णन नहीं कर सकती।"

उपहार फर्श पर गिर पड़ा; परन्तु युवती ने उस ओर ज़रा भी ध्यान नहीं दिया। वह अपने भाई को ज़ोर-ज़ोर से कोमल हाथों से दबाने लगी और बार-बार कहने लगी—

"वानिया, मैं तुम्हें प्यार करती हूँ; मैं तुम्हें प्यार करती हूँ।"

"परन्तु तुम को इस बात का ख्याल रखना चाहिये कि मुझे भी उसे धन्यवाद देना है। तुम खुदगरज़ मालूम होती हो।" इस प्रकार उसने अपनी पुत्री से मज़ाक में कहा।

"मैं भी वानिया का चुम्बन लेना चाहती हूँ। साथ ही साथ बड़े दिन को आनन्दपूर्ण बनाने के उपलक्ष में उसे बधाई देना चाहती हूँ।" मिलोचका को धक्का देकर हटाती हुई उसने नवयुवक को अपनी ओर खींचा और उसकी ओर देखते हुये वह धीरे-धीरे कहने लगी—

"वानिया, आज तुमने हम सब लोगों को बहुत आनन्दित किया है। ऐ मेरे प्यारे पुत्र, मैं तुमको तहेदिल से धन्यवाद देती हूँ।"

उसने अपने जीवन में उसे आज प्रथम बार "प्यारे पुत्र" कहा। जिस प्रेम का व्यवहार उसने आज किया था, वैसा उसके द्वारा पहले कभी नहीं किया गया था। अन्ना की प्रेमपूर्ण दृष्टि का प्रसाद पाकर वह अपने नीरस एकान्त जीवन को भूल गया। उसके साथ आज तक जो दुर्व्यवहार किये गये थे, उनको भी वह सदा के लिये विस्मृति के गर्त्त में छोड़ गया। उसका हृदय प्रेम और सहानुभूति के लिये सदा आकुल रहा करता था, उसे पाकर पिछला सब भुला कर वह माँ की ओर प्रसन्न चित्त से निहारने लगा।

वे दोनों बड़ी देर तक आलिंगन-जाल में जकड़े हुये खड़े रहे। ऐसा प्रतीत होने लगा कि मानो यह रमणी, जिसका समस्त जीवन पति की असामयिक मृत्यु के कारण निर्दयतापूर्वक नष्ट-भ्रष्ट किया जा चुका है, इस मज़बूत और साहसी युवक से सहायता की याचना कर रही हो।

मिनिया और सोनिया बड़े दिन के वृक्ष के आसपास नाच रहे थे। वे बहुत-सी मिठाइयों की ओर आशापूर्ण नेत्रों से देख रहे थे। मिलोचका अपने उपहार को मुस्कराती हुई बड़े गौर से देख रही थी। साथ ही साथ वह धीरे-धीरे एक मधुर गाना भी गा रही थी। वृद्धा दासी दरवाज़े के पास खड़ी थी। बालकों को आनन्द में विभोर देख कर वह उनसे धीरे से कहने लगी—

"परमात्मा को धन्यवाद है, जगन्नियन्ता का आशीर्वाद है कि आज हम लोग आनन्द-पूर्ण बड़े दिन का उत्सव मना रहे हैं। इसी प्रकार होना भी चाहिये था।"

थोड़ी देर के बाद अन्ना ने वानिया को अपने पास ज़बर्दस्ती बैठा कर पूछा—

"परन्तु मुझे सच-सच बतलाओ। कोई बात छिपाना मत। तुम्हारे दिमाग़ में बच्चों के लिये बड़े दिन का वृक्ष लाने की क्यों कर सूझी? तुमने यह सब ख़रीदने के लिये रुपया कहाँ से पाया?"

वानिया ने लम्बी साँस लेकर कहा—

"मैंने इसके लिये बहुत पहले विचार किया था। वास्तव में इसके लिये मैं बराबर साल भर तक विचार करता रहा। गुज़र बड़ी कठिनाई से हो रही है, यह बात मुझे मालूम ही थी। हर एक महीने में ख़र्च चलाना मुश्किल हो जाता है, यह सब प्रत्यक्ष ही था। मेरी ज़रा-सी आमदनी किसी काम की न थी, यह जान कर मैं किसी दूसरे धन्धे की तलाश में लगा रहा। मेरे पिता के एक मित्र ने जो सरकारी मुलाज़िम हैं, मुझे कुछ नक़्शे बनाने को दिये।"

"हाँ, ठीक है, समझ गई। सोनिया उन्हीं को तसवीरें बता रही थी।" अन्ना बीच में बोल उठी।

वानिया ने उत्तर दिया—"हाँ, वे वही थे। मैं उनके पीछे पिछले तीन महीने रात-रात भर जागा हूँ। मेरी हार्दिक इच्छा यह थी कि मैं

वृक्ष खरीदने के लायक़ यथेष्ट धन कमा लूँ, जिससे कि बच्चे निराश न हों। मेरा यह भी ख्याल था कि इस अवसर पर आप भी बच्चों को पुलकित और आनन्दित देखना चाहेंगी। बाद में मैं अपनी सब बाहरी आमदनी आपको देकर जीवन अधिक सुखी बना सकूँगा।" पूरी बात कहने में विलम्ब होगा, इसलिये बात को शीघ्र समाप्त करने के उद्देश्य से बालक ने कहा—"आज, जिस समय मैंने मिलोचका की आँख को आँसुओं से भरी हुई देखा, मुझसे बरदाश्त नहीं हुआ। मैं अपने पिता के उसी मित्र के यहाँ गया और उनसे रुपये उधार लाकर वस्त्र मोल ले आया।" आनन्द से उत्तेजित होकर बालक का चेहरा लाल हो गया। वह कहने लगा—"मैं बाद में काम करके उनका सब रुपया अदा कर दूँगा।"

अन्ना सिसक कर बोल उठी—"परन्तु वानिया यह काम तो तुम्हारी शक्ति के बाहर का है। यह बहुत है। मैं तुम्हें यह सब करने की कभी आज्ञा न दूँगी, मैं..."

वह बीच ही में बोल उठा—"माँ, वह कुछ नहीं है, वास्तव में कुछ भी नहीं है। आप मेरे लिये ज़रा भी फिकर न करें। मैं बहुत मज़बूत हूँ और बहुत काम कर सकता हूँ। मैं दादा के समान हूँ। मैं यही चाहता हूँ कि आप और बच्चे उस समय तक किसी भी प्रकार तकलीफ़ के साथ समय काट लें, जब तक कि मैं बी० ए० पास नहीं कर लेता। इसके बाद तो हम फिर उसी प्रकार आनन्द से जीवन-यापन कर सकेंगे जैसा कि दादा के जीवन-काल में रहते थे।" प्रेम के साथ ऐसा कहते हुये वह सिर के बाल खुजाने लगा।

"क्यों मिलोचका, ठीक कह रहा हूँ न?"

उत्तर की प्रतीक्षा किये बिना ही वह कुरसी से कूद पड़ा और लपक कर अपनी छोटी बहिन के पास पहुँच गया।

थोड़ी देर के बाद, सोनिया खिलखिला कर हँसती हुई वानिया के कंधों

पर सवार हो गई। वानिया उसे कंधों पर चढ़ाये हुये वृक्ष के चारों ओर दौड़ने लगा। वह इस समय घोड़ा बना हुआ था। घोड़े के समान हिनहिनाता हुआ वह मिनिया को पकड़ने के लिये बड़ी तेजी से भाग रहा था।

अन्ना निकोलीवन्ना अपने सौतेले पुत्र के मुख की ओर बार-बार निरखते हुये यही विचार रही थी—"इसके पिता के मुख में और इसके मुख में कितनी समानता है! पिता के मुख का सुन्दर प्रतिबिम्ब ही क्यों साक्षात चित्र ही दिखलाई पड़ता है।" कमरे में आनन्द का शोर गुल मचा हुआ था। वानिया के वे शब्द बार-बार उसके कानों में सुनाई पड़ने लगे—

"मैं बहुत काम कर सकता हूँ। मैं दादा के समान हूँ।"

उसके हृदय में मधुर आनन्द ने निवास पा लिया। उसको न तो वह पिछला क्रोध ही रह गया और न जीवन के असन्तोष की छाया ही उसके पास रह गई। जिस प्रकार सूर्य के प्रकाश को पाकर कोहरा नष्ट हो जाता है, उसी प्रकार वानिया के इस आश्वासन ने, उसके भविष्य के समस्त दुखद विचारों को नष्ट कर दिया।

उसकी आँखों के सामने वानिया का शक्तिपूर्ण स्वरूप दिखलाई पड़ने लगा। वह दिलेरी के साथ अपने पिता के पद-चिह्नों का अनुकरण करने जा रहा है। उसको भास हुआ मानो एक बलवान् हाथ उसकी ओर फैला हुआ है। उसे एक बार फिर ये शब्द सुनाई पड़े—
"मैं मजबूत हूँ। मैं दादा के समान हूँ।"

* समाप्त *

## 'माया सीरीज़' की

### निम्न-लिखित पुस्तकें छप चुकी हैं:—

१—संसार की श्रेष्ठ कहानियाँ ( प्रथम भाग )
२—पूर्त्ति—कहानी-संग्रह
३—बंगला की श्रेष्ठ कहानियाँ
४—प्यार—कहानी-संग्रह
५—अद्भुत कहानियाँ
६—अतृप्त—उपन्यास
७—मुनीम श्यामलाल—कहानी-संग्रह
८—संसार की श्रेष्ठ कहानियाँ ( दूसरा भाग )
९—उर्दू की श्रेष्ठ कहानियाँ
१०—संसार की श्रेष्ठ कहानियाँ ( तीसरा भाग )
११—कान्ता—उपन्यास
१२—फुलवारी—कहानी-संग्रह
१३—त्रिकोण—कहानी-संग्रह
१४—संसार की श्रेष्ठ कहानियाँ ( चौथा भाग )
१५—रहस्यमयी—उपन्यास
१६—स्मृतियों के चित्र—कहानी-संग्रह
१७—शान्ति—कहानी-संग्रह
१८—खेल—उपन्यास
१९—प्रेम-कहानी
२०—फ्रान्स की श्रेष्ठ कहानियाँ
२१—टालस्टाय की श्रेष्ठ कहानियाँ
२२—मोपासाँ की श्रेष्ठ कहानियाँ
२३—उपवन—कहानी-संग्रह
२४—संसार की श्रेष्ठ कहानियाँ ( पाँचवाँ भाग )
२५—इन्सपेक्टर बोस—उपन्यास
२६—रूस की श्रेष्ठ कहानियाँ